"અહો ! શ્રુતજ્ઞાનમ્" ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર ૧૯૮

શીઘ્રબોધ ભાગ ૨૧ થી ૨૫

: દ્રવ્ય સહાયક :

કચ્છવાગડ સમુદાયના અધ્યાત્મયોગી
પૂ.આ.શ્રી કલાપૂર્ણસૂરીજી મ.સા.ના શિષ્ય પૂ.આ.શ્રી કલાપ્રભસૂરીશ્વરજી
મ.સા.ના આજ્ઞાનુવર્તિની પૂ.સા.શ્રી વિદ્યુત્પ્રભાશ્રીજી મ.ના શિષ્યા
પૂ.સા.શ્રી વિક્રમેન્દ્રશ્રીજી મ. ની પ્રેરણાથી વિદ્યુતવિક્રમ આરાધના ભવન,
તથા પૂ. સા. શ્રી ઈન્દ્રયશાશ્રીજી મ. ની પ્રેરણાથી
ઈન્દ્રયશા આરાધના ભવન-મણિભદ્ર એપાર્ટમેન્ટ
શ્રાવિકાઓની જ્ઞાનખાતાની ઉપજમાંથી

: સંયોજક :

શાહ બાબુલાલ સરેમલ બેડાવાળા
શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર
શા. વિમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન
હીરાજૈન સોસાયટી, સાબરમતી, અમદાવાદ-૫
(મો.) 9426585904 (ઓ.) 22132543

સંવત ૨૦૭૧ ઈ. ૨૦૧૫

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com
शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६५ (ई. 2009) सेट नं.-१

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.ahoshrut.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

ક્રમાંક	પુસ્તકનું નામ	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
001	श्री नंदीसूत्र अवचूरी	पू. विक्रमसूरिजी म.सा.	238
002	श्री उत्तराध्ययन सूत्र चूर्णी	पू. जिनदासगणि चूर्णीकार	286
003	श्री अर्हद्गीता-भगवद्गीता	पू. मेघविजयजी गणि म.सा.	84
004	श्री अर्हच्चूडामणि सारसटीकः	पू. भद्रबाहुस्वामी म.सा.	18
005	श्री यूक्ति प्रकाशसूत्रं	पू. पद्मसागरजी गणि म.सा.	48
006	श्री मानतुङ्गशास्त्रम्	पू. मानतुंगविजयजी म.सा.	54
007	अपराजितपृच्छा	श्री बी. भट्टाचार्य	810
008	शिल्प स्मृति वास्तु विद्यायाम्	श्री नंदलाल चुनिलाल सोमपुरा	850
009	शिल्परत्नम् भाग-१	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	322
010	शिल्परत्नम् भाग-२	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	280
011	प्रासादतिलक	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	162
012	काश्यशिल्पम्	श्री विनायक गणेश आपटे	302
013	प्रासादमञ्जरी	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	156
014	राजवल्लभ याने शिल्पशास्त्र	श्री नारायण भारती गोंसाई	352
015	शिल्पदीपक	श्री गंगाधरजी प्रणीत	120
016	वास्तुसार	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	88
017	दीपार्णव उत्तरार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	110
018	જિનપ્રાસાદ માર્તણ્ડ	શ્રી નંદલાલ ચુનીલાલ સોમપુરા	498
019	जैन ग्रंथावली	श्री जैन श्वेताम्बर कोन्फ्रन्स	502
020	હીરકલશ જૈન જ્યોતિષ	શ્રી હિમ્મતરામ મહાશંકર જાની	454
021	न्यायप्रवेशः भाग-१	श्री आनंदशंकर बी. ध्रुव	226
022	दीपार्णव पूर्वार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	640
023	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-१	पू. मुनिचंद्रसूरिजी म.सा.	452
024	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-२	श्री एच. आर. कापडीआ	500
025	प्राकृत व्याकरण भाषांतर सह	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	454
026	तत्त्पोपप्लवसिंहः	श्री जयराशी भट्ट, बी. भट्टाचार्य	188
027	शक्तिवादादर्शः	श्री सुदर्शनाचार्य शास्त्री	214
028	क्षीरार्णव	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	414
029	वेधवास्तु प्रभाकर	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	192

030	**शिल्परत्नाकर**	**श्री नर्मदाशंकर शास्त्री**	**824**
031	**प्रासाद मंडन**	**पं. भगवानदास जैन**	**288**
032	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-१**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**520**
033	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-२**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**578**
034	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-३ (१)**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**278**
035	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-3 (२) (३)**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**252**
036	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-५**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**324**
037	વાસ્તુનિઘંટુ	પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા	302
038	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૧	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	196
039	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૨	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	190
040	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૩	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	202
041	સપ્તસન્ધાન મહાકાવ્યમ્	પૂ. વિજયઅમૃતસૂરિશ્વરજી	480
042	સપ્તભઙ્ગીમિમાંસા	પૂ. પં. શિવાનન્દવિજયજી	228
043	ન્યાયાવતાર	સતિષચંદ્ર વિદ્યાભૂષણ	60
044	વ્યુત્પત્તિવાદ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	218
045	સામાન્યનિર્યુક્તિ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	190
046	સપ્તભઙ્ગીનયપ્રદીપ બાલબોધિનીવિવૃત્તિ:	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	138
047	વ્યુત્પત્તિવાદ શાસ્ત્રાર્થકલા ટીકા	શ્રીવેણીમાધવ શાસ્ત્રી	296
048	નયોપદેશ ભાગ-૧ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	210
049	નયોપદેશ ભાગ-૨ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	274
050	ન્યાયસમુચ્ચય	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	286
051	સ્યાદ્યાર્થપ્રકાશ:	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	216
052	દિન શુદ્ધિ પ્રકરણ	પૂ. દર્શનવિજયજી	532
053	બૃહદ્ ધારણા યંત્ર	પૂ. દર્શનવિજયજી	113
054	જ્યોતિર્મહોદય	સં. પૂ. અક્ષયવિજયજી	112

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – બાબુલાલ સરેમલ શાહ

શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન

હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.

(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૬ (ઈ. ૨૦૧૦) – સેટ નં-૨

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.ahoshrut.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમ	પુસ્તકનું નામ	ભાષા	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
055	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहद्न्यास अध्याय-६	सं	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	296
056	विविध तीर्थ कल्प	सं	पू. जिनविजयजी म.सा.	160
057	ભારતીય જૈન શ્રમણ સંસ્કૃતિ અને લેખનકળા	ગુજ.	पू. पूण्यविजयजी म.सा.	164
058	सिद्धान्तलक्षणगूढार्थ तत्त्वलोकः	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	202
059	व्याप्ति पञ्चक विवृत्ति टीका	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	48
060	જૈન સંગીત રાગમાળા	ગુ.	श्री मांगरोळ जैन संगीत मंडळी	306
061	चतुर्विंशतीप्रबन्ध (प्रबंध कोश)	सं	श्री रसिकलाल एच. कापडीआ	322
062	व्युत्पत्तिवाद आदर्श व्याख्यया संपूर्ण ६ अध्याय	सं	श्री सुदर्शनाचार्य	668
063	चन्द्रप्रभा हेमकौमुदी	सं	पू. मेघविजयजी गणि	516
064	विवेक विलास	सं/ગુ.	श्री दामोदर गोविंदाचार्य	268
065	पञ्चशती प्रबोध प्रबंध	सं	पू. मृगेन्द्रविजयजी म.सा.	456
066	सन्मतितत्त्वसोपानम्	सं	पू. लब्धिसूरिजी म.सा.	420
067	ઉપદેશમાલા દોઘટ્ટી ટીકા ગુર્જરાનુવાદ	ગુજ.	पू. हेमसागरसूरिजी म.सा.	638
068	मोहराजापराजयम्	सं	पू. चतुरविजयजी म.सा.	192
069	क्रियाकोश	सं/हिं	श्री मोहनलाल बांठिया	428
070	कालिकाचार्यकथासंग्रह	सं/ગુ.	श्री अंबालाल प्रेमचंद	406
071	सामान्यनिरुक्ति चंद्रकला कलाविलास टीका	सं.	श्री वामाचरण भट्टाचार्य	308
072	जन्मसमुद्रजातक	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	128
073	मेघमहोदय वर्षप्रबोध	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	532
074	જૈન સામુદ્રિકનાં પાંચ ગ્રંથો	ગુજ.	श्री हिम्मतराम महाशंकर जानी	376

075	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૧	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	374
076	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૨	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	238
077	સંગીત નાટ્ય રૂપાવલી	ગુજ.	श्री विद्या साराभाई नवाब	194
078	ભારતનાં જૈન તીર્થો અને તેનું શિલ્પસ્થાપત્ય	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	192
079	શિલ્પ ચિન્તામણિ ભાગ-૧	ગુજ.	श्री मनसुखलाल भुदरमल	254
080	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૧	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	260
081	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૨	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	238
082	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૩	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	260
083	આયુર્વેદના અનુભૂત પ્રયોગો ભાગ-૧	ગુજ.	पू. कान्तिसागरजी	114
084	કલ્યાણ કારક	ગુજ.	श्री वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री	910
085	**विश्वलोचन कोश**	सं./हिं	श्री नंदलाल शर्मा	436
086	કથા રત્ન કોશ ભાગ-1	ગુજ.	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	336
087	કથા રત્ન કોશ ભાગ-2	ગુજ.	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	230
088	હસ્તસઞ્ચીવનમ્	સં.	पू. मेघविजयजीगणि	322
089	એન્દ્રચતુર્વિંશતિકા	સં.	पू.यशोविजयजी, पू. पुण्यविजयजी	114
090	સમ્મતિ તર્ક મહાર્ણવાવતારિકા	સં.	आचार्य श्री विजयदर्शनसूरिजी	560

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com

शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन

हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६७ (ई. 2011) सेट नं.-३

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.ahoshrut.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / टीकाकार	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
91	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-१	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	272
92	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-२	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	240
93	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-३	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	254
94	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-४	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	282
95	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-५	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	118
96	पवित्र कल्पसूत्र	पुण्यविजयजी	सं./अं	साराभाई नवाब	466
97	समराङ्गण सूत्रधार भाग-१	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	342
98	समराङ्गण सूत्रधार भाग-२	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	362
99	भुवनदीपक	पद्मप्रभसूरिजी	सं.	वेंकटेश प्रेस	134
100	गाथासहस्त्री	समयसुंदरजी	सं.	सुखलालजी	70
101	भारतीय प्राचीन लिपीमाला	गौरीशंकर ओझा	हिन्दी	मुन्शीराम मनोहरराम	316
102	शब्दरत्नाकर	साधुसुन्दरजी	सं.	हरगोविन्ददास बेचरदास	224
103	सुबोधवाणी प्रकाश	न्यायविजयजी	सं./गु	हेमचंद्राचार्य जैन सभा	612
104	लघु प्रबंध संग्रह	जयंत पी. ठाकर	सं.	ओरीएन्ट इन्स्टीट्युट बरोडा	307
105	जैन स्तोत्र संचय-१-२-३	माणिक्यसागरसूरिजी	सं,	आगमोद्धारक सभा	250
106	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-१,२,३	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	514
107	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-४,५	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	454
108	न्यायसार – न्यायतात्पर्यदीपिका	सतिषचंद्र विद्याभूषण	सं.	एसियाटीक सोसायटी	354
109	जैन लेख संग्रह भाग-१	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	337
110	जैन लेख संग्रह भाग-२	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	354
111	जैन लेख संग्रह भाग-३	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	372
112	जैन धातु प्रतिमा लेख भाग-१	कांतिविजयजी	सं./हि	जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार	142
113	जैन प्रतिमा लेख संग्रह	दौलतसिंह लोढा	सं./हि	अरविन्द धामणिया	336
114	राधनपुर प्रतिमा लेख संदोह	विशालविजयजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	364
115	प्राचिन लेख संग्रह-१	विजयधर्मसूरिजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	218
116	बीकानेर जैन लेख संग्रह	अगरचंद नाहटा	सं./हि	नाहटा ब्रधर्स	656
117	प्राचीन जैन लेख संग्रह भाग-१	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	122
118	प्राचिन जैन लेख संग्रह भाग-२	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	764
119	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-१	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
120	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-२	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
121	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-३	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	540
122	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-१	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	274
123	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-४	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	414
124	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-५	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	400
125	कलेक्शन ऑफ प्राकृत एन्ड संस्कृत इन्स्क्रीप्शन्स	पी. पीटरसन	अं.	भावनगर आर्चीऑलॉजीकल डिपा.	320
126	विजयदेव माहात्म्यम्	जिनविजयजी	सं.	जैन सत्य संशोधक	148

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com

शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन

हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६८ (ई. 2012) सेट नं.-४

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.ahoshrut.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / संपादक	भाषा	प्रकाशक	पृष्ठ
127	महाप्रभाविक नवस्मरण	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	754
128	जैन चित्र कल्पलता	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	84
129	जैन धर्मनो प्राचीन इतिहास भाग-२	हीरालाल हंसराज	गुज.	हीरालाल हंसराज	194
130	ओपरेशन इन सर्च ओफ सं. मेन्यु. भाग-६	पी. पीटरसन	अंग्रेजी	एशियाटीक सोसायटी	171
131	जैन गणित विचार	कुंवरजी आणंदजी	गुज.	जैन धर्म प्रसारक सभा	90
132	दैवज्ञ कामधेनु (प्राचिन ज्योतिष ग्रंथ)	शील खंड	सं.	ब्रज. बी. दास बनारस	310
133	करण प्रकाशः	ब्रह्मदेव	सं./अं.	सुधाकर द्विवेदि	276
134	न्यायविशारद महो. यशोविजयजी स्वहस्तलिखित कृति संग्रह	यशोदेवसूरिजी	गुज.	यशोभारती प्रकाशन	69
135	भौगोलिक कोश-१	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	100
136	भौगोलिक कोश-२	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	136
137	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	266
138	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	244
139	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	274
140	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	168
141	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	282
142	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	182
143	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-१	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	384
144	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-२	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	376
145	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-३	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	387
146	भाषवति	शतानंद मारछता	सं./हि	एच.बी. गुप्ता एन्ड सन्स बनारस	174
147	जैन सिद्धांत कौमुदी (अर्धमागधी व्याकरण)	रत्नचंद्र स्वामी	प्रा./सं.	भैरोदान सेठीया	320
148	मंत्रराज गुणकल्प महोदधि	जयदयाल शर्मा	हिन्दी	जयदयाल शर्मा	286
149	फक्कीका रत्नमंजूषा-१, २	कनकलाल ठाकूर	सं.	हरिकृष्ण निबंध	272
150	अनुभूत सिद्ध विशायंत्र (छ कल्प संग्रह)	मेघविजयजी	सं./गुज	महावीर ग्रंथमाळा	142
151	सारावलि	कल्याण वर्धन	सं.	पांडुरंग जीवाजी	260
152	ज्योतिष सिद्धांत संग्रह	विश्वेश्वरप्रसाद द्विवेदी	सं.	ब्रीजभूषणदास बनारस	232
153	ज्ञान प्रदीपिका तथा सामुद्रिक शास्त्रम्	रामव्यास पान्डेय	सं.	जैन सिद्धांत भवन	160
	नूतन संकलन				
१	आ. चंद्रसागरसूरिजी ज्ञानभंडार – उज्जैन	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	
२	श्री गुजराती श्वे.मू. जैन संघ-हस्तप्रत भंडार – कलकत्ता	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com

शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन

हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६९ (ई. 2013) सेट नं.-५

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.ahoshrut.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / संपादक	विषय	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
154	उणादि सूत्रो ओफ हेमचंद्राचार्य	पू. हेमचंद्राचार्य	व्याकरण	संस्कृत	जोहन क्रिष्टे	304
155	उणादि गण विवृत्ति	पू. हेमचंद्राचार्य	व्याकरण	संस्कृत	पू. मनोहरविजयजी	122
156	प्राकृत प्रकाश-सटीक	भामाह	व्याकरण	प्राकृत	जय कृष्णदास गुप्ता	208
157	द्रव्य परिक्षा और धातु उत्पत्ति	ठक्कर फेरू	धातु	संस्कृत /हिन्दी	भंवरलाल नाहटा	70
158	आरम्भसिध्धि – सटीक	पू. उदयप्रभदेवसूरिजी	ज्योतीष	संस्कृत	पू. जितेन्द्रविजयजी	310
159	खंडहरो का वैभव	पू. कान्तीसागरजी	शील्प	हिन्दी	भारतीय ज्ञानपीठ	462
160	बालभारत	पू. अमरचंद्रसूरिजी	काव्य	संस्कृत	पं. शीवदत्त	512
161	गिरनार माहात्म्य	दौलतचंद परषोत्तमदास	तीर्थ	संस्कृत /गुजराती	जैन पत्र	264
162	गिरनार गल्प	पू. ललितविजयजी	तीर्थ	संस्कृत/गुजराती	हंसकविजय फ्री लायब्रेरी	144
163	प्रश्नोत्तर सार्ध शतक	पू. क्षमाकल्याणविजयजी	प्रकरण	हिन्दी	साध्वीजी विचक्षणाश्रीजी	256
164	भारतिय संपादन शास्त्र	मूलराज जैन	साहित्य	हिन्दी	जैन विद्याभवन, लाहोर	75
165	विभक्त्यर्थ निर्णय	गिरिधर झा	न्याय	संस्कृत	चौखम्बा प्रकाशन	488
166	व्योम वती-१	शिवाचार्य	न्याय	संस्कृत	संपूर्णानंद संस्कृत युनिवर्सिटी	226
167	व्योम वती-२	शिवाचार्य	न्याय	संस्कृत	संपूर्णानंद संस्कृत विद्यालय	365
168	जैन न्यायखंड खाद्यम्	उपा. यशोविजयजी	न्याय	संस्कृत /हिन्दी	बद्रीनाथ शुक्ल	190
169	हरितकाव्यादि निघंटू	भाव मिश्र	आयुर्वेद	संस्कृत /हिन्दी	शीव शर्मा	480
170	योग चिंतामणि-सटीक	पू. हर्षकीर्तिसूरिजी	आयुर्वेद	संस्कृत /हिन्दी	लक्ष्मी वेंकटेश प्रेस	352
171	वसंतराज शकुनम्	पू. भानुचन्द्र गणि टीका	ज्योतिष	संस्कृत	खेमराज कृष्णदास	596
172	महाविद्या विडंबना	पू. भुवनसुन्दरसूरि टीका	ज्योतिष	संस्कृत	सेन्ट्रल लायब्रेरी	250
173	ज्योतिर्निबन्ध	शिवराज	ज्योतिष	संस्कृत	आनंद आश्रम	391
174	मेघमाला विचार	पू. विजयप्रभसूरिजी	ज्योतिष	संस्कृत/गुजराती	मेघजी हीरजी	114
175	मुहूर्त चिंतामणि-सटीक	रामकृत प्रमिताक्षय टीका	ज्योतिष	संस्कृत	अनूप मिश्र	238
176	मानसोल्लास सटीक-१	भुलाकमल्ल सोमेश्वर	ज्योतिष	संस्कृत	ओरिएन्ट इन्स्टीट्यूट	166
177	मानसोल्लास सटीक-२	भुलाकमल्ल सोमेश्वर	ज्योतिष	संस्कृत	ओरिएन्ट इन्स्टीट्यूट	368
178	ज्योतिष सार प्राकृत	भगवानदास जैन	ज्योतिष	प्राकृत/हिन्दी	भगवानदास जैन	88
179	मुहूर्त संग्रह	अंबालाल शर्मा	ज्योतिष	गुजराती	शास्त्री जगन्नाथ परशुराम द्विवेदी	356
180	हिन्दु एस्ट्रोलोजी	पिताम्बरदास त्रीभोवनदास	ज्योतिष	गुजराती	पिताम्बरदास टी. महेता	168

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com

शाह विमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन

हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-380005.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०७१ (ई. 2015) सेट नं.-६

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची।

यह पुस्तके www.ahoshrut.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / संपादक	विषय	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
181	काव्यप्रकाश भाग-१	पूज्य मम्मटाचार्य कृत		संस्कृत	पूज्य जिनविजयजी	364
182	काव्यप्रकाश भाग-२	पूज्य मम्मटाचार्य कृत		संस्कृत	पूज्य जिनविजयजी	222
183	काव्यप्रकाश उल्लास-२ अने ३	उपा. यशोविजयजी		संस्कृत	यशोभारति जैन प्रकाशन समिति	330
184	नृत्यरत्न कोश भाग-१	श्री कुम्भकर्ण नृपति		संस्कृत	श्री रसीकलाल छोटालाल	156
185	नृत्यरत्न कोश भाग-२	श्री कुम्भकर्ण नृपति		संस्कृत	श्री रसीकलाल छोटालाल	248
186	नृत्याध्याय	श्री अशोकमलजी		संस्कृत /हिन्दी	श्री वाचस्पति गैरोभा	504
187	संगीरत्नाकर भाग-१ सटीक	श्री सारंगदेव		संस्कृत/अंग्रेजी	श्री सुब्रमण्यम शास्त्री	448
188	संगीरत्नाकर भाग-२ सटीक	श्री सारंगदेव		संस्कृत/अंग्रेजी	श्री सुब्रमण्यम शास्त्री	444
189	संगीरत्नाकर भाग-३ सटीक	श्री सारंगदेव		संस्कृत/अंग्रेजी	श्री सुब्रमण्यम शास्त्री	616
190	संगीरत्नाकर भाग-४ सटीक	श्री सारंगदेव		संस्कृत/अंग्रेजी	श्री सुब्रमण्यम शास्त्री	632
191	संगीत मकरन्द	नारद		संस्कृत	श्री मंगेश रामकृष्ण तेलंग	84
192	संगीत नृत्य अने नाट्य संबंधी जैन ग्रंथो	श्री हीरालाल कापडीया		गुजराती	मुक्ति-कमल-जैन मोहन ग्रंथमाला	244
193	न्यायबिंदु सटीक	पूज्य धर्मोतराचार्य		संस्कृत	श्री चंद्रशेखर शास्त्री	220
194	शीघ्रबोध भाग-१ थी ५	पूज्य ज्ञानसुन्दरजी		हिन्दी	सुखसागर ज्ञान प्रसारक सभा	422
195	शीघ्रबोध भाग-६ थी १०	पूज्य ज्ञानसुन्दरजी		हिन्दी	सुखसागर ज्ञान प्रसारक सभा	304
196	शीघ्रबोध भाग-११ थी १५	पूज्य ज्ञानसुन्दरजी		हिन्दी	सुखसागर ज्ञान प्रसारक सभा	446
197	शीघ्रबोध भाग-१६ थी २०	पूज्य ज्ञानसुन्दरजी		हिन्दी	सुखसागर ज्ञान प्रसारक सभा	414
198	शीघ्रबोध भाग-२१ थी २५	पूज्य ज्ञानसुन्दरजी		हिन्दी	सुखसागर ज्ञान प्रसारक सभा	409
199	अध्यात्मसार सटीक	पूज्य गंभीरविजयजी		संस्कृत/गुजराती	नरोत्तमदास भानजी	476
200	छन्दोनुशासन	एच. डी. वेलनकर		संस्कृत	सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ	444
200	मग्गानुसारिया	श्री डी. एस शाह		संस्कृत/गुजराती	ज्ञातपुत्र भगवान महावीर ट्रस्ट	146

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543. E-mail : ahoshrut.bs@gmail.com
शाह विमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-380005.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०७२ (ई. 201६) सेट नं.-७

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की डिजिटाइझेशन द्वारा डीवीडी बनाई उसकी सूची।

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / टिकाकार	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
202	आचारांग सूत्र भाग-१ निर्युक्ति+टीका	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	285
203	आचारांग सूत्र भाग-२ निर्युक्ति+टीका	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	280
204	आचारांग सूत्र भाग-३ निर्युक्ति+टीका	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	315
205	आचारांग सूत्र भाग-४ निर्युक्ति+टीका	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	307
206	आचारांग सूत्र भाग-५ निर्युक्ति+टीका	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	361
207	सुयगडांग सूत्र भाग-१ सटीक	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	301
208	सुयगडांग सूत्र भाग-२ सटीक	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	263
209	सुयगडांग सूत्र भाग-३ सटीक	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	395
210	सुयगडांग सूत्र भाग-४ सटीक	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	386
211	सुयगडांग सूत्र भाग-५ सटीक	श्री शीलंकाचार्य	गुजराती	श्री माणेक मुनि	351
212	रायपसेणिय सूत्र	श्री मलयगिरि	गुजराती	श्री बेचरदास दोशी	260
213	प्राचीन तीर्थमाळा भाग-१	आ.श्री धर्मसूरि	सं./गुजराती	श्री यशोविजयजी ग्रंथमाळा	272
214	धातु पारायणम्	श्री हेमचंद्राचार्य	संस्कृत	आ. श्री मुनिचंद्रसूरि	530
215	सिद्धहेम शब्दानुशासन लघुवृत्ति भाग-१	श्री हेमचंद्राचार्य	सं./गुजराती	श्री बेचरदास दोशी	648
216	सिद्धहेम शब्दानुशासन लघुवृत्ति भाग-२	श्री हेमचंद्राचार्य	सं./गुजराती	श्री बेचरदास दोशी	510
217	सिद्धहेम शब्दानुशासन लघुवृत्ति भाग-३	श्री हेमचंद्राचार्य	सं./गुजराती	श्री बेचरदास दोशी	560
218	तार्किक रक्षा सार संग्रह	आ. श्री वरदराज	संस्कृत	राजकीय संस्कृत पुस्तकालय	427
219	वादार्थ संग्रह भाग-१ (स्फोट तत्त्व निरूपण, स्फोट चन्द्रिका, प्रतिपादिक संज्ञावाद, वाक्यवाद, वाक्यदीपिका)	विविध कर्ता	संस्कृत	महादेव शर्मा	88
220	वादार्थ संग्रह भाग-२ (षट्कारक विवेचन, कारक वादार्थ, समासवादार्थ, वकारवादार्थ)	विविध कर्ता	संस्कृत	महादेव शर्मा	78
221	वादार्थ संग्रह भाग-३ (वादसुधाकर, लघुविभक्त्यर्थ निर्णय, शाब्दबोधप्रकाशिका)	विविध कर्ता	संस्कृत	महादेव शर्मा	112
222	वादार्थ संग्रह भाग-४ (आख्यात शक्तिवाद छः टीका)	रघुनाथ शिरोमणि	संस्कृत	महादेव शर्मा	228

अथश्री

शीघ्रबोध भाग २१ वां.

अथ श्री व्यवहारसूत्रका संक्षिप्त सार.

(उद्देशा दश.)

श्रीमद् आचारांगादि सूत्रोमें मुनियोंके आचारका प्रतिपादन कीया है. उस आचारसे पतित होनेवालोंके लीये लघु निशीथ सूत्रमें आलोचना कर, प्रायश्चित्त ले शुद्ध होना बतलाया है।

आलोचना सुननेवाले तथा आलोचना करनेवाले मुनि कैसा होना चाहिये तथा आलोचना किस भावोंसे करते है, उसको कितना प्रायश्चित्त दीया जाता है, वह इस प्रथम उद्देशा द्वारे बतलाया जावेगा.

(१) प्रथम उद्देशा—

(१) किसी मुनिने एक[१] मासिक प्रायश्चित्त योग, दुष्कृतका स्थान सेवन कीया, उसकी आलोचना गीतार्थ आचार्य के पास निष्कपट भावसे करी हो, उस मुनिको एक मासिक प्रायश्चित्त*

१—मासिक प्रायश्चित्त स्थान देखो—लघु निशीथसूत्र.

* मासिक प्रायश्चित्त—जैसे तप मासिक, छेदमासिक, प्रत्याख्यान मासिक इस्के भी लघुमासिक, गुरुमासिक–दो दो भेद है. खुलासा देखो लघुनिशीथ सूत्र.

देवे. अगर माया[1]—कपट संयुक्त आलोचना करी हो, तो उस मुनिको दो मासका प्रायश्चित्त देना चाहिये. एक मासतो दुष्कृत स्थान सेवन कीया उसका, और एक मास जो कपट माया करी उसका.

(२) मुनि दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया (कपट) रहित आलोचना करे, उसको दो मासिक प्रायश्चित्त देना, अगर माया[2] (कपट) संयुक्त आलोचना करे, उसको तीन

१—एक नदीके कीनारे पर निवास करनेवाला तापसने मच्छ भक्षण कीया था, उसीसे उन्होंके शरीर में बहुत व्याधि हो गइ; उस तापसके भक्त लोगोंने एक अच्छा वैद्य बुलाया. वैद्यने पूछा कि—'आपने क्या भक्षण कीया था?' तापस लज्जाके मारे सत्य नहीं बोला, और कहा कि—'मैंने कंदमूलका भक्षण कीया.' वैद्यने दवाका प्रयोग किया, जिससे फायदा के बदले रोगकी अधिक वृद्धि हो गइ. जब वैद्यने कहा कि—'आप सत्य सत्य कह दीजीये, क्या भक्षण कीया था?' तापसने लज्जा छोडके कहा कि—'मैंने मच्छ भक्षण कीया था.' तब वैद्यने उसकी दवा देके रोगचिकित्सा करी. इसी माफिक कपट कर आलोचना करने से पापकी न्यूनताके बदले वृद्धि होती है. और माया (कपट) रहित आलोचना करनेसे पाप निर्मूल हो आत्मा निर्मल होती है. वास्ते अव्वल पाप सेवन नहीं करे, अगर मोहनीय कर्मके उदयसे हो भी जावे, तो शुद्ध अंतःकरणके भावसे आलोचना करनी चाहिये.

२—केवलीके पास माया संयुक्त आलोचना करे, तो केवली उसे प्रायश्चित्त न दे, किन्तु छद्मस्थोंके समीप आलोचना करनेको कहे. छद्मस्थ आलोचना प्रथम सुनते है, उस समय प्रायश्चित्त न दे, दुसरी दफे उसी आलोचनाको और सुने, फीर प्रायश्चित्त न दे, तीसरी दफे ओर भी सुने, तीनों दफेकी आलोचना एक सरिखी हो तो अनुमानसे जाने कि माया रहित आलोचना है. अगर तीनों दफेमें फारफेर हो तो माया संयुक्त आलोचना जान एक मास मायाका और जितना प्रायश्चित्त सेवन कीया हो उतना मूल मिलाके उसको प्रायश्चित दीया जाता है.

मासिक प्रायश्चित देना कारण—दो मासिक मूल्य प्रायश्चित और एक मास माया—कपटका, एवं.

(३) मुनि तीन मासिक प्रायश्चित स्थान सेवन कर माया रहित आलोचना करे, उस मुनिको तीन मासिक प्रायश्चित दीया जाता है. अगर माया संयुक्त आलोचना करे तो च्यार मासिक प्रायश्चित देना चाहिये. भावना पूर्ववत्.

(४) मुनि च्यार मासिक प्रायश्चित स्थान सेवन कर माया रहित आलोचना करी हो, तो उस मुनिको च्यार मासिक प्रायश्चित देना, अगर माया संयुक्त आलोचना करे, पांच मासका प्रायश्चित देना. भावना पूर्ववत्.

(५) मुनि पांच मासिक प्रा०स्थान सेवन कर आलोचना करी हो तो उस मुनिको पांचमासिक प्रायश्चित देना, अगर माया संयुक्त आलोचना करी हो, तो उस मुनिको छ मासिक प्रायश्चित देना चाहिये. भावना पूर्ववत्. छे माससे अधिक प्रायश्चित नहीं[1] है. अधिक प्रायश्चित हो तो फीरसे आठवां प्रायश्चित अर्थात् मूलसे दीक्षा देनी चाहिये.

(६) मुनि बहुत सी वार मासिक प्रायश्चित सेवन कर मायारहित आलोचना करे, उस मुनिको मासिक प्रायश्चित होता है, अगर माया संयुक्त आलोचना करनेसे दो मासिक प्रायश्चित्त होता है. एक मासिक मूल प्रायश्चित और एक मास मायाका.

(७) एवं बहुतसे दो मासिक.

---

१ जिस तीर्थंकरोने उत्कृष्ट तप कीया हो, तथा उन्होंके शासनमें उत्कृष्ट तप हो, उसको अधिक तपका प्रायश्चित नहीं दीया जाता है. भगवान् वीरप्रभु उत्कृष्ट छे मासी तप कीया था, वास्ते वीरशासनके मुनियोंको उत्कृष्ट छे माससे अधिक तप प्रायश्चित्त नहीं दीया जाता है. अधिक होतो मूलसे दीक्षा दी जावे.

(८) बहुतसे तीन मासिक.

(९) बहुतसे च्यार मासिक.

(१०) बहुतसे पांच मासिक प्रायश्चित्त सेवन कर आलोचना जो माया रहित करने वालोंको मूल सेवन कीया उतना ही प्रायश्चित्त दीया जाता है. अगर माथा संयुक्त आलोचना करे. उस मुनिका मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित्त यावत् छे मासका प्रायश्चित्त होता है. इसके उपरान्त चाहे माया रहित, चाहे माया संयुक्त आलोचना करे. परन्तु छे माससे ज्यादा तपादि प्रायश्चित्त नहीं दीया जाता. उस मुनिको तो फिरसे दीक्षाका ही प्रायश्चित्त होता है. भावना पूर्ववत्.

(११) मुनि जो मासिक, दोमासिक, तीन मासिक च्यार मासिक, पांच मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया रहित निष्कपट भावसे आलोचना करनेपर उस मुनिको मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चार मासिक, पांच मासिक प्रायश्चित्त होता है. अगर माया संयुक्त आलोचना करे तो मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित्त होता है. इस्के आगे प्रायश्चित्त नहीं है. भावना पूर्ववत्.

(१२) मुनि जो बहुसे मासिक, बहुतसे दो मासिक, एवं तीन मासिक, च्यार मासिक, पांच मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया रहित आलोचना करे, उस मुनिको मासिक यावत् पांच मासिक प्रायश्चित्त होता है. अगर मायासंयुक्त आलोचना करे उसे मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक यावत् छेमासका प्रायश्चित्त होता है. भावना पूर्ववत्.

(१३) जो मुनि चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक पंचमासिक, साधिकपंचमासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवन कर माया रहित आलोचना करे, उसे मूल प्रायश्चित्त ही दीया जाता है.

अगर मायासंयुक्त आलोचना करे, तो मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित्त दीया जाता है.

(१४) एवं बहुत वचनापेक्षाका भी सूत्र समझना. परन्तु छे मास उपरान्त प्रायश्चित्त नहीं है. भावना पूर्ववत्. चातुर्मासिक प्रायश्चित्त प्रथम एकवचन या बहुवचन आ गया था; परन्तु यहां साधिक चातुर्मासिक सम्बन्धपर सूत्र अलग कहा है.

(१५) किसी मुनिको प्रायश्चित्त दीया है. वह मुनि प्रायश्चित्त तप करते हुवे और भी प्रायश्चित्तका स्थान सेवन करे, उसको प्रायश्चित्त देनेकी अपेक्षा यह सूत्र कहा जाता है.

जो मुनि चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पंचमासिक, साधिक पंचमासिकसे कोइ भी प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायासंयुक्त आलोचना करे. अगर वह द्वेष संघमें प्रगट सेवन कीया हो, तो उसको संघ सन्मुख ही प्रायश्चित्त देना चाहिये कि संघको प्रतीत रहै, और दूसरे साधुवोंको इस बातका क्षोभ रहै. तथा जिस प्रायश्चित्तको गुप्तपनेसे सेवन किया हो, संघ उसे न जानता हो, उसे गुप्त आलोचना देनी, जिसे शासनका उडहा न हो. यह गीतार्थोंकी गंभीरता है. इसीसे साधु दूसरी दफे द्वेष न लगावेगा. तपश्चर्या करते हुवे साधुका आचार व्यवहार सामाचारी शुद्ध हो, उसे गुरु आज्ञासे वाचना आदिकी साह्यता करना. कारण—वाचना देना महान् लाभका कारन है. और तप करनेवाले मुनिका चित्त भी हमेशां स्थिर रहै. अगर जो मुनिकी सामाचारी ठीक न हो उसको द्रव्यादि जाणी गुरु आज्ञा दे तो वाचना देना, नहीं तो न देना. परिहार तपकी पूरतीमें उस साधुकी वैयावच्च करनेमें अन्य साधुको स्थापन करना, अगर प्रायश्चित्त तप करते और भी प्रायश्चित्त सेवन करे तो यथा तप उस चालु

प्रायश्चित्तमें ही वृद्धि करना (इसकी विधि निशीथ सूत्रमें है.) आलोचना करनेवालोंके च्यार भांगा है. यथा—आचार्यमहाराजकी आज्ञासे मुनि अन्य स्थल विहार कर कितने अरसेसें वापीस आचार्यमहाराजके समीप आये, उसमें कितने ही दोष लगे थे, उसकी आलोचना आचार्यश्रीके पासमें करते है.

(१) पहले दोष लगा था, उसकी पहले आलोचना करे, अर्थात् क्रमःसर प्रायश्चित्त लगा होवे, उसी माफिक आलोचना करे.

(२) पहले दोष लगा था, परन्तु आलोचना करते समय विस्मृत हो जानेके सबबसे पहले दूसरे दोषोंकी आलोचना करे फिर स्मृति होनेसे पहले सेवन कीये हुवे दोषोंकी पीछे आलोचना करे.

(३) पीछे सेवन कीया हुवा दोषोंकी पहले आलोचना करे.

(४) पीछे सेवन कीये हुवे दोषोंकी पीछे आलोचना करे.

आलोचना करते समय परिणामोंकी चतुर्भंगी.

(१) आलोचना करनेवाले मुनि पहला विचार किया था कि अपने निष्कपटभावसे आलोचना करनी. इसी माफिक शुद्ध भावोंसे आलोचना करे, ज्ञानवन्त मुनि.

(२) मायारहित शुद्ध भावोंसे आलोचना करनेका इरादा था, परन्तु आलोचना करते समय मायासंयुक्त आलोचना करे. भावार्थ—ज्यादा प्रायश्चित्त आनेसे अन्य लघु मुनियोंसे मुजे लघु होना पडेगा, लोगोंमें मानपूजाकी हानि होगी-इत्यादि विचारोंसे मायासंयुक्त आलोचना करे.

(३) पहला विचार था कि मायासंयुक्त आलोचना करुंगा.

आलोचना करते समय मायारहित शुद्ध निर्मल भावोंसे आलो-
चना करे. भावार्थ—पहला विचार था कि ज्यादा प्रायश्चित्त
आनेसे मेरी मानपूजाकी हानि होगी. फिर आलोचना करते
समय आचार्यमहाराज जो स्थानांग सूत्रमें आलोचना करनेवा-
लोंके गुण और शुद्ध भावोंसे आलोचना करनेवाला इस लोक
और परलोकमें पूजनीय होता है. लोक तारीफ करते है. यावत्
मोक्षसुखकी प्राप्ति होती है. ऐसा सुन अपने परिणामको बदलाके
शुद्ध भावोंसे आलोचना करे.

(४) पहले विचार था कि मायासंयुक्त आलोचना करुंगा,
और आलोचना करते समय भी मायासंयुक्त आलोचना करे.
बाल, अज्ञानी, भवाभिनन्दी जीवोंका यह लक्षण है.

आलोचना करनेवालोंका भावोंको आचार्यमहाराज जानके
जैसा जिसको प्रायश्चित्त होता हो, वेसा उसे प्रायश्चित्त देवे.
सबके लीये एकसा ही प्रायश्चित्त नहीं है. एक ही दोषके भिन्न
भिन्न परिणामवालोंको भिन्न भिन्न प्रायश्चित्त दीया जाता है.

(१६) इसी माफिक बहुतवार चातुर्मासिक, साधिक
चातुर्मासिक, पंच मासिक, साधिक पंच मासिक, प्रायश्चित्त से-
वन कीया हो. उसकी दो चोभंगीयों १५ वां सूत्रमें लिखी गइ है.
यावत् जिस प्रायश्चित्त के योग्य हो, ऐसा प्रायश्चित देना. भावना
पूर्ववत्.

(१७) जो मुनि चातुर्मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पंच
मासिक, साधिक पंच मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवन कर
आलोचना (पूर्ववत् चतुर्भंगीसे) करे, उस मुनिको तपकी अन्दर
तथा यथायोग्य वैयावच्चमें स्थापन करे. उस तप करते हुवेमें
और प्रायश्चित्त सेवन करे, तो उस चालु तपमें प्रायश्चित्तकी वृद्धि

करना तथा प्रायश्चित्त तप करके निकलते हुवेको अगर लघु दोष लग जावे, तो उसी तपकी अन्दर सामान्यतासे वृद्धि कर शुद्ध कर देना.

(१८) इसी माफिक बहु वचनापेक्षा भी समझना.

जो मुनि प्रायश्चित्त सेवन कर निर्मळ भावोंसे आलोचना करते है. उसको कारण बतलाते हुवे, हेतु बतलाते हुवे, अर्थ बतलाते हुवे इस लोक, परलोकके आराधकपनाके अक्षय सुख बतलाते हुवे प्रायश्चित्त देवे, और दीया हुवा प्रायश्चित्तमें सहायता कर उसको यथा निर्वाह हो एसा तप कराके शुद्ध बना लेवे. यह फर्ज गीतार्थ आचार्य महाराजकी है.

(१९) बहुतसे मुनि ऐसे है कि जो प्रायश्चित्त सेवन कीया, उसकी आलोचना भी नहीं करी है. उसे शास्त्रकारोंने 'प्रायश्चित्तीये' कहा है. और बहुतसे मुनि निरतिचार व्रत पालन करते हैं, उसे ' अप्रायश्चित्तीये ' कहा है, वह दोंनों प्रायश्चित्तीये, अप्रायश्चित्तीये मुनि एकत्र रहना चाहे, एकत्र बैठना चाहे, एकत्र शय्या करना चाहे, तो उस मुनियोंको पेस्तर [१]स्थविर महाराजको पुछना चाहिये, अगर स्थविर महाराज किसी प्रकारका खास कारन जानके आज्ञा देवे, तो उस दोनों पक्षवाले मुनियोंको एकत्र रहना कल्पै. अगर स्थविर महाराज आज्ञा न दे तो उस दोनों पक्षवालोंको एकत्र रहना नहीं कल्पै. अगर स्थविर महाराजकी

---

१ स्थविर तीन प्रकारके होते है. (१) वय स्थविर ६० वर्षकी आयुष्यवाला (२) दीक्षा स्थविर वीश वर्षका चारित्र पर्यायवाला, (३) सूत्र स्थविर स्थानांगसूत्र और समवायांग सूत्रके जानकार तथा कितनेक स्थानोंपर आचार्य महाराजको भी स्थविरके नामसे ही बतलाये है.

आज्ञाका भंग कर दोनों पक्षवाले मुनि एकत्र निवास करे, तो जितने दिन वह एकत्र रहे, उतने दिनोंका तप प्रायश्चित्त तथा छेद प्रायश्चित्त आवे. भावार्थ—प्रायश्चित्तीये, अप्रायश्चित्तीये मुनि एकत्र रहनेसे लोकमें अप्रतीतिका कारन होता है. एसा हो तो फीर प्रायश्चित्तीये मुनियोंको शुद्धाचारकी आवश्यक्ताही क्यों और दोषोंका प्रायश्चितही क्यों ले ? इत्यादि कारणोंसे एकत्र रहना नहीं कल्पै. अगर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव देखके आचार्य महाराज आज्ञा दे, उस हालतमें कल्पै भी सही. यह ही स्याद्वाद रहस्यका मार्ग है.

(२०) आचार्य महाराजको किसी अन्य ग्लान साधुकी वैयावच्चके लीये किसी साधुकी आवश्यक्ता होनेपर परिहार तप करनेवाले साधुको अन्य ग्राम मुनियोंकी वैयावच्चके लीये जानेका आदेश दीया, उस समय आचार्य महाराज उस मुनिको कहे कि—हे आर्य ! रहस्तेमें चलना और परिहार तप करना यह दो बातों होना कठिन है. वास्ते रहस्तेमें इस तपका छोड देना. इसपर उस साधुको अशक्ति हो तो तप छोड कर जिस दिशामें अपने स्वधर्मी साधु विचरते हो उसी दिशाकी तरफ विहार करना. रहस्तेमें एक रात्रि, दो रात्रिसे ज्यादा रहना नहीं कल्पै. अगर शरीरमें व्याधि हो तो जहांतक व्याधि रहे, वहांतक रहना कल्पै. रोगमुक्त होनेपर पहलेके साधु कहे कि—हे आर्य ! एक दो रात्रि और ठहरो, इससे पुर्ण खातरी हो जाय. उस हालतमें एक दोय रात्रि ठहरना कल्पै. अगर एक दो रात्रिसे अधिक (सुखशीलीयापनासे) ठहरे, तो जितने रोज रहे उतने रोजका तप तथा छेद प्रायश्चित्त होता है. भावार्थ—ग्लान मुनियोंकी वैयावच्चके लीये भेजा हुवा साधु रहस्तेमें विहार या उपकार निमित्त ठहर नहीं सके. तथा रोगमुक्त होनेपर भी ज्यादा ठहर नहीं सके. अगर ठहर जावे तो

जिस ग्लानोंकी वैयावच्चके लीये भेजा था, उसकी वैयावच्च कोन करे? इस लीये उस मुनिको शीघ्रतापूर्वक ही जाना चाहिये.

(२१) इसी माफिक रवाने होते समय आचार्यमहाराज तप छोडनेका न कहा हो, तो उस मुनिको जो प्रायश्चित्तका तप कर रहा था, उसी माफिक तप करते हुवे ही ग्लानिकी वैयावच्चमें जाना चाहिये. रहस्तेमें विलंब न करे.

(२२) इसी माफिक पेस्तर आचार्यमहाराजका इरादा था कि विहार समय इस मुनिको कहे कि–रहस्तेमें तप छोड देना, परन्तु विहार करते समय किसी कारणसे कह नहीं सका हो तो उस मुनिको तप करते हुवे ही ग्लानोंकी वैयावच्चमें जाना चाहिये. पूर्ववत् शीघ्रतासे.

(२३) कोइ मुनि गच्छको छोडके एकल प्रतिमारुप अभिग्रह धारण कर अकेला विहार करे, अगर अकेले विहार करनेमें अनेक परिसह उत्पन्न होते है, उसको सहन करनेमें असमर्थ हो, तथा आचारादि शीथिल हो जानेसे या किसी भी कारणसे पीछे उसी गच्छमें आना चाहे तो गणनायकको चाहिये कि–वह उस मुनिसे फिरसे आलोचना प्रतिक्रमण करावे और उसको छेद प्रायश्चित्त तथा फिरसे उत्थापन देके गच्छमें लेवे.

(२४) इसी माफिक गणविच्छेदक.

(२५) इसी माफिक आचार्योपाध्यायको भी समझना. भावार्थ—आठ[1] गुणोंका धणी हो, वह अकेला विहार कर सकता है. अकेला विहार करनेमें अप्रतिबद्ध रहनेसे कर्मनिर्जरा बहुत होती है. परन्तु इतना शक्तिमान् होना चाहिये. अगर परिसह सहन करनेमें असमर्थ हो उसे गच्छमें ही रहना अच्छा है.

---

१ स्थानायांग सूत्रके आठवे स्थानको देखे.

(२६) संयमसे शिथिल हो, संयमको पास रख छोडे; उसे पासत्था कहा जाता है. कोइ मुनि गच्छके कठिन आचारादि पालनेमें असमर्थ होनेसे गच्छ त्याग कर पासत्था धर्मको स्वीकार कर विचरने लगा. बादमें परिणाम अच्छा हुवा कि-पौद्गलिक क्षणमात्रके सुखोंके लीये मैंने गच्छ त्याग कर इस भववृद्धिका कारन पासत्थपनेको स्वीकार कर अकृत्य कार्य कीया है. वास्ते अब पीछे उसी गच्छमें जाना चाहिये अगर वह साधु पुनः गच्छमें आना चाहे, तो पेस्तर उसको आलोचना-प्रतिक्रमण करना चाहिये. पुनः छेद प्रायश्चित्त तथा पुनः दीक्षा देके गच्छमें लेना कल्पै.

(२७) एवं गच्छ छोडके स्वच्छंद विहारी होनेवालोंका अलायक.

(२८) एवं कुशील—जिन्होंका आचार खराब हैं. प्रतिदिन विगइ सेवन करनेवालोंका अलायक.

(२९) एवं उसन्ना—क्रियामें शिथिल, पुंजन प्रतिलेखनमें प्रमादी, लोचादि करनेमें असमर्थ, ऐसा उसन्नोंका अलायक.

(३०) एवं संसक्त—आचारवंत साधु मिलनेसे आप आचारवन्त बन जावे, पासत्थादि मिलनेसे पासत्थादि बन जावे, अर्थात् दुराचारीयोंसे संसर्ग रखनेवालोंका अलायक. २६, २७, २८, २९, ३०. इस पांचों अलायकका. भावार्थ—उक्त कारणोंसे गच्छका त्याग कर भिन्न भिन्न प्रवृत्ति करनेवाले फिरसे उसी गच्छमें आना चाहे तो प्रथम आलोचना कराके यथायोग्य प्रायश्चित्त तप या छेद तथा उत्थापन देके फिर गच्छमें लेना चाहिये कि उस मुनिको तथा अन्य मुनियोंको इस बातका क्षोभ रहे. गच्छ मर्यादा तथा सदाचारकी प्रवृत्ति मजबूत बनी रहै.

(३१) जो कोइ साधु गच्छ छोडके पाखंडी लिंगको स्वीकार करे अर्थात् अन्य यतियोंके लिंगमें रहे और वापिस स्वगच्छमें आना चाहे, तो उसे कोइ आलोचना प्रायश्चित्त नहीं. फक्त व्यवहारसे उसकी आलोचना सुन ले, फिर उस मुनिको गच्छ में ले लेना चाहिये. भावार्थ—अगर कोइ राजादिका जैन मुनियों पर कोप हो जानेसे अन्य साधुवोंका योग न होनेपर अपना संयमका निर्वाह करनेके लीये अन्य यतियोंके लिंगमें रह कर, अपनी साधुक्रिया बराबर साधन करता केवल शासन रक्षणके लीये ही ऐसा कार्य करे, तो उसे प्रायश्चित्त नहीं होता है. इस विषयमें स्थानांग सूत्र चतुर्थ स्थानकी चौभंगी, तथा भगवती सूत्र निर्ग्रंथाधिकारे विशेष खुलासा है.

(३२) जो कोइ साधु स्वगच्छको छोडके व्रत भंग कर गृहस्थधर्मको सेवन कर लीया हो बाद में उसको परिणाम हो कि मैंने चारित्र चिंतामणिको हाथसे गमा दीया है. अर्थात् संसारसे अरुचि—संवेगकी तर्फ लक्ष्य कर फिरसे उसी गच्छमें आना चाहे तो आचार्य महाराज उसकी योग्यता देखे, भविष्यके लीये ख्याल कर, उसे छेदके तप प्रायश्चित्त कुछ भी नहीं दे, किन्तु पुनः उसी रोजसे दीक्षा देवे.

(३३) जो कोइ साधु अकृत्य ऐसा प्रायश्चित्त स्थानकों सेवन करे फिरसे शुद्ध भावना आनेसे आलोचना करनेकी इच्छा करे, तो उस मुनिको अपने आचार्योपाध्याय जो बहुश्रुत, बहु आगमका जाणकार, पांच व्यवहारके ज्ञाता हो उन्होंके समीप आलोचना करे, प्रतिक्रमण करे, पापसे विशुद्ध हो, प्रायश्चित्तसे निवृत्त हो, हाथ जोडके कहे कि—अब में ऐसा पापकर्मको सेवन न करुंगा. हे भगवन्! इस प्रायश्चित्तकी यथायोग्य आलोचना दो. अर्थात् गुरु देवे उस प्रायश्चित्तको स्वीकार करे.

(३४) अगर अपने आचार्योपाध्याय उस समय हाजर न हो तो अपने संभोगी (एक मंडलमें भोजन करनेवाले) साधु जो बहुश्रुत—बहुत आगमोंके जानकार, उन्होंके समीप आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्तको स्वीकार करे.

(३५) अगर अपने संभोगी साधु न मिले तो अन्य संभोगवाले गीतार्थ—बहुत आगमोंके जानकार मुनि हो, उन्होंके पास आलोचना कर यावत् प्रायश्चित्तको स्वीकार करे.

(३६) अगर अन्य संभोगवाले उक्त मुनि न मिले, तो रुप साधु अर्थात् आचारादि क्रियामें शिथिल है, केवल रजोहरण, मुखवस्त्रिका साधुका रुप उन्होंके पास है, परन्तु बहुश्रुत-बहुत आगमोंका जानकार है, उन्होंके पास आलोचना यावत् प्रायश्चित्तको स्वीकार करे.

(३७) अगर रुपसाधु बहुश्रुत न मिले तो पीछे कृत श्रावक 'जो पहला दीक्षा लेके बहुश्रुत--बहुत आगमोंका जानकार हो फिर मोहनीय कर्म के उदयसे श्रावक हो गया हो.' उसके पास आलोचना कर यावत् प्रायश्चित स्वीकार करे.

(३८) अगर उक्त श्रावक भी न मिले तो-'समभावियाइं चेइयाइं' अर्थात् सुविहित आचार्योंकी करि हुइ प्रतिष्ठा ऐसी जिनेन्द्र देवोंकी प्रतिमाके आगे शुद्ध भावसे आलोचनाकर यावत् प्रायश्चित स्वीकार करे.*

---

* 'समभावियाइं चेइयाइं' का अर्थ—ढुंढीये लोग श्रावक तथा सम्यग्दृष्टि करते है. यह असत्य है. क्योंकि आलोचनामें गीतार्थोंकी आवश्यक्ता है. जिसमेंभी छेद सूत्रों का तो अवश्य जानकार होना चाहिये और जानकार श्रावकका पाठ तो पहले आ गया है. इस वास्ते पूर्व महर्षियोंने कीया वह ही अर्थ प्रमाण है.

(३९) अगर ऐसा मंदिरमूर्त्तिका भी जहांपर योग न हो, तो फिर ग्राम तथा नगर यावत् सन्निवेश के बाहार जहांपर कोइ सुननेवाला न हो, ऐसे स्थलमें जाके पूर्व तथा उत्तर दिशाके सन्मुख मुंह कर दोय हाथ जोड शिरपे चडाके ऐसा शब्द उच्चारण करना चाहिये-हे भगवन्! मैंने यह अकृत्य कार्य कीया है. हे भगवन्! मैं आपकी साक्षीसे अर्थात् आपके समीप आलोचना करता हुं. प्रतिक्रमण करता हुं. मेरी आत्माकी निंदा करता हुं. घृणा करता हुं. पापोंसे निवृत्ति करता हुं. आत्मा विशुद्ध करता हुं. आइंदासे ऐसा अकृत्य कार्य नहीं करुंगा ऐसा कहे. यथायोग स्वयं प्रायश्चित्त स्वीकार करना चाहिये.

भावार्थ—जो किंचित् ही पाप लगा हो, उसकी आलोचनाके लीये क्षणमात्र भी प्रमाद न करना चाहिये. न जाने आयुष्यका किस समय बन्ध पडता है. काल किस समय आता है. इस वास्ते आलोचना शीघ्रतापूर्वक करना चाहिये. परन्तु आलोचनाके सुननेवाला गीतार्थ, गंभीर, धैर्यवान् होना चाहिये. वास्ते शास्त्रकारोंने आलोचना करनेकी विधि बतलाइ है. इसी माफिक करना चाहिये. इति.

श्री व्यवहार सूत्र—प्रथम उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(२) दूसरा उद्देशा.

(१) दो स्वधर्मी साधु एकत्र हो विहार कर रहे है. उसमें एक साधुने अकृत्य कार्य अर्थात् किसी प्रकारका दोषको सेवन कीया है, तो उस दोषका यथायोग उस मुनिको प्रायश्चित्त देके

उस प्रायश्चितके तपकी अन्दर स्थापन करना चाहिये, और दुसरा मुनि उसको सहायता अर्थात् वैयावच्च करे.

(२) अगर दोनों मुनियोंको साथमें ही प्रायश्चित लगा हो, तो उस मुनियोंसे एक मुनि पहले तप करे. दुसरा मुनि उसको सहायता करे, जब उस मुनिका तप पूर्ण हो जाय, तब दुसरा मुनि तपश्चर्या करे और पहला मुनि उसको सहायता करे.

(३) एवं बहुतसे मुनि एकत्र हो विहार करे जिसमें एक मुनिको दोष लगा हो, तो उसे आलोचना दे तप कराना. दुसरा मुनि उसको सहायता करें.

(४) एवं बहुतसे, मुनियोंको एक साथमें दोष लगा हो. जैसे शय्यातरका आहार भूलमें आ गया. सर्व साधुवोंने भोगव भी लीया. बादमें खबर हुइ कि इस आहारमें शय्यातरका आहार सामेल था, तो सर्व साधुवोंको प्रायश्चित्त होता है. उसमें एक साधुको वैयावच्चके लीये रखे और शेष सर्व साधु उस प्रायश्चितका तप करे. उन्होंका तप पूर्ण होनेपर एक साधु रहा था. वह तप करे और दुसरे साधु उसकी सहायता करे. अगर अधिक साधुवोंकी आवश्यक्ता हो तो अधिकको भी रख सकते है.

भावार्थ - प्रायश्चित सहित आयुष्य बंध करके काल करनेसे जीव विराधक होता है. वास्ते लगे हुवे पापकी आलोचना कर उसका तप ही शीघ्र कर लेना चाहिये. जिससे जीव आराधक हो पारंगत हो जाता है.

(५) प्रतिहार कल्प साधु—जो पहला प्रायश्चित्त सेवन कीया था, वह साधु तपश्चर्या करता हुवा अकृत्य स्थानको और सेवन कीया, उसकी आलोचना करनेपर आचार्य महाराज उसकी

शक्तिको देख तप प्रायश्चित्त देवे. अगर वह साधु तकलीफ पाता हो तो उसकी वैयावच्चमें एक दुसरे साधुको रखे अगर वह साधु दुसरे साधुवोंसे वैयावच्चही करावे और अपना प्रायश्चित्तका तपभी न करे तो वह साधु दुतरफी प्रायश्चित्तका अधिकारी बनता है.

(६) प्रायश्चित्त तप करता हुवा साधु ग्लानपनेको प्राप्त हुवा 'गणविच्छेदक' के पास आवे तो गणविच्छेदकको नहीं कल्पै कि उस ग्लान साधुको निकाल देना कि तिरस्कार करना. गणविच्छेदक का फर्ज है कि उस ग्लान मुनिकी अग्लानपणे वैयावच्च करावे. जहांतक वह रोगमुक्त न हो, वहांतक, फिर रोगमुक्त हो जानेपर व्यवहार शुद्धि निमित्त सदोष साधुकी वैयावच्च करनेवाले मुनिको स्तोक—नाम मात्र प्रायश्चित्त देवे.

(७) अणुठुप्पा पायश्चित्त (तीन कारणोंसे यह प्रायश्चित्त होता है, देखो, बृहत्कल्पसूत्रमें) वहता हुवा साधु ग्लानपनेको प्राप्त हुवा हो, वह साधु गणविच्छेदकके पास आवे तो गणविच्छेदकको नहीं कल्पै, उसको गणसे निकाल देना या उसका तिरस्कार करना. गणविच्छेदककी फर्ज है कि उस मुनिकी अग्लानपणे वैयावच्च करावे. जहांतक उस मुनिका शरीर रोगरहित न हो वहांतक. फिर रोग रहित हो जाने के बाद जो मुनि वैयावच्च करी थी, उसको नाम मात्र स्तोक प्रायश्चित्त देना. कारण—वह रोगी साधु प्रायश्चित्त वह रहा था. जैन शासनकी बलिहारी है कि आप प्रायश्चित्त भी ग्रहन करे, परन्तु परोपकारके लीये उस ग्लान साधुकी वैयावच्च कर उसे समाधि उपजावे.

(८) एवं पारंचिय प्रायश्चित्त वहता हुवा (दशवा प्रायश्चित्त)

(९) 'खित्तचित्त' किसी प्रकारकी वायुके प्रयोगसे विक्षिप्त—विकल चित्त हुवा साधु ग्लान हो, उसको गच्छ बहार

करना गणविच्छेककको नहीं कल्पै. किन्तु उस मुनिकी अम्लानपणे वैयावच्च करना कल्पै. जहांतक वह मुनिका शरीर रोग रहित न हो, वहांतक. यावत् पूर्ववत्.

(१०) 'दित्तचित्त' कन्दर्पादि कारणोंसे दिप्तचित्त होता है.

(११) ' जक्खाइठ्ठं ' यक्ष भूतादिके कारणसे ,, ,,

(१२) ' उमायपत्तं ' उन्मादको प्राप्त हुवा.

(१३) ' उवसग्गं ' उपसर्गको प्राप्त हुवा.

(१४) ' साधिकरण ' किसीके साथ क्रोधादि होनेसे.

(१५) ' सप्रायश्चित्त ' किसी कारणसे अधिक प्रायश्चित्त आने पर.

(१६) भात पाणीका परित्याग (संथारा) करने पर.

(१७) 'अर्थजात' किसी प्रकारकी तीव्र अभिलाष हो, तथा अर्थ याने द्रव्यादि देखनेसे अभिलाषा वशात्.

उपर लिखे कारणोंसे साधु अपना स्वरुप भूल बेभान हो जाता है, ग्लान हो जाता है, उस समय गणविच्छेदकको, उस मुनिको गण बाहार कर देना या तिरस्कार करना नहीं कल्पै. किन्तु उस मुनिकी वैयावच्च करना कराना कल्पै. कारण— ऐसी हालतमें उस मुनिको गच्छ बाहार निकाल दीया जाय तो शासनकी लघुता होती है. मुनियोंमें निर्दयता और अन्य लोगोंका शासन-गच्छमें दीक्षा लेनेका अभाव ही होता है. तथा संयमी जीवोंको सहायता देना महान् लाभका कारण है. वास्ते गणविच्छेदकको चाहिये कि उस मुनिका शरीर जहांतक रोग मुक्त न हो वहांतक वैयावच्च करे. फिर उस मुनिका शरीर रोगमुक्त हो जाय तब वैयावच्च करनेवाले

मुनिको व्यवहार शुद्धिके निमित्त नाम मात्र प्रायश्चित्त देवे. कारण-वह ग्लान साधु उस समय दोषित है, परन्तु वैयावच्च करनेवाला उत्कृष्ट परिणामसे तीर्थंकर गोत्र बांध सकता है.

(१८) नौवा प्रायश्चित सेवन करनेवालेको अगृहस्थपणे दीक्षा देना नहीं कल्पै गणविच्छेदकको.

(१९) नौवा अनवस्थित नामका प्रायश्चित कोइ साधु सेवन कीया हो, उसको फिरसे गृहस्थलिंग धारण करवाके ही दीक्षा देना गणविच्छेदकको कल्पै.

(२०) दशवा प्रायश्चित करनेवालेको अगृहस्थपणे दीक्षा देना नहीं कल्पै गणविच्छेदकको.

(२१) दशवा पारंचित नामका प्रायश्चित किसी साधुने सेवन कीया हो, उसको फिरसे गृहस्थलिंग धारण करवाके ही दीक्षा देना गणविच्छेदकको कल्पै.

(२२) नौवां अनवस्थित तथा दशवां पारंचित नामका प्रायश्चित किसी साधुने सेवन कीया हो, उसे गृहस्थलिंग करवाके तथा अगृहस्थ (साधु) लिंगसे ही दीक्षा देना कल्पै.

भावार्थ—नौवां दशवां प्रायश्चित (बृहत्कल्पमें देखो) यह एक लौकिक प्रसिद्ध प्रायश्चित है. इस वास्ते जनसमूहको शासनकी प्रतीतिके लीये तथा दुसरे साधुवोंका क्षोभके लीये उसे प्रसिद्धिमें ही गृहस्थलिंग करवाके फिरसे नवी दीक्षा देना कल्पै. अगर कोइ आचार्यादि महान् अतिशय धारक हो, जिसकी विशाल समुदाय हो, अगर कोइ भवितव्यताके कारण अैसा दोष सेवन कीया हो, वह बात गुप्तपणे हो तो उसको प्रायश्चित अन्दर ही देना चाहिये. तात्पर्य-गुप्त प्रायश्चित्त हो, तो आलोचना भी गुप्त देना. और प्रसिद्ध प्रायश्चित्त हो तो आलोचना भी प्रसिद्ध देना परन्तु आलो-

चना विना आराधक नहीं होता है. जैसे गच्छको और संघको प्रतीतिका कारन हो, अैसा करना चाहिये.

(२३) दो साधु सदृश समाचारीवाले साथमें विचरते हैं. किसी कारणसे एक साधु दुसरे साधुपर अभ्याख्यान (कलंक) देनेके इरादेसे आचार्यादिके पास जाके अर्ज करे कि-हे भगवन्, मैंने अमुक साधुके साथ अमुक अकृत्य काम कीया है. इसपर जिस साधुका नाम लीया, उस साधुको आचार्य बुलवाके हित-बुद्धि और मधुरतासे पुछे—अगर वह साधु स्वीकार करे, तो उसको प्रायश्चित्त देवे, अगर वह साधु कहे कि-मैंने यह अकृत्य कार्य नहीं कीया है. तो कलंकदाता मुनिको उसका प्रमाण पुरःसर पुछे, अगर वह साबुती पुरी न दे सके, तो जितना प्रायश्चित उस मुनिको आता था, उतना ही प्रायश्चित्त उस कलंकदाता मुनिको देना चाहिये. अगर आचार्य उस बातका पूर्ण निर्णय न कर, राग द्वेषके वश हो अप्रतिसेवीको प्रतिसेवी बनाके प्रायश्चित्त देवे तो उतना ही प्रायश्चित्तका भागी प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य होता है.

भावार्थ—संयम है सो आत्माकी साक्षीसे पलता है. और सत्य प्रतिज्ञा अैसा व्यवहार है. अगर विगर साबुती किसीपर आक्षेप कायम कर दिया जायगा, तो फिर हरेक मुनि हरेकपर आक्षेप करते रहेगा, तो गच्छ और शासनकी मर्यादा रहना असंभव होगा. वास्ते बात करनेवाले मुनिको प्रथम पूर्ण साबुती या जांच कर लेना चाहिये.

(२४) किसी मुनिको मोहकर्मका प्रबल उदय होनेसे काम-पीडित हो, गच्छको छोडके संसारमें जाना प्रारंभ कीया, जाते हुवेका परिणाम हुवा कि—अहो ! मैंने अकृत्य कीया, पाया हुवा चारित्र चिंतामणिको छोड काचका कटका ग्रहन करनेकी अभि-लाषा करता हुं. ऐसे विचारसे वह साधु फिरसे उसी गच्छमें

आनेकी इच्छा करे, अगर उस समय अन्य साधु शंका करे कि-इसने दोष सेवन कीया होगा या नहीं ? उन्होंकी प्रतीतिके लीये आचार्यमहाराज उसकी जांच करे. प्रथम उस साधुको पूछे. अगर वह साधु कहे कि—मेंने अमुक दोष सेवन कीया है. तो उसको यथायोग्य प्रायश्चित्त देना. अगर साधु कहे कि—मेंने कुच्छ भी दोष सेवन नहीं कीया है, तो उसकी सत्यतापर ही आधार रखे. कारण प्रायश्चित्त आदि व्यवहारसे ही दीया जाता है.

भावार्थ—अगर आचार्यादिको अधिक शंका हो तो जहां पर वह साधु गया हो, वहांपर तलास करा लि जावे. भगवती सूत्र ८-६ मनकी आलोचना मनसे भी शुद्ध हो सकती हे.

(२५) एक पक्षवाले साधुको स्वल्पकालके लीये आचार्योपाध्यायकी पद्वी देना कल्पै. परन्तु गच्छवासी निर्ग्रथोंको उसकी प्रतीति होनी चाहिये.

भावार्थ—जिन्होंको रागद्वेषका पक्ष नहीं है. अथवा एक गच्छमें गुरुकुलवासको चिरकाल सेवन कीया हो. प्रायः गुरुकुलवास सेवन करनेवालेमें अनेक गुण होते है. नये पुराणे आचार व्यवहार, साधु आदिके जानकार होते है, गच्छमर्यादा चलानेमें कुशल होते है, उन्होंको आचार्यकी मौजुदगीमें पद्वी दी जाती है. अगर आचार्य कभी कालधर्म पाया हो, तो भी उन्होंके पीछे पद्वीका झघडा न हो, साधु सनाथ रहै. स्वल्पकालकी पद्वी देनेका कारण यह है कि—अगर दुसरा कोइ योग्य हो तो वह पद्वी उन्होंको भी दे सकते है. अगर दुसरा पद्वीके योग्य न हो तो, चिरकालके लीये ही उसी पद्वीको रख सकते है.

(२६) जो कोइ मुनि परिहार तप कर रहे है, और कितनेक अपरिहारिक साधु एकत्र निवास करते है. उन्होंको एक

मंडलपर संविभागके साथ भोजन करना नहीं कल्पै. कहांतक? कि जो एक मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, च्यार मासिक, पांच मासिक, छे मासिक, जितना तप कीया हो, उतने मास और प्रत्येक मासके पीछे पांच पांच दिन. एवं छे मासके तपवालेके साथ तपके सिवाय एक मास साथमें भोजन नहीं करे. कारण-तपस्याके पारणेवालोंको शाताकारी आहार देना चाहिये. वास्ते एकत्र भोजन नहीं करे. बादमें सर्व साधु संविभाग संयुक्त सामेल आहार करे.

(२७) परिहार तप करनेवाले मुनिके पारणादिमें अशनादि च्यार आहार वह स्वयं ही ले आते है. दुसरे साधुको देना दिलाना नहीं कल्पै. अगर आचार्यमहाराज विशेष कारण जानके आज्ञा दे तो अशनादि आहार देना दिलाना कल्पै. इसी माफिक घृतादि विगइ भी समझना.

(२८) किसी स्थविर महाराजकी वैयावच्चमें कोइ परिहारिक तप करनेवाला साधु रहेता है, तो उस परिहारिक तपस्वीके पात्रमें लाया हुवा आहार स्थविरोंके काममें नहीं आवे. अगर स्थविर महाराज किसी विशेष कारणसे आज्ञा दे दे कि-हे आर्य! तुम तुमारे गौचरी जाते हो तो हमारे भी इतना आहार ले आना. तो भी उस परिहारिक साधुके पात्रमें भोजन न करे. आहार लानेके बादमें आचार्य अपने पात्रमें तथा अपने कमंडलमें पाणी लेके काममें लेवे (भोगवे).

(२९) इसी माफिक परिहारिक साधु स्थविरोंके लीये गौचरी जा रहा है. उस समय विशेष कारण जान स्थविर कहे कि—हे आर्य! तुम हमारे लीये भी अशनादि लेते आना. आहारादि लानेके बाद अपने अपने पात्रमें आहार, कमंडलमें पाणी ले लेवे. फिर पूर्वकी माफिक आहारादि भोगवे.

भावार्थ—प्रायश्चित्त लेके तप कर रहा है. इसी वास्ते वह साधु शुद्ध है. वास्ते उसने लाया हुवा अशनादि स्थविर भोगव सके. परन्तु अबी तक तपको पूर्ण नहीं कीया है. वास्ते उस साधुके पात्रादिमें भोजन न करें. उससे उस साधुको क्षोभ रहेता है. तपको पूर्णतासे पार पहुंचा सकते हैं. इति.

श्री व्यवहार सूत्र—दूसरा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(३) तीसरा उद्देशा.

(१) साधु इच्छा करे कि मैं गणको धारण करुं. अर्थात् शिष्यादि परिवारको ले आगेवान हो के विचरुं. परन्तु आचारांग और निशीथसूत्रके जानकार नहीं है. उन साधुको नहीं कल्पै गणको धारण करना.

(२) अगर आचारांग और निशीथसूत्रका ज्ञाता हो, उस साधुको गण धारण करना कल्पै.

भावार्थ—आगेवान हो विचरनेवाले साधुवोंको आचारांग-सूत्रका ज्ञाता अवश्य होना चाहिये, कारण-साधुवोंका आचार, गोचार, विनय, वैयावच्च, भाषा आदि मुनि मार्गका आचारांग-सूत्रमें प्रतिपादन कीया हुवा है. अगर उस आचारसे स्खलना हो जावे, अर्थात् दोष लग भी जावे तो उसका प्रायश्चित निशीथ सूत्रमें है. वास्ते उक्त दोनों सूत्रोंका जानकार हो, उस मुनिको ही आगेवान होके विहार करना कल्पै.

(३) आगेवान हो विहार करनेकी इच्छावाले मुनियोंको पेस्तर स्थविर (आचार्य) महाराजसे पूछना इसपर आचार्य महाराज योग्य जानके आज्ञा दे तो कल्पै.

(४) अगर आज्ञा नहीं देवे तो उस मुनिको आगेवन होके विचरना नही कल्पै. जो विना आज्ञा गणधारण करे, आगेवान हो विचरे, उस मुनिको, जितने दिन आज्ञा बाहार रहै, उतने दिनका छेद तथा तप प्रायश्चित होता है और जो उन्होंके साथ रहनेवाले साधु है, उसको प्रायश्चित्त नही है. कारण वह उस अग्रेश्वर साधु के कहनेसे रहे थे।

(५) तीन वर्षकी दीक्षा पर्यायवाले साधु आचारमें, संयममें, प्रवचनमें, प्रज्ञामें, संग्रह करनेमें, अवग्रह लेनेमें कुशल—होशीयार हो, जिसका चारित्र खंडित न हुवा हो. संयममें सबला दोष नहीं लगा हो, आचार भेदित न हुवा हो, कषाय कर चारित्र संक्लिष्ट नहीं हुवा हो, बहु श्रुत, बहुत आगम तथा विद्याओंके जानकार हो, कमसे कम आचारांग सूत्र, निशीथ सूत्र के अथ--परमार्थका जानकार हो, उस मुनिको उपाध्याय पद देना कल्पै.

(६) इससे विपरीत जो आचारमें अकुशल यावत् अल्प सूत्र अर्थात् आचारांग, निशीथका अज्ञातको उपाध्यायपद देना नहीं कल्पै.

(७) पांच वर्षोंकी दीक्षा पर्यायवाला साधु आचारमें कुशल यावत् बहुश्रुत हो, कमसे कम दशाश्रुतस्कन्ध, व्यवहार, बृहत्कल्प सूत्रोंके जानकार हो, उस मुनिको आचार्य, उपाध्यायकी पद्वी देना कल्पै

(८) इससे विपरीत हो, उसे आचार्य उपाध्यायकी पद्वी देना नहीं कल्पै.

(९) आठ वर्षोंकी दीक्षा पर्यायवाले मुनि आचार कुशल यावत् बहुश्रुत--बहुत आगमों विद्याओंके जानकार कमसे कम स्थानांग, समवायांग सूत्रोंका जानकार हो, उस महात्मावोंको

आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्त्तक, स्थविर, गणि, गणविच्छेदक, पद्वी देना कल्पै. और उस मुनिको उक्त पद्वी लेना भी कल्पै.

(१०) इससे विपरीत हो तो न संघको पद्वी देना कल्पै, न उस मुनिको पद्वी लेना कल्पै. कारण-पद्वीधरोंके लीये प्रथम इतनी योग्यता प्राप्त करनी चाहिये. जो उपर लिखी हुइ है.

(११) एक दिनके दिक्षितको भी आचार्यपद्वी देना कल्पै.

भावार्थ—किसी गच्छके आचार्य कालधर्म प्राप्त हुवे, उस गच्छमें साधु संप्रदाय विशाल है, किन्तु पीछे ऐसा कोइ योग्य साधु नहीं है कि जिसको आचार्यपद पर स्थापन कर अपना निर्वाह कर सके. उस समय अच्छा, उच्च, कुलीन जिस कुलकी अन्दर बडी उदारता है, विश्वासकारी उच्च कार्य कीया हुवा है, संसारमें अपने विशाल कुटुम्बका हितपूर्वक निर्वाह कीया हो, लोकमें पूर्ण प्रतीत हो-इत्यादि उत्तम गुणोंवाले कुलका योग्य पुरुष दीक्षा ली हो, ऐसा एक दिनकी दीक्षावालेको आचार्यपद देना कल्पै.

(१२) वर्ष पर्याय धारक मुनिको आचार्य उपाध्यायकी पद्वी देना कल्पै.

भावार्थ—कोइ गच्छमें आचार्योपाध्याय कालधर्म प्राप्त हो गये हो और चिरदिक्षित आचार्योपाध्यायका योग न हो, उस हालतमें पूर्वोक्त जातिवान्, कुलवान्, गच्छ निर्वाह करने योग्य अचिरकाल दीक्षित है, उसको भी आचार्योपाध्याय पद्वी देनी कल्पै. परन्तु वह मुनि आचारांग निशीथका जानकार न हो तो उसे कह देना चाहिये कि-आप पेस्तर आचारांग निशीथका अभ्यास करो. इसपर वह मुनि अभ्यास कर आचारांग निशीथ सूत्र पढ ले, तो उसे आचार्योपाध्याय पद्वी देना कल्पै. अगर

आचारांग निशीथ सूत्रका अभ्यास न करे, तो पद्वी देना नहीं कल्पै. कारण–साधुवर्गका खास आधार आचारांग और निशीथ-सूत्र परही है.

(१३) जिस गच्छमें नवयुवक तरुण साधुवोंका समूह है, उस गच्छके आचार्योपाध्याय कालधर्म प्राप्त हो जावे तो उस मुनियोंको आचार्योपाध्याय विना रहेना नहीं कल्पै. उस मुनियोंको चाहिये कि शीघ्रतासे प्रथम आचार्य, फिर उपाध्यायपद पर स्थापन कर, उन्ही की आज्ञामें प्रवृत्ति करना चाहिये. कारण-आचार्योपाध्याय विना साधुवोंका निर्वाह होना असंभव है.

(१४) जिस गच्छमें नव युवक तरुण साध्वीयां है. उन्होंके आचार्य, उपाध्याय और प्रवर्तिनी कालधर्म प्राप्त हो गये हो, तो उन्होंको पहले आचार्यपद, पीछे उपाध्यायपद और पीछे प्रवर्तिनीपद स्थापन करना चाहिये. भावना पूर्ववत्

(१५) साधु गच्छमें (साधुवेषमें) रह कर मैथुनको सेवन कीया हो, उस साधुको जावजीवतक आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, प्रवर्तक, गणी, गणधर, गणविच्छेदक, इस पद्वीयोंमेंसे किसी प्रकारकी पद्वी देना नहीं कल्पै, और उस साधुको लेना भी नहीं कल्पै जिसको शासनका, गच्छका और वेषकी मर्यादाका भी भय नहीं है, तो वह पद्वीधर हो के शासनका और गच्छका क्या निर्वाह कर सके ?

(१६) कोइ साधु प्रबल मोहनीयकर्मसे पीडित होनेपर गच्छ संप्रदायको छोडके मैथुन सेवन कीया हो, फीर मोहनीयकर्म उपशांत होनेसे उसी गच्छमें फिरसे दीक्षा लेवे, अर्थात् दीक्षा देनेवाला उसे दीक्षायोग्य जाने तो दे; उस साधुको तीन वर्षतक पूर्वोक्त सात पद्वीसे किसी प्रकारकी पद्वी देना नहीं कल्पै,

और न तो उस साधुको पद्वी धारण करना कल्पै. अगर तीन वर्ष अतिक्रमके बाद चतुर्थ वर्षमें प्रवेश किया हो, वह साधु कामविकारसे बिलकुल उपशांत हुवा हो, निवृत्ति पाइ हो, इंद्रियों शांत हो, तो पूर्वोक्त सात पद्वीमेंसे किसी प्रकारकी पद्वी देना और उस मुनिको पद्वी लेना कल्पै.

भावार्थ—भवितव्यताके योगसे किसी गातार्थको कर्मोदय के कारणसे विकार हो, तो भी उसके दिलमें शासन वसा हुवा है कि वह गच्छ, वेष छोडके अकृत्य कार्य किया है, और काम उपशांत होनेसे अपना आत्मस्वरुप समझ दीक्षा ली है. ऐसेको पद्वी दी जावे तो शासनप्रभावनापूर्वक गच्छका निर्वाह कर सकेगा.

(१७) इसी माफिक गण विच्छेदक.

(१८) एवं आचार्योपाध्याय.

भावार्थ—अपने पदमें रहके अकृत्य कार्य करे, उसे जावजीव किसी प्रकारकी पद्वी देना और उन्होंको पद्वी लेना नहीं कल्पै. अगर अपने पदको, वेषको छोड पूर्वोक्त तीन वर्षोंके बाद योग्य जाने तो पद्वी देना और उन्होंको लेना कल्पै. भावनापूर्ववत्.

(१९) साधु अपने वेषको विना छोडे और देशांतर विना गये अकृत्य कार्य करे, तो उस साधुको जावजीवतक सात पद्वीमेंसे कोइभी पद्वी देना नहीं कल्पै.

भावार्थ - जिस देश, ग्राममें वेषका त्याग कीया है, उसी देश, ग्रामादिमें अकृत्य कार्य करनेसे शासनकी लघुता करनेवाला होता है. वास्ते उसे किसी प्रकारकी पद्वी देना नही कल्पै. अगर किसी साधुको भोगावली कर्मोदयसे उन्माद प्राप्ति हो भी जावे, परन्तु उसके हृदयमें शासन वस रहा है. वह अपना वेशका त्याग कर, देशान्तर जा, अपनी कामाग्निको शांत कर, फिर

आत्मभावना वृत्तिसे पुनः उसी गच्छमें दीक्षा ले, बादमें तीन वर्ष हो जावे, काम विकारसे पूर्ण निवृत्त हो जाय, उपशान्त हो, इंद्रियों शांत हो, उसको योग्य जाने तो सात पद्वीमेंसे किसी प्रकारकी पद्वी देना कल्पै. भावना पूर्ववत्.

(२०) एवं गणविछेदक.

(२१) एवं आचार्योपाध्यायभी समझना.

(२२) साधु बहुश्रुत (पूर्वांगके जान) बहुत आगम, विद्याके जानकार, अगर कोइ जबर कारण होनेपर मायासंयुक्त मृषावाद—उत्सूत्र बोलके अपनी उपजीविका करनेवाला हो, उसे जावजीव तक सात पद्वीमेंसे किसी प्रकारकी पद्वी देना नहीं कल्पै.

भावार्थ—असत्य बोलनेवालोंकी किसी प्रकारसे प्रतीति नहीं रहती है. उत्सूत्र बोलनेवाला शासनका घाती कहा जाता है. सभीका पत्ता मिलता है, परन्तु असत्यवादीयोंका पत्ता नहीं मिलता है. वास्ते असत्य बोलनेवाला पद्वीके अयोग्य है.

(२३) एवं गणविच्छेदक.

(२४) एवं आचार्य.

(२५) एवं उपाध्याय.

(२६) बहुतसे साधु एकत्र हो सबके सब उत्सूत्रादि असत्य बोले.

(२७) एवं बहुतसे गण विच्छेदक.

(२८) एवं बहुतसे आचार्य.

(२९) एवं बहुतसे उपाध्याय.

(३०) एवं बहुतसे साधु, बहुतसे गणविच्छेदक, बहुतसे आचार्य, बहुतसे उपाध्याय एकत्र हुवे, माया संयुक्त मृषावाद

बोले, उत्सूत्र बोले, आगम विरुद्ध आचरण करे—इत्यादि असत्य बोले तो सबके सबको जावजीवतक सात प्रकारमेंसे कोइभी पद्वी देना नहीं कल्पै. अर्थात् सबके सब पद्वीके अयोग्य है. इति.

श्री व्यवहारसूत्र—तीसरा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(४) चौथा उद्देशा.

(१) आचार्योपाध्यायजीको शीतोष्ण कालमें अकेले विहार करना नहीं कल्पै.

(२) आचार्योपाध्यायजीको शीतोष्ण कालमें आप सहित दो ठाणेसे विहार करना कल्पै. अधिक सामग्री न हो, तो उतने रहै, परन्तु कमसे कम दो ठाणे तो होनाही चाहिये.

(३) गणविच्छेदकको शीतोष्ण कालमें आप सहित दो ठाणे विहार करना नहीं कल्पै.

(४) आप सहित तीन ठाणेसे कल्पै. भावना पूर्ववत्.

(५) आचार्योपाध्यायको आप सहित दो ठाणे चातुर्मास करना नहीं कल्पै.

(६) आप सहित तीन ठाणे चातुर्मास करना कल्पै. भावना पूर्ववत्.

(७) गणविच्छेदकको आप सहित तीन ठाणे चातुर्मास करणा नहीं कल्पै.

(८) आप सहित च्यार ठाणे चातुर्मास रहना कल्पै.

भावार्थ—कमसे कम रहे तो यह कल्प है. आचार्योपाध्यायसे एक साधु गणविच्छेदकको अधिक रखना चाहिये. कारण—

दुसरे साधुवोंके कारण हो तो आचार्य इच्छा हो तो वैयावच्च करें करावें; परन्तु गणविच्छेदकको तो अवश्य वैयावच्च करना ही पडता है. वास्ते एक साधु अधिक रखना ही चाहिये.

(९) ग्राम-नगर यावत् राजधानी बहुतसे आचार्योपाध्याय, आप सहित दो ठाणे, बहुतसे गणविच्छेदक आप सहित तीन ठाणे शीतोष्णकालमें विहार करना कल्पै.

(१०) और आप सहित तीन ठाणे आचार्योपाध्याय, आप सहित च्यार ठाणे गणविच्छेदकको चातुर्मास रहना कल्पै. परन्तु साधु अपनी अपनी निश्रा कर रहना चाहिये. कारण—कभी अलग अलग जानेका काम पडे तो भी नियत कीये हुवे साधुवोंको साथ ले विहार कर सके. भावना पूर्ववत्.

(११) आचारांग और निशीथसूत्रके जानकार साधुको आगेवान करके उन्होंके साथ अन्य साधु विहार कर रहे थे. कदाचित् वह आगेवान साधु कालधर्मको प्राप्त हो गया हो, तो शेष रहे हुवे साधुवोंकी अन्दर अगर आचारांग और निशीथसूत्रका जानकार साधु हो तो उसे आगेवान कर, सब साधु उन्होंकी आज्ञामें विचरना. अगर ऐसा न हो, अर्थात् सब साधु आचारांग और निशीथसूत्रके अपठित हो तो सब साधुवोंको प्रतिज्ञापूर्वक वहांसे विहार कर जिस दिशामें अपने स्वधर्मी साधु विचरते हो, उसी दिशामें एक रात्रि विहार प्रतिमा ग्रहन कर, उस स्वधर्मीयोंके पास आ जाना चाहिये. रहस्तेमें उपकार निमित्त नहीं ठहरना. अगर शरीरमें कारण हो तो ठेर सके. कारण—निवृत्ति होनेके बाद पूर्वस्थित साधु कहे—हे आर्य! एक दोय रात्रि और ठहरो कि तुमारे रोगनिवृत्तिकी पूर्ण खातरी हो. ऐसा मौकापर एक दोय रात्रि ठहरना भी कल्पै. एक दोय

रात्रिसे अधिक नहीं रहना. अगर रोगचिकित्सा होनेपर एक दोय रात्रिसे अधिक ठहरे, तो जितना दिन ठहरे, उतना ही दिनोंका छेद तथा तप प्रायश्चित्त होता है.

भावार्थ—आचारांग और निशीथसूत्रके जानकार हो वह मुनि ही मुनिमार्गको ठीक तौरपर चला सकता है. अपठितोंके लीये रहस्तेमें एक दोय रात्रिसे अधिक ठहरना भी शास्त्रकारोंने बिलकुल मना कीया है. कारण—लाभके बदले बडा भारी नुकशान उठाना पडता है. चारित्र तो क्या परन्तु कभी कभी सम्यक्त्व रत्न ही खो बेठना पडता है. वास्ते आचारांग और निशीथके अपठित साधुवोंको आगेवान होके विहार करनेकी साफ मनाइ है.

(१२) इसी माफिक चातुर्मास रहे हुवे साधुवोंके आगेवान मुनि काल करनेपर दुसरा आचारांग-निशीथके जानकार हो तो उसकी निश्राय रहना. अगर ऐसा न हो तो चातुर्मासमें भी विहार कर, अन्य साधु जो आचारांग-निशीथका जानकार हो, उन्होंके पास आ जाना चाहिये. परन्तु एक दोय रात्रिसे अधिक अपठित साधुवोंको रहनेकी आज्ञा नहीं है. स्वेच्छासे रह भी जावे, तो जितने दिन रहे, उतने दिनका छेद तथा तपप्रायश्चित्त होता है. भावना पूर्ववत्.

(१३) आचार्योपाध्याय अन्त समय पीछले साधुवोंको कहे कि—हे आर्य ! मेरा मृत्युके बाद आचार्यपदवी अमुक साधुको दे देना. ऐसा कहके आचार्य कालधर्म प्राप्त हो गये. पीछेसे साधु (संघ) उस साधुको आचार्योपाध्याय पद्वीके योग्य जाने तो उसे आचार्योपाध्याय पद्वी दे देवे, अगर वह साधु पद्वीके योग्य नहीं है, (आचार्य रागभावसे ही कह गये हो.) अगर गच्छमें

दुसरा साधु पद्वी योग्य हो तो उस योग्य साधुको पद्वी देवे. अगर दुसरा साधु भी योग्य न हो, तो मूल जो आचार्य कह गये थे, उसी साधुको पद्वी दे देवे. परन्तु उस साधुसे इतना करार करना चाहिये कि—अभी गच्छमें कोइ दुसरा पद्वी योग्य साधु नहीं है, वहांतक तुमको यह पदवी दी जाती है. फिर पद्वी योग्य साधु निकल आवेगा, उस समय आपको पदवी छोडनी पडेगी-इस सरतसे पद्वी दे देवे. बादमें कोइ पद्वीयोग्य साधु हो तो, संघ एकत्र हो मूल साधुको कहे कि—हे आर्य! अब हमारे पास पद्वीयोग्य साधु है. वास्ते आप अपनी पद्वीको छोड दें. इतना कहने पर वह साधु पद्वी छोड दे तो उसको किसी प्रकारका छेद तथा तप प्रायश्चित्त नहीं है. अगर आप उस पद्वीको न छोडे, तो जितना दिन पद्वी रखे, उतना दिनका छेद तथा तप प्रायश्चित्तका भागी होता है. तथा उस पद्वी छोडानेका प्रयत्न साधु संघ न करे तो सबके सब संघ प्रायश्चित्तका भागी होता है.

भावार्थ—गच्छपति योग्य अतिशयवान् होता है. वह अपने शासन तथा गच्छका निर्वाह करता हुवा शासनोन्नति कर सकता है. वास्ते पद्वी योग्य महात्मावोंको ही देना चाहिये, अयोग्य को पद्वी देनेकी साफ मनाइ है.

(१४) इसी माफिक आचार्योपाध्याय प्रबल मोहकर्मोदयसे विकार अर्थात् कामदेवको जीत न सके, शेष भोगावलिकर्म भोगवने के लीये गच्छका परित्याग करते समय कहे कि-मेरी पद्वी अमुक साधुको देना. वह योग्य हो तो उसको ही देना, अगर पद्वीके योग्य न हो, तो दुसरा साधु पद्वीके योग्य हो, उसे पद्वी देना. अगर दुसरा साधु योग्य न हो, तो मूल जिस साधुका नाम आचार्यने कहा था, उसे पर्वोक्त सरत कर पद्वी देना, फिर दुसरा

योग्य साधु होने पर उसकी पदवी ले लेना चाहिये. माँगनेपर पद्वी छोड दे तो प्रायश्चित्त नहीं है. अगर न छोडे तथा छोडाने के लीये साधु संघ प्रयत्न न करे, तो सबको तथा प्रकारका छेद और तप प्रायश्चित्त होता है. भावना पूर्ववत्.

(१५) आचार्योपाध्याय किसी गृहस्थको दीक्षा दी है, उस साधुको वडी दीक्षा देनेका समय आनेपर आचार्य जानते हुवे च्यार पांच रात्रिसे अधिक न रखे. अगर कोइ राजा और प्रधान शेठ और गुमास्ता तथा पिता और पुत्र साथमें दीक्षा ली हो, राजा, शेठ, और पिता जो [1]वडी दीक्षा योग्य न हुवा हो और प्रधान, गुमास्ता, पुत्र वडीदीक्षा योग्य हो गये हो तो जबतक राजा, शेठ और पिता वडी दीक्षा योग्य नहो वहांतक प्रधान, गुमास्ता और पुत्रको आचार्य वडी दीक्षासे रोक सकते है. परन्तु ऐसा कारण न होनेपर उस लघु दीक्षावाला साधुको वडी दीक्षासे रोके तो रोकनेवाला आचार्य उतने दिनके तप तथा छेदके प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(१६) एवं अनजानते हुवे रोके.

(१७) एवं जानते अनजानते हुवे रोके, परन्तु यहां दश रात्रिसे ज्यादा रखनेसे प्रायश्चित्त होता है.

नोटः—अगर पिता, पुत्र और दुसराभी साथमें दीक्षा ली हो, पिता वडी दीक्षा योग्य न हुवा, परन्तु उसका पुत्र वडी दीक्षा योग्य हो गया है और साथमें दीक्षा लेनेवालाभी वडी दीक्षाके योग्य हो गया हे. अगर पिताके लीये पुत्रको रोक दीया

---

१ सात रात्रि, च्यार मास, छे मास—छोटी दीक्षाका तीन काल है. इतने समयमें प्रतिक्रमणसें **पंडिषण** नामका अध्ययन तथा दशवैकालिकका चतुर्थाध्ययन पढलेनेवालोंको वडी दीक्षा दी जाती है.

जाय, तो साथमें दुसरे दीक्षा लीथी, वह पुत्रसे दीक्षामें वृद्ध हो जावे. इस वास्ते आचार्य महाराज उस दीक्षित पिताको मधुर वचनोंसे समझावे—हे आर्य ! अगर तुमारे पुत्रको वडी दीक्षा आवेगा, तो उसका गौरव तुमारेही लीये होगा—इत्यादि समझायके पुत्रको वडी दीक्षा दे सक्के है.

(१८) कोइ मुनि ज्ञानाभ्यासके लीये स्वगच्छको छोड अन्य गच्छमें जावे. अन्य गच्छमें जो रत्नत्रयादिसे वृद्ध साधु है, वह सामान्य ज्ञानवाला है. और लघु साधु है, वह अच्छे गीतार्थ है. उन्होंके पास वह साधु ज्ञानाभ्यास कर रहा है उस समय कोइ अन्य साधर्मी साधु मिले, वह पूछते है कि—हे आर्य ! तुम किसके पास ज्ञानाभ्यास करते हो ? उत्तरमें अभ्यासी साधु रत्नत्रयादिसे वृद्ध साधुवोंका नाम बतलावे. तब पूछनेवाला कहे कि—इसे तो तुमारेही ज्ञान अच्छा है. तो तुम उन्होंके पास कैसे अभ्यास करते हो. तब अभ्यासक कहे कि—मैं ज्ञानाभ्यास तो अमुक मुनिके पास करता हुं, परन्तु जो महात्मा मुझे ज्ञान देता है, वह उन्ही रत्नत्रयादिसे वृद्धकी आज्ञासे देता है.

भावार्थ—वह निर्देशकोंका बहुमान करता हुवा अभ्यास करानेवाला महात्माकाभी विनय सहित बहुमान कीया है.

(१९) बहुतसे स्वधर्मी साधु एकत्र होके विचरनेकी इच्छा करे, परन्तु स्थविर महाराजको पूछे विना एकत्र हो विचरना नहीं कल्पै. अगर स्थविरोंकी आज्ञा विना एकत्र होके विचरे तो जितने दिन आज्ञा विना विचरे, उतने दिनोंका छेद तथा तप प्रायश्चित्त होता है.

भावार्थ—स्थविर लाभका कारण जाने तो आज्ञा दे, नहीं तो आज्ञा न देवे.

(२०) विना आज्ञा विहार करे, तो एक दोय तीन च्यार पांच रात्रिसे अपने स्थविरोंको देखके सत्यभावसे आलोचना—प्रतिक्रमण कर, यथायोग्य प्रायश्चित्तको स्वीकार कर पुनः स्थविरोंकी आज्ञामें रहे, किन्तु हाथकी रेखा सुके वहांतक भी आज्ञा बहार न रहै. आज्ञा है वही प्रधान धर्म है.

(२१) आज्ञा बहार विहार करतेको च्यार पांच रात्रिसे अधिक समय हो गया हो, बादमें स्थविरोंको देख सत्यभावसे आलोचना-प्रतिक्रमण कर, जो शास्त्र परिमाणसे स्थविरों तप, छेद, पुनः उत्थापन प्रायश्चित देवे, उसे सविनय स्वीकार करे. दुसरी दफे आज्ञा लेके विचरे. जो जो कार्य करना हो, वह सब स्थविरोंकी आज्ञासे ही करे, हाथकी रेखा सुके वहांतक भी आज्ञाके बहार नहीं रहै. तीसरा महाव्रतकी रक्षाके निमित्त स्थविरोंकी आज्ञाको यावत् काया कर स्पर्श करे. एवं.

(२२) (२३) दो अलापक विहारसे निवृत्ति होनेका है.

भावार्थ—इस च्यारों सूत्रोंमें स्थविरोंकी आज्ञाका प्रधानपणा बतलाया है. स्थविरोंकी आज्ञाका पालन करनेसे ही मुनियोंका तीसरा व्रत पालन हो सकता है.

(२४) दो स्वधर्मी साथमें विहार करते है. जिसमें एक शिष्य है, दुसरा रत्नत्रयादिसे गुरु है. शिष्यको श्रुतज्ञान तथा शिष्यादिका परिवार बहुत है, और गुरुको स्वल्प है. तदपि शिष्यको गुरुमहाराजका विनय वैयावच्चादि करना, आहार, पाणी, वस्त्र, पात्रादि अनुकूलतापूर्वक लाके देना कल्पै. गुरुकुल वास रह के उन्होंकी सेवा-भक्ति करना कल्पै. कारण—जो परिवार है, वह सब गुरुकृपाका ही फल है.

(२५) और जो शिष्यको श्रुतज्ञान तथा शिष्यादिका

परिवार स्वल्प है, और गुरुको बहुत परिवार है. परन्तु गुरुकी इच्छा हो तो शिष्यको देवे, इच्छा न हो तो न देवे, इच्छा हो तो पासमें रखे, इच्छा हो तो पासमें न रखे, इच्छा हो तो अशनादि देवे, इच्छा हो तो न भी देवे, वह सब गुरुमहाराजकी इच्छापर आधार है. परन्तु शिष्यको तो गुरुमहाराजका बहुमान विनय करना ही चाहिये.

(२६) दो स्वधर्मी साधु साथमें विहार करते हो, तो उसको बराबर होके रहना नहीं कल्पै. परन्तु एक गुरु दुसरा शिष्य होके रहना कल्पै. अर्थात् एक दुसरेको वृद्ध समझ उन्होंको वन्दन-नमस्कार, सेवा-भक्ति करते रहना चाहिये.

(२७) एवं दो गणविच्छेदक.

(२८) दो आचार्योपाध्याय.

(२९) बहुतसे साधु.

(३०) बहुतसे गणविच्छेदक.

(३१) बहुतसे आचार्योपाध्याय.

(३२) बहुतसे साधु, बहुतसे गणविच्छेदक, बहुतसे आचार्योपाध्याय, एकत्र होके रहते है. उन्होंको सबको बराबर होके रहना नहीं कल्पै. परन्तु उस सबोंकी अन्दर गुरु-लघु होना चाहिये. गुरुवोंके प्रति लघुवोंको साधु वन्दन नमस्कार, सेवा-भक्ति करते रहना चाहिये. जिससे शासनका प्रभाव और विनयमय धर्मका पालन हो सके. अर्थात् छोटा साधु बडे साधुवोंको, छोटा गणविच्छेदक बडे गणविच्छेदकको, छोटे आचार्योपाध्याय बडे आचार्योपाध्यायको वन्दन करे तथा क्रमसर जैसे जैसे दीक्षापर्याय हो, उसी माफिक वन्दन करते हुवेको शीतोष्णकालमें विहार करना कल्पै. इति.

श्री व्यवहारसूत्र—चतुर्थ उदेशाका संक्षिप्त सार.

(५) पांचवा उद्देशा.

(१) जैसे साधुवोंको आचार्य होते है, वैसे ही साध्वीयोंको आचार, गौचरमें प्रवृत्ति करानेवाली प्रवर्तिनीजी होती है. उस प्रवर्तणीजीको शीतोष्णकालमें आप सहित दो ठाणे विहार करना नहीं कल्पै.

(२) आप सहित तीन ठाणे विहार करना कल्पै.

(३) गणविच्छेदणी—एक संघाडेमें आगेवान होके विचरे, उसे गणविच्छेदणी कहते है. उसे आप सहित तीन ठाणे शीतोष्णकालमें विहार करना नहीं कल्पै.

(४) परन्तु आप सहित च्यार ठाणेसे विहार करना कल्पै.

(५) प्रवर्तणीको आप सहित तीन ठाणे चातुर्मास करना नहीं कल्पै.

(६) आप सहित च्यार ठाणे चातुर्मास करना कल्पै.

(७) गणविच्छेदणीको आप सहित च्यार ठाणे चातुर्मास करना नहीं कल्पै.

(८) आप सहित पांच ठाणे चातुर्मास करना कल्पै. भावना पूर्ववत्.

(९) ग्राम नगर यावत् राजधानी बहुतसी प्रवर्त्तणीयों आप सहित तीन ठाणे, बहुतसी गणविच्छेदणीयों आप सहित च्यार ठाणेसे शीतोष्ण कालमें विचरना कल्पै. और बहुतसी प्रवर्तणीयों आप सहित च्यार ठाणे. बहुतसी गणविच्छेदणीयों आप सहित पांच ठाणे चातुर्मास करना कल्पै.

(१०) एक दुसरेकी निश्रामें रहैं.

(११) जो साध्वी आचारांग और निशीथ सूत्रकी जानकार अन्य साध्वीयोंको ले अग्रेसर विहार करती हो, कदाचित् वह आगेवान साध्वी काल कर जावे, तो शेष साध्वीयोंकी अन्दर जो आचारांग और निशीथ सूत्रकी जानकार अन्य साध्वी हो, तो उसको आगेवान कर सब साध्वीयों उसकी निश्रामें विचरे. कदाच ऐसी जानकार साध्वी न हो तो उस साध्वीयोंको अन्य दिशामें जानकार साध्वीयां विचरती हो. वहांपर रहस्तेमें एकेक रात्री रहके जाना कल्पै. रहस्तेमें उपकार निमित्त रहना नहीं कल्पै. अगर शरीरमें रोगादि कारण हो, तो जहांतक रोग न मिटे, वहांतक रहना कल्पै. रोग मुक्त होनेपरभी अन्य साध्वीयां कहे कि—हे आर्या ! एक दो रात्रि और ठेरो, ताके तुमारा शरीरका विश्वास हो, उस हालतमें एक दो रात्रि रहना कल्पै. परन्तु अधिक ठहरना नहीं कल्पै. अगर अधिक रहे, तो जितने दिन रहे, उतने दिनोंका छेद तथा तपप्रायश्चित्त होता है.

(१२) एवं चतुर्मास रहे हुवेका भी अलापक समझना.

भावार्थ—अपठित साध्वीयोंको रहेना नहीं कल्पै. अगर चातुर्मास हो, तो भी वहांसे विहार कर, आचारांग, और निशीथ सूत्रके जानकारके पास आजाना चाहिये.

(१३) प्रवर्तणी अन्त समय कहे कि—हे आर्या ! मैं काल कर जाउं, तो मेरी पद्वी अमुक साध्वीको दे देना. अगर वह साध्वी योग्य हो तो उसे पद्वी दे देना. तथा वह साध्वी पद्वीके योग्य न हो और दुसरी साध्वीयां योग्य हो, तो उसे पद्वि देना चाहिये. दुसरी साध्वी पद्वि योग्य न हो, तो जिसका नाम बतलाया था, उसे पद्वि दे देना, परन्तु यह सरत कर लेना कि—अबी हमारे पास पद्वीयोग्य साध्वी नहीं है वास्ते

आपको यह प्रवर्त्तणीके कहनेसे पद्वी दी जाती है, परन्तु अन्य कोइ पद्वी योग्य साध्वी होगी, तो आपको यह पद्वी छोडनी होगी. बादमें कोइ साध्वी पद्वी योग्य हो, तो पहलेसे पद्वि छोडा लेनी. इसपर पद्वी छोड दे तो किसी प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है, अगर वह पद्विको नहीं छोडे तो जितने दिन पद्वी रखे, उतने दिन छेद तथा तपप्रायश्चित्त होता है. अगर उसकी पद्वी छोडनेमें साध्वी और संघ प्रयत्न न करे, तो उस साध्वी तथा संघ सबको प्रायश्चित्तके भागी बनना पडता है.

(१४) इसी माफिक प्रवर्त्तणी साध्वी प्रबल मोहनीयकर्मके उदयसे कामपीडित हो, फिर संसारमें जाते समयकाभी सूत्र कहेना. भावना चतुर्थ उद्देशा माफिक समझना.

(१५) आचार्य महाराज अपने नवयुवक तरुण अवस्थावाले शिष्यको आचारांग और निशीथ सूत्रका अभ्यास कराया हो, परन्तु वह शिष्यको विस्मृत होगया जाण आचार्यश्रीने पूछा कि-हे आर्य ! जो तुमको आचारांग और निशीथसूत्र विस्मृत हुवा है, तो क्या शरीरमें रोगादिकके कारणसे या प्रमादके कारणसे ? शिष्य अर्ज करे कि—हे भगवन् ! मुजे प्रमादसे सूत्र विस्मृत हुवा है. तो उस शिष्यको जावजीवतक सातों पद्वीयोंसे किसी प्रकारकी पद्वी देना नहीं कल्पै. कारण अभ्यास कीया हुवा ज्ञान विस्मृत हो गया, तो गच्छका रक्षण कैसे करेगा ? अगर शिष्य कहे कि—हे भगवन् ! प्रमादसे नहीं, किन्तु मेरे शरीरमें अमुक रोग हुवा था, उस व्याधिसे पीडित होनेसे सूत्रों विस्मृत हुवा है. तब आचार्यश्री कहे कि-हे शिष्य ! अब उस आचारांग और निशीथको फिरसे याद कर लेगा ? शिष्य कबूल करे कि—हाँ मैं फिरसे उस सूत्रोंको कंठस्थ कर लुंगा. तो उस शिष्यको

सात पद्वीयोंसे पद्वी देना कल्पै. अगर कंठस्थ करनेका स्वीकार कर, फिरसे कंठस्थ नहीं करे तो, उसे न तो पद्वी देना कल्पै और न उस शिष्यको पद्वी लेना कल्पै.

(१६) इसी माफिक नवयुवति तरुण साध्वीको भी समझना चाहिये. परन्तु यहां पद्वी प्रवर्तणी तथा गणविच्छेदणी-दोय कहना. शेष साधुवत्.

(१७) स्थविर मुनि स्थविर भूमिको प्राप्त हुवे, अगर आचारांग और निशीथसूत्र भूल भी जावे, और पीछेसे कंठस्थ करे, न भी करे, तो उन्होंको सातों पद्वीसे किसी प्रकारकी भी पद्वी देना कल्पै. कारण कि चिरकालसे उन महात्मावोंने कंठस्थ कर उसकी स्वाध्याय करी हुइ है. अगर क्रमसर कंठस्थ न भी हो, तो भी उसकी मतलब उन्होंकी स्मृतिमें जरुर है, तथा चिरकाल दीक्षापर्याय होनेसे बहुतसे आचार-गोचर प्रवृत्ति उन्होंने देखी हुइ है.

(१८) स्थविर, स्थविरकी भूमि (६० वर्ष) को प्राप्त हुवा, जो आचारांग और निशीथसूत्र विस्मृत हो गया हो, तो वह बैठे बैठे, सोते सोते, एक पसवाडे सोते हुवे धीरे धीरेसे याद करे. परन्तु आचारांग और निशीथ अवश्य कंठस्थ रखना चाहिये. कारण—साधुवोंकी दीक्षासे लेके अन्त समय तकका व्यवहार आचारांगसूत्रमें है, और उससे स्खलित हो, तो शुद्ध करनेके लीये निशीथसूत्र है.

(१९) साधु साध्वीयोंके आपसमें बारह[1] प्रकारका संभोग है. अर्थात् वस्त्र पात्र लेना देना, वांचना देना इत्यादि. उस साधु साध्वीयोंको आलोचना लेना देना आपसमें नहीं कल्पै. अर्थात् आलोचना करना हो तो साधु साधुवोंके पास और साध्वीयों

---

१ बारह प्रकारका संभोग समवायांगजी सूत्रमें देखो.

साध्वीयोंके पास ही आलोचना करना कल्पै. अगर अपनी अपनी समाजमें आलोचना सुननेवाला हो, तो उन्होंके पास ही आलोचना करना, प्रायश्चित्त लेना. अगर दश बोलोंका जानकार साध्वीयोंमें उस समय हाजर न हो, तो साध्वीयों साधुवोंके पास भी आलोचना कर सके, और साधु साध्वीयोंके पास आलोचना कर सके.

भावार्थ—जहांतक आलोचना सुन प्रायश्चित्त देनेवाला हो, वहांतक तो साध्वीयोंको साध्वीयोंके पास और साधुवोंको साधुवोंके पास ही आलोचना करना चाहिये कि जिससे आपसमें परिचय न बढे. अगर ऐसा न हो, तो आलोचना क्षणमात्र भी रखना नहीं चाहिये. साध्वीयों साधुओंके पास भी आलोचना ले सके.

(२०) साधु साध्वीयोंके आपसमें संभोग है, तथापि आपसमें वैयावच्च करना नहीं कल्पै, जहांतक अन्य वैयावच्च करनेवाला हो वहांतक. परन्तु दुसरा कोइ वैयावच्च करनेवाला न हो, उस आफतमें साधु, साध्वीयोंकी वैयावच्च तथा साध्वीयों, साधुवोंकी वैयावच्च कर सके. भावना पुर्ववत्.

(२१) साधुको रात्रि तथा वैकालमें अगर सर्प काट खाया हो, तो उसका औषधोपचार पुरुष करता हो, वहांतक पुरुषके पास ही कराना. अगर उसका उपचार करनेवाली कोइ स्त्री हो, तो मरणान्त कष्टमें साधु स्त्रीके पास भी औषधोपचार करा सकते है. इसी माफिक साध्वीको सर्प काट खाया हो, तो जहांतक स्त्री उपचार करनेवाली हो, वहांतक स्त्रीसे उपचार कराना, अगर स्त्री न हो, किन्तु पुरुष उपचार करता हो, तो मरणान्त कष्टमें पुरुषसे भी उपचार कराना कल्पै. यहांपर लाभालाभका कारण देखना. यह कल्प स्थविरकल्पी मुनियोंका है. जिनकल्पी मुनिको

तो किसी प्रकारका वैयावच्च कराना कल्पै ही नहीं. अगर जिन-कल्पी मुनिको सर्प काट खानेपर उपचार करावे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है. परन्तु स्थविरकल्पी पुर्वोक्त उपचार करानेसे प्रायश्चित्तका भागी नहीं है. कारण-उन्होंका ऐसा कल्प है. इति.

श्री व्यवहारसूत्र-पांचवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

(६) छट्ठा उद्देशा.

(१) साधु इच्छा करे कि मैं मेरे संसारी संबंधी लोगोंके घरपर गौचरी आदिके लीये गमन करुं, तो उस मुनिको चाहिये कि पेस्तर स्थविर (आचार्य) को पुछे कि—हे भगवन्! आपकी आज्ञा हो तो में अमुक कार्यके लीये मेरे संसारी संबन्धीयोंके वहां जाउं ? इसपर आचार्यमहाराज योग्य जान आज्ञा दे, तो गमन करे, अगर आज्ञा न दे तो उस मुनिको जाना नहीं कल्पै. कारण—संसारी लोगोंका दीर्घकालसे परिचय था, वह मोहकी वृद्धि करनेवाला होता है. अगर आचार्यकी आज्ञाका उल्लंघन कर स्वच्छन्दाचारी साधु अपने संबन्धीयोंके वहां चला भी जावे, तो जितने दिन आचार्यकी आज्ञा बहार रहै, उतने दिनोंका तप तथा छेद प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(२) साधु अल्पश्रुत, अल्प आगमविद्याका जानकार अकेलेको अपने संसारी संबंधीयोंके वहां जाना नहीं कल्पै.

(३) अगर बहुश्रुत गीतार्थोंके साथमें जाता हो, तो उसे अपने संसारी संबंधीयोंके वहां जाना कल्पै.

(४) साधु गीतार्थके साथमें अपने संसारी संबंधीयोंके वहां भिक्षाके लीये जाते है. वहां पहले चावल चूलासे उतरा हो तो चावल लेना कल्पै, शेष नहीं.

(५) पहले दाल उतरी हो तो दाल लेना कल्पै, शेष नहीं.

(६) पहले चावल दाल दोनों उतरा हो तो दोनों कल्पै.

(७) चावल दाल दोनों पीछेसे उतरा हो तो दोनों न कल्पै.

(८) मुनि जानेके पहले जो उतरा हो, वह लेना कल्पै.

(९) मुनि जानेके बाद चूलासे जो उतरा हो वह लेना न कल्पै.

(१०) आचार्योपाध्यायका गच्छकी अन्दर पांच अतिशय होते है.

(१) स्थंडिल, गौचरी आदि जाके पीछे उपाश्रयकी अन्दर आते समय उपाश्रयकी अन्दर आके पगको प्रमार्जन करे.

(२) उपाश्रयकी अन्दर लघु वडीनीतिसे निवृत्त हो सके.

(३) आप समर्थ होनेपर भी अन्य साधुवोंकी वैयावच्च इच्छा हो तो करे, इच्छा हो तो न भी करे.

(४) उपाश्रयकी अन्दर एक दोय रात्रि एकान्तमें ठेर सके.

(५) उपाश्रयकी बहार अर्थात् ग्रामादिसे बहार जंगलमें एक दो रात्रि एकान्तमें ठेर सके.

यह पांच कार्य सामान्य साधु नहीं कर सके, परन्तु आचार्य करे, तो आज्ञाका अतिक्रम न होवे.

(११) गणविच्छेदक गच्छकी अन्दर दोय अतिशय होते है.

(१) उपाश्रयकी अन्दर एकान्त एक दो रात्रि रह सके.

(२) उपाश्रयकी बहार एक दो रात्रि एकान्तमें रह सके.

भावार्थ—आचार्य तथा गणविच्छेदकोंके आधारसे शासन रहा हुवा है. उन्होंके पास विद्यादिका प्रयोग अवश्य होना चाहिये. कभी शासनका कार्य हो तो अपनी आत्मलब्धिसे शासनकी प्रभावना कर सके.

(१२) ग्राम, नगर, यावत् संन्निवेश, जिसके एक दरवाजा हो, निकास प्रवेशका एक ही रहस्ता हो, वहांपर बहुतसे साधु जो आचारांग और निशीथसूत्रके अज्ञात हो, उन्होंको उक्त ग्रामादिमें ठेरना नहीं कल्पै. अगर उन्होंकी अन्दर एक साधु भी आचारांग और निशीथका जानकार हो, तो कोइ प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है. अगर ऐसा जानकार साधु न हो तो उस सब अज्ञात साधुवोंको प्रायश्चित्त होता है. जितने दिन रहे, उतने दिनोंका छेद तथा तप प्रायश्चित्त अज्ञातोंके लीये होता है. भावना पुर्ववत्.

(१३) एवं ग्रामादिके अलग अलग दरवाजे, निकास प्रवेश अलग अलग हो तो भी बहुतसे अज्ञात साधुवोंको वहांपर रहना नहीं कल्पै. अगर एक भी आचारांग निशीथ पठित साधु हो तो प्रायश्चित्त नहीं आवे. नहि तो सबको तप तथा छेद प्रायश्चित्त होता है.

भावार्थ—अज्ञात साधु अगर उन्मार्ग जाता हो, तो ज्ञात साधु उसे निवार सके.

(१४) ग्रामादिके बहुत दरवाजे, बहुत निकाश प्रवेशके रास्ते है. वहांपर बहुश्रुत, बहुतसे आगम विद्यावोंके जानकारको अकेला ठेरना नहीं कल्पै, तो अज्ञात साधुवोंका तो कहना ही क्या?

(१५) ग्रामादिके एक दरवाजा, एक निकास प्रवेशका रास्ता हो, वहांपर बहुश्रुत, बहुत आगमका जानकार मुनिको अकेला रहना कल्पै; परन्तु उस मुनिको अहोनिश साधुभावका ही चिंतन करना, अप्रमादपणे तप संयममें मग्न रहना चाहिये.

(१६) बहुतसे मनुष्य (स्त्री, पुरुष) तथा पशु आदि एकत्र हुवा हो, कुचेष्टावोंसे काम प्रदीप्त करते हो, मैथुन सेवन

करते हो, वहांपर साधु साध्वीको नहीं ठेरना चाहिये. कारण आत्मा निमित्तवासी है. जीवोंको चिरकालका काम विकारसे परिचय है. अगर कोइ ऐसे अयोग्य स्थानमें ठेरेगा, तो उस कामी पुरुष या पशु आदिको देख विकार उत्पन्न होनेसे कोइ अचित श्रोत्रसे अपने वीर्यपात के लीये हस्तकर्म करते हुवे को अनुघातिक मासिक प्रायश्चित होगा.

(१७) इसी माफिक मैथुन संज्ञासे हस्त कर्म करते हुवे को अनुघातिक चातुर्मासिक प्रायश्चित होगा.

(१८) साधु साध्वीयोंके पास किसी अन्य गच्छसे साध्वी आइ हो. उसका साधु आचार खंडित हुवा है. संयममें सबल दोष लगा है, अनाचारसे आचारको भेद दीया है, क्रोधादि कर चारित्रको मलिन कर दीया हो उस स्थानकी आलोचना विगर सुने प्रतिक्रमण न करावे, प्रायश्चित्त न देवे ऐसेही खंडित आचार-वालेकी सुखशाता पुछना, वाचना देना, दीक्षाका देना साथमें भोजनका करना (साध्वीयोंको) सदैव साथमें रहना, स्वल्पकाल तथा चिरकालकी पद्वीका देना नहीं कल्पै.

(१९) आचारादि खंडित हुवा हो तो उसे आलोचना प्रतिक्रमण कराके, प्रायश्चित दे शुद्ध कर उसके साथ पूर्वोक्त व्यवहार करना कल्पै.

(२०) (२१) इसी माफिक साधु आश्रयभी दो अलापक समझना.

भावार्थ—किसी कारणसे अन्य गच्छ के साधु साध्वी अन्य गच्छमें जावे तो प्रथम उसको मधुर वचनोंसे समझावे, आलोचनादि करायके प्रायश्चित्त दे पीछे उसी गच्छमें भेज देवे. अगर उस गच्छमें विनय धर्म और ज्ञान धर्मकी खामीसे आया हो, तो उसे

शुद्ध कर आप रख भी सके. कारण समयीको सहायता देना बहुत लाभका कारण है. और योग्य हो तो उसे स्वल्प काल तथा जावजीव तक आचार्यादि पद्वी भी देना कल्पै. इति.

श्री व्यवहारसूत्र—छट्ठा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

(७) सातवां उद्देशा.

(१) साधु साध्वीयोंके आपसमें अशनादि बारह प्रकारके संभोग है. अर्थात् साधुवोंकी आज्ञामें विहार करनेवाली साध्वीयों है. उन्हों के पास कोइ अन्य गच्छसे निकलके साध्वी आइ है. आनेवाली साध्वीका आचार खंडित यावत् उसको प्रायश्चित्त दीया विना स्वल्पकालकी या चिरकालकी पद्वी देना साध्वीयोंको नहीं कल्पै.

(२) साधुवोंको पूछ कर, उस आइ हुइ साध्वीको प्रायश्चित्त देके यावत् स्वल्पकाल या चिरकालकी पद्वी देना साध्वीयोंको कल्पै.

(३) साध्वीयोंको विना पूछे साधु उस साध्वीको पूर्वोक्त प्रायश्चित्त नहीं दे सके. कारण—आखिर साध्वीयोंका निर्वाह करना साध्वीयोंके हाथमें है. पीछेसे भी साध्वीयोंकी प्रकृति नहीं मिलती हो, तो निर्वाह होना मुश्कील होता है.

(४) साधु, साध्वीयोंको पूछ कर, उस साध्वीकी आलोचना सुन, प्रायश्चित देके शुद्ध कर गच्छमें ले सके, यावत् योग्य हो तो प्रवर्त्तणी या गणविच्छेदणीकी पद्वी भी दे सके.

(५) साधु साध्वीयोंके बारह प्रकारका संभोग है. अगर साध्वीयों गच्छ मर्यादाका उलंघन कर अकृत्य कार्य करे (पासत्था-

वोंको वन्दन करना, अशनादि देना लेना। उस हालतमें साधु, साध्वीयोंके साथ प्रत्यक्षमें संभोगका विसंभोग करे. अर्थात् अपने संभोगसे बहार कर देवे. प्रथम साध्वीयोंको बुलवाके कहे कि—हे आर्या! तुमको दो तीन दफे मना करने पर भी तुम अपने अकृत्य कार्यको नहीं छोडती हो. इस वास्ते आज हम तुमारे साथ संभोगको विसंभोग करते हैं. उसपर साध्वी बोले कि-मैंने जो कार्य कीया है उसकी आलोचना करती हुं, फिर ऐसा कार्य न करुंगी. तो उसके साथ पूर्वकी माफिक संभोग रखना कल्पै. अगर साध्वी अपनी भूलको स्वकार न करें, तो प्रत्यक्षमें ही विसंभोग कर देना चाहिये. ताके दुसरी साध्वीयोंको क्षोभ रहै.

(६) एवं साधु अकृत्य कार्य करे तो साध्वीयोंको प्रत्यक्षमें संभोगका विसंभोग करना नहीं कल्पै, परन्तु परोक्ष जैसे किसी साथ कहला देवे कि—अमुक अमुक कारणोंसे हम आपके साथ संभोग तोड देतें है. अगर साधु अपनी भूलको स्वीकार करे, तो साध्वीको साधुके साथ वन्दन व्यवहारादि संभोग रखना कल्पै. अगर साधु अपनी भूलको स्वीकार न करें, तो उसको परोक्षपणे संभोगका विसंभोग कर, अपने आचार्योपाध्याय मिलेनपर साध्वी कह देवे कि—हे भगवन्! अमुक साधुके साथ हमने अमुक कारणसे संभोगका विसंभोग कीया है.

(७) साधुवोंको अपने लीये किसी साध्वीको दीक्षा देना, शिक्षा देना, साथमें भोजन करना, साथमें रखना, नहीं कल्पै.

(८) अगर किसी देशमें मुनि उपदेशसे गृहस्थ दीक्षा लेता हो, परन्तु उसकी लडकी बाधा कर रही है कि—अगर दीक्षा लो, तो मैंभी दीक्षा लेउंगी. परन्तु साध्वी वहांपर हाजर नहीं है. उस हालतमें साधु उस पिताके साथमें लडकीको साध्वीयोंके लीये

दीक्षा देवे. यावत् उसको साध्वीयों मिलनेपर सुप्रत कर देवे. यह सूत्र हमेशांके लीये नहीं है, किन्तु ऐसा कोइ विशेष कारण होनेपर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके जानकारोंकी अपेक्षाका है.

(९) इसी माफिक साध्वी अपने लीये साधुको दीक्षा न देवे.

(१०) परन्तु किसी माताके साथ पुत्र दीक्षाका आग्रह करता हो, तो साध्वीयों साधुके लीये दीक्षा देकर आचार्यादि मिलनेपर साधुको सुप्रत कर देवे. भावना पूर्ववत्.

(११) साध्वीयोंको विकट देशमें विहार करना नहीं कल्पै. कारण—जहांपर बहुतसे तस्कर लोग, अनार्यलोग हो, वहांपर वस्त्रहरण, व्रतभंगादिक अनेक दोषोंका संभव है.

(१२) साधुवोंको विकट देशमेंभी लाभालाभका कारण जान विहार करना कल्पै.

(१३) साधुवोंको आपसमें क्रोधादि हुवा हो, उससे एक पक्षवाले साधु विकट देशमें विहार कर गये हो, तो दुसरा पक्षवाले साधुवोंको स्वस्थान रहके खमतखामणा करना नहीं कल्पै. उन्होंको वहां विकट देशमें जाके अपना अपराध क्षमाना चाहिये.

(१४) साध्वीयोंको कल्पै, अपने स्थान रहके खमतखामणा कर लेना. कारण—वह विकट देशमें जा नहीं सक्ती है. भावना पूर्ववत्.

(१५) साधु साध्वीयोंको अस्वाध्यायकी अन्दर स्वाध्याय करना नहीं कल्पै. अर्थात् आगमोंमें ३२ अस्वाध्याय तथा अन्य भी अस्वाध्याय कहा है. उन्होंकी अन्दर स्वाध्याय करना नहीं कल्पै.

(१६) साधु साध्वीयोंको स्वाध्याय कालमें स्वाध्याय करना कल्पै.

(१७) साधु साध्वीयोंको अपने लीये अस्वाध्यायकी अन्दर स्वाध्याय करना नहीं कल्पै.

(१८) परन्तु किसी साधु साध्वीयोंकी वाचना चलती हो, तो उसको वाचना देना कल्पै. अस्वाध्यायपर पाटे (वस्त्र) बन्ध लेना चाहिये. यह विशेष सूत्र गुरुगम्यताका है.

(१९) तीन वर्षके दीक्षापर्यायवाला साधु, और तीस वर्षकी दीक्षापर्यायवाली साध्वीको उपाध्यायकी पद्वी देना कल्पै.

(२०) पांच वर्षके दीक्षापर्यायवाला साधु और साठ वर्षकी दीक्षापर्यायवाली साध्वीको आचार्य (प्रवर्तणी) पद्वी देना कल्पै. पद्वी देते समय योग्यायोग्यका विचार अवश्य करना चाहिये. इस विषय चतुर्थ उद्देशामें खुलासा कीया हुवा है.

(२१) ग्रामानुग्राम विहार करता हुवा साधु, साध्वी कदाच कालधर्म प्राप्त हो, तो उसके साथवाले साधुवोंको चाहिये कि- उस मुनि तथा साध्वीका शरीरको लेके बहुत निर्जीव भूमिपर परठे. अर्थात् एकान्त भूमिकापर परठे, और उस साधुके भंडोपकरण हो, वह साधुवोंको काम आने योग्य हो तो गृहस्थोंकी आज्ञासे ग्रहन कर अपने आचार्यादि वृद्धोंके पास रखे, जिसको जरुरत जाने आचार्यमहाराज उसको देवे. वह मुनि, आचार्यश्रीकी आज्ञा लेके अपने काममें लेवे.

(२२) साधु साध्वीयों जिस मकानमें ठेरे है. उस मकानका मालिक अपना मकान किसी अन्यको भाडे देता हो, उस समय कहे कि-इतना मकानमें साधु ठेरे हुवे है, शेष मकान तुमको भाडे देता हुं, तो घरधणीको शय्यातर रखना. अगर घरधणी न कहे, और भाडे लेनेवाला कहे कि-हे साधु! यह मकान मैंने भाडे लीया है. परन्तु आप सुखपूर्वक विराजो, तो भाडे लेनेवालेको शय्यातर रखना. अगर दोनों आज्ञा दे, तो दोनोंको शय्यातर रखना.

(२३) इसी माफिक मकान बेचनेके विषयमें समझना.

(२४) साधु जिस मकानमें ठेरे, उस मकानकी आज्ञा प्रथम लेना चाहिये. अगर कोइ गृहस्थकी नित्य निवास करनेवाली विधवा पुत्री हो, तो उसकी भी आज्ञा लेना कल्पै, तो फिर पिता, पुत्रादिकी आज्ञाका तो कहना ही क्या? सुहागण अनित्य निवासवाली पुत्रीकी आज्ञा नहीं लेना. कारण-उनका सासरा कहा है. कभी उनके हाथसे आहार ग्रहन करनेमें आवे, तो शय्यातर दोष लग जावे, परन्तु विधवा नित्य निवास करनेवाली पुत्रीकी आज्ञा ले सकते है.

(२५) रहस्तेमें चलते चलते कभी वृक्ष नीचे रहनेका काम पडे, तो भी गृहस्थोंकी आज्ञा लेना. अगर कोइ न मिले, तो पहले वहां पर ठेरे हुवे मुसाफिरकी भी आज्ञा लेके ठेरना.

(२६) जिस राजाके राज्यमें मुनि विहार करते हो, उस राजाका देहान्त हो गया हो, या किसी कारणसे अन्य राजाका राज्याभिषेक हुवा हो, परन्तु आगेके राजाकी स्थितिमें कुछ भी फेरफार नहीं हुवा हो, तो पहलेकी लीइ हुइ आज्ञामें ही रहना चाहिये. अर्थात् फिरसे आज्ञा लेनेकी जरुरत नहीं है.

(२७) अगर नये राजाका अभिषेक होनेपर पहलेका कायदा तोड दीया हो, नये कायदे बांधा हो, तो साधुवोंको उस राजाकी दुसरीवार आज्ञा लेना चाहिये कि-हम लोग आपके देशमें विहार कर, धर्मोपदेश करते है. इसमें आपकी आज्ञा है? कारण कि साधु विगर आज्ञा विहार करे, तो तीसरा व्रतका रक्षण नहीं होता है. चौरी लगती है. वास्ते अवश्य आज्ञा लेके विहार करना चाहिये. इति.

श्री व्यवहार सूत्र-सातवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(८) आठवां उद्देशा.

(१) आचार्यमहाराज अपने शिष्य संयुक्त किसी नगरमें चातुर्मास कीया हो, वहांपर गृहस्थोंके मकानमें आज्ञासे ठेरे है. उसमें कोई साधु कहे कि—हे भगवन्! इस मकानका इतना अन्द-रका मकान और इतना बहारका मकान मैं मेरी निश्रामें रखु? आचार्यश्री उस साधुकी अशठता-सरलता जाणे कि-यह तपस्वी है, बीमार है, तो उतनी जगहकी आज्ञा देवे तो उस मुनिको वह स्थान भोगवना कल्पै. अगर आचार्य श्री जाणे कि —यह धूर्त-तासे आप सुखशीलीयापणासे साताकारी मकान अपनी निश्रामें रखना चाहता है. तो उस जगहकी आज्ञा न दे, और कहे कि हे आर्य! पेस्तर रत्नत्रयादिसे वृद्ध साधु है, उन्होंके क्रमसर स्थान देनेपर तुमारे विभागमें आवे उस मकानको तुम भोगवना. तो उस मुनिको जैसी आचार्य श्री आज्ञा दे, वैसाही करना कल्पै.

(२) मुनि इच्छा करे कि—मैं हलका पाट, पाटला, तृणादि, शय्या, संस्तारक, गृहस्थोंके वहांसे याचना कर लाऊं तो एक हाथसे उठा सके तथा रहस्तेमें एक विश्रामा, दोय विश्रामा, तीन विश्रामा लेके लाने योग्य हो, ऐसा पाट पाटला शीतोष्ण कालके लीये लावे.

भावार्थ—यह है कि प्रथम तो पाट पाटला ऐसा हलकाही लाना चाहिये कि जहां विश्रामाकी आवश्यक्ता ही न रहै. अगर ऐसा न मिले तो एक दो तीन विश्रामा खाते हुवे भी एक हाथसे लाना चाहिये.

(३) पाट पाटला एक हाथसे वहन कर उठा सके ऐसा एक दो तीन विश्रामा लेके अपने उपाश्रय तक ला सके. ऐसा जाने कि—यह मेरे चातुर्मासमें काम आवेगा भावना पूर्ववत्.

(४) पाट पाटला एक हाथसे ग्रहन कर उठा सके, एक दो तीन च्यार पांच विश्रामा ले के अपने उपाश्रय आ सके, ऐसा पाट पाटला, वृद्ध वयधारक मुनि जो स्थिर वासकीया हो, उन्हों के आधारभूत होगा एसा जाण लावे.

(५) स्थविर महाराज स्थविर भूमि (साठ वर्षकी आयुष्यको) प्राप्त हुवे को कल्पै.

[१] दंड—कान परिमाण दंडा, बहार आते जाने समय चलनेमें सहायकारी.

[२] भंड—मर्यादासे अधिक पात्र, वृद्ध वयके कारणसे.

[३] छत्र—शिरकी कमजोरी होनेसे शैत्य, गरमी निवारण निमित्त शिरपर कपडादिसे आच्छादन करनेके लिये कम्बली आदि.

[४] मृत्तिका भाजन—मट्टीका भाजन लघुनीत वडी नीत श्लेष्मादिके लीये.

[५] लठ्ठी—मकानमें इधर, उधर फिरते समय टेका रखनेके लीये.

[६] भिसिका-पूठ पीछाडी बैठते समय टेका रखनेके लीये.

[७] चेल—वस्त्र, मर्यादासे कुछ अधिक वस्त्र, वृद्ध वयके कारणसे.

[८] चलमली—आहारादि करते समय जीव रक्षा निमित्त पडदा बांधनेका वस्त्रको चलमली कहते है.

[९] चर्मखंड —पावोंकी चमडी कची पड जानेसे चला न जाता हो, उस कारणसे चर्मखंड रखना पडे.

[१०] चर्मकोश—गुह्य स्थानमें विशेष रोग होने पर कामर्मे लीया जाता है.

[११] चर्म अंगुठी—वस्त्रादि सीवे उस समय अंगुली आदिमें रखनेके लीये.

चर्मका उपकरण विशेष कारणसे रखा जाता है. अगर गौचरीपाणी निमित्त गृहस्थोंके वहां जाना पडता है. उस समय आपके साथ ले जानेके सिवाय उपकरण किसी गृहस्थोंके वहां रखे तथा उन्होंको सुप्रत करके भिक्षाको जावे, पीछे आनेपर उस गृहस्थोंकी रजा ले कर, उस उपकरणोंको अपने उपभोगमें लेवे, जिनसे गृहस्थोंकी खातरी रहै कि यह उपकरण मुनि ही लीया है.

(६) जिस मकानमें साधु ठेरे है. उस मकानका नाम लेके गृहस्थोंके वहांसे पाटपाटले लाया हो, फिर दुसरे मकानमें जानेका प्रयोजन हो, तो गृहस्थोंकी आज्ञा विगर वह पाटपाटले दूसरे मकानमें ले जाना नहीं कल्पै.

(७) अगर कारण हो, तो गृहस्थोंकी आज्ञासे ले जा सके है. कारण—गृहस्थोंके आपसमें केइ प्रकारके टंटे फिसाद होते है. वास्ते विगर पूछे ले जानेपर घरका धणी कहे कि—हमारे पाटपाटले उस दुसरे मकानमें आप क्यों ले गये ? तथा उन्होंके पाटपाटले हमारे मकानमें क्यों लाये ? इत्यादि.

(८) जहांपर साधु ठेरे हो, वहांपर शय्यातरका पाटपाटले आज्ञासे लीया हो, फिर विहार करनेके कारणसे उन्होंको सुप्रत कर दीया, बादमें किसी लाभालाभके कारणसे वहां रहना पडे, तो दुसरी दफे आज्ञा लीया विगर वह पाटपाटले वापरना नहीं कल्पै.

(९) वापरना हो, तो दुसरी दफे और भी आज्ञा लेना चाहिये.

(१०) साधु साध्वीयोंको आज्ञा लेनेके पहला शय्या, संस्तारक वापरना (भोगवना) नहीं कल्पै. किन्तु पेस्तर मकान या पाटपाटलेवालेकी आज्ञा लेना, फिर उस शय्या संस्तारकको वापरना कल्पै. कदाचित् कोइ ग्रामादिमें शेष दिन रह गया हो, आगे जानेका अवकाश न हो और साधुवोंको मकानादि सुलभतासे मिलता न हो, तो प्रथम मकानमें ठेर जाना फिर बादमें आज्ञा लेना कल्पै. विगर आज्ञा मकानमें ठेर गये. फिर घरका धणी तकरार करे. उस समय एक शिष्य कहे कि-हे गृहस्थ! हम रात्रिमें चलते नहीं है, और दुसरा मकान नहीं है, तो हम साधु कहां जावे? उसपर गृहस्थ तकरार करे, जब वृद्ध मुनि अपने शिष्यको कहे-भो शिष्य! एक तो तुम विना आज्ञा गृहस्थोंके मकानमें ठेरे हो, और दुसरा इन्होंसे तकरार करते हो, यह ठीक नहीं है. इनसे गृहस्थकी श्रद्धा वृद्ध मुनिपर बढ जानेसे वह कहते है कि-हे मुनि! तुम अच्छे न्यायवन्त हो. यहां ठेरो, मेरी आज्ञा है.

(११) मुनि, गृहस्थोंके घर गौचरी गये, अगर कोइ स्वल्प उपकरण भूलसे वहां पड जावे, पीछेसे कोइ दुसरा साधु गया हो, तो उसे गृहस्थोंकी आज्ञासे लेना चाहिये. फिर वह मुनि मिले तो उसे दे देना चाहिये, अगर न मिले तो उसको न तो आप ले, न अन्य साधुवोंको दे. एकान्त भूमिपर परठ देना चाहिये.

(१२) इसी माफिक विहारभूमि जाते मुनिका उपकरण विषय.

(१३) एवं ग्रामानुग्राम विहार करते समय उपकरण विषय.

भावार्थ—साधुका उपकरण जानके साधुके नामसे गृहस्थकी आज्ञा लेके ग्रहण कीया था, अब साधु न मिलनेसे अगर आप

भोगवे, तो गृहस्थकी और तीर्थंकरोंकी चोरी लगे. गृहस्थोंसे आज्ञा लेनेको जानेसे गृहस्थोंको अप्रतीत हो कि-क्या मुनिको इस वस्तुका लोभ होगा. वास्ते वह मुनि मिले तो उसे दे देना. नहीं तो एकान्त भूमिपर परठ देना. इस्में भी आज्ञा लेनेवालोंमें अधिक योग्यता होना चाहिये.

(१४) एक देशमें पात्र फासुक मिलते हो, दुसरे देशमें विचरनेवाले मुनियोंको पात्रकी जरुरत रहती है, तो उस मुनियोंके लीये अधिक पात्र लेना कल्पै. परन्तु जबतक उस मुनिको नहीं पूछा हो, वहांतक वह पात्र दुसरे साधुवोंको देना नहीं कल्पै. अगर उस मुनिको पूछनेसे कहे कि-मेरेको पात्रकी जरुरत नहीं है. आपकी इच्छा हो, उसे दीजीये, तो योग्य साधुको वह पात्र देना कल्पै.

(१५) अपने सदैव भोजन करते है, उस भोजनके ३२ विभाग करना (कल्पना करना.) उसमें अष्ट विभाग आहार करनेसे पौण उणोदरी, सोल विभाग करनेसे आधी उणोदरी, चोवीश विभाग भोजन करनेसे पाव उणोदरी, एक विभाग कम भोजन करनेसे किंचित् उणोदरी तथा एक चावल (सीत) खानेसे उत्कृष्ट उणोदरी कही जाती है. साधु महात्मावोंको सदैवके लीये उणोदरी तप करना चाहिये. इति.

श्री व्यवहारसूत्र-आठवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(९) नौवां उद्देशा.

मकानका दातार हो, उसे शय्यातर कहते है. उन्होंके घरका आहार पाणी साधुवोंको लेना नहीं कल्पै. यहांपर शय्यातरकाही अधिकार कहते है.

(१) शय्यातरके पाहुणा (महेमान) आया हो. उसको अपने घरकी अन्दर तथा वाडाकी अन्दर भोजन बनानेके लीये सामान दीया और कह दीया कि--आप भोजन करनेपर बढ जावे वह हमको दे देना. उस भोजनकी अन्दरसे साधुको देवे तो साधुको लेना नहीं कल्पै. कारण-वह भोजन शय्यातरका है.

(२) सामान देनेके बाद कह दीया कि—हम तो आपको दे चुके है. अब बढे हुवे भोजनको आपकी इच्छा हो वैसा करना. उस आहारसे मुनिको आहार देवे, तो मुनिको लेना कल्पै. कारण—वह आहार उस पाहुणाकी मालिकीका हो गया है.

(३-४) एवं दो अलापक मकानसे बाहार बैठके भोजन करावे, उस अपेक्षाभी समझना.

(५-६-७-८) एवं च्यार सूत्र, शय्या तरकी दासी, पेसी कामकारी आदिका मकानकी अन्दरका दो अलापक, और दो अलापक मकानके बाहारका.

भावार्थ—जहां शय्यातरका हक्क हो, वह भोजन मुनिकों लेना नहीं कल्पै. और शय्यातरका हक्क निकल गया हो, वह आहार मुनिको लेना कल्पै.

(९) शय्यातरके न्यातीले (स्वजन) एक मकानमें रहते हो, घरकी अन्दर एक चूलेपर एक ही बरतनमें भोजन बनाके अपनी उपजीविका करते हो. उस आहारसे मुनिको आहार देवे तो मुनिको लेना नहीं कल्पै.

(१०) शय्यातरके न्यातीले एक मकानकी अन्दर पाणी विगेरे सामेल है. एक चूलेपर भिन्न भिन्न भाजनमें आहार तैयार कीया है. उस आहारसे मुनिको आहार देवे तो वह आहार मुनिको लेना नहीं कल्पै. कारण-पाणी दोनोंका सामेल है.

(११-१२) एवं दो सूत्र, घरके बहार चुलापर आहार तैयार करनेका यह च्यार सूत्र एक घरका कहा. इसी माफिक (१३-१४ १५-१६) च्यार सूत्र अलग अलग घर अर्थात् एक पोलमें अलग अलग घर है, परन्तु एक चूलापर एकही बरतनमें आहार बनावे पाणी विगेरे सब सामेल होनेसे वह आहार साधु साध्वीयोंको लेना नहीं कल्पै.

(१७) शय्यातरकी दुकान किसीके सीर (हिस्सा-पांती) में है. वहांपर तैल आदि क्रयविक्रय होता हो. वेचनेवाला भागीदार है. साधुवोंको तैलका प्रयोजन होनेपर उस दुकान (जोकि शय्यातरके विभागमें है, तो भी) से तैलादि लेना नहीं कल्पै. शय्यातर देता हो, तो भी लेना नहीं तल्पै सीरवाला दे तो भी लेना नहीं कल्पै.

(१९-२०) एवं शय्यातरकी गुलकी शाला (दुकान.)
(२१-२२) एवं क्रियाणाकी दुकानका दो सूत्र.
(२३-२४) एवं कपडाकी दुकानका दो सूत्र.
(२५-२६) एवं सूतकी दुकानका दो सूत्र.
(२७-२८) एवं कपास (रुइ) की दुकानका दो सूत्र.
(२९-३०) एवं पसारीकी दुकानका दो सूत्र.
(३१-३२) एवं हलवाइकी दुकानका दो सूत्र.
(३३-३४) एवं भोजनशालाका दो सूत्र.
(३५-३६) एवं आम्रशालाका दो सूत्र.

अठारासे छत्तीसवां सूत्रतक कोइ विशेष कारण होनेपर दुकानोंपर याचना करनी पडती है. शय्यातरके विभागमें दुकान है, जिसपर भागीदार क्रय विक्रय करता है, वह देवे तोभी मुनिको लेना नहीं कल्पै. कारण-शय्यातरका विभाग है, और शय्यातर देता हो, तोभी मुनिको लेना नहीं कल्पै. कारण शय्यातरकी वस्तु ग्रहन करनेसे आधाकर्मि आदि दोषोंका संभव होता है तथा मकान मीलनेमें भी मुश्केली होती है.

(३७) सत्त सत्तमिय भिक्षुप्रतिमा धारण करनेवाले मुनियोंको ४९ अहोरात्र काल लगता है. और आहार पाणीकी ७-१४ २१-२८-३५-४२-४९-१९६ दात होती है. अर्थात् प्रथम सात दिन एकेक दात, दुजे सात दिन दो दो दात, तीजे सात दिन तीन तीन दात, चौथे सात दिन च्यार च्यार दात, पांचवे सात दिन पांच पांच दात, छट्ठे सात दिन छे छे दात, सातवे सात दिन सात सात दात, दात—एक दफे अखंडित धारासे देवे, उसे दात कहते है. औरभी इस प्रतिमाका जैसा सूत्रोंमें कल्पमार्ग बतलाया है, उसको सम्यक् प्रकारसे पालन करनेसे यावत् आज्ञाका आराधक होता है.

(३८) एवं अट्ठ अट्ठमिय भिक्षु प्रतिमाको ६४ दिन काल लगता है. अन्न पाणीकी २८८ दात, यावत् आज्ञाका आराधक होता है.

(३९) एवं नवनवमिय भिक्षु प्रतिमाको ८१ दिन, ४०५ आहार पाणीकी दात, यावत् आज्ञाका आराधक होता है.

(४०) एवं दश दशमिय भिक्षु प्रतिमाको १०० दिन ५५० आहार पाणीकी दात. यावत् आज्ञाका आराधक होता है.

(४१) वज्रऋषभनाराच संहनन जघन्यसे दश पूर्व, उत्कृष्ट

चौद पूर्वधर महर्षियोंकी प्रतिज्ञा-अपेक्षा (प्रतिमा) दो प्रकारकी कहते है. क्षुल्लकमोयक प्रतिमा, महामोयक प्रतिमा. जिसमें क्षुल्लकमोयक प्रतिमा धारण करनेवाले महर्षियोंको शरदकाल-मृगसर माससे आषाढ मास तक जो ग्राम, नगर यावत् सन्निवेशके बहार वन, वनखंड जिसमें भी विषम दुर्गम पर्वत, पहाड, गिरिकन्दरा, मेखला, गुफा आदि महान् भयंकर, जो कायर पुरुष देखे तो हृदय कम्पायमान हो जावे, ऐसी विषम भूमिकाकी अन्दर भोजन करके जावे, तो छे उपवास (छे दिनतक) और भोजन न कीया हो तो सात उपवाससे पूर्ण करे, और महामोयक प्रतिमा, जो भोजन करके जावे, तो सात दिन उपवास, भोजन न करे तो आठ दिन उपवास करे. विशेष इस प्रतिमाकी विधि गुरुगम्यतामें रही हुइ है. वह गीतार्थ महात्मावोंसे निर्णय करे. क्यों कि—अहासुत्तं, अहाकप्पं, अहामग्गं. सूत्रकारोंने भी इसी पाठपर आधार रखा है. अन्तमें फरमाया है कि—जैसी जिनाज्ञा है, वैसी पालन करनेसे आज्ञाका आराधक हो सकता है. स्याद्वाद रहस्य गुरुगमसे ही मिल सकता है.

(४३) दातकी संख्या करनेवाले मुनि पात्रधारी गृहस्थोंके वहां जाते है. एक ही दफे जितना आहार तथा पाणी पात्रमें पड जाता है, उसको शास्त्रकारोंने एक दातीका मान बतलाया है. जैसे बहुतसे जन एक स्थानमें भोजन करते है. वह स्वल्प स्वल्प आहार एकत्र कर, एक लाडु बनाके एक साथमें देवे. उसे भी एक ही दाती कही जाती है.

(४४) इसी माफिक पाणीकी दाती भी समझना.

(४५) मुनि मोक्षमार्गका साधन करनेके लीये अनेक प्रकारके अभिग्रह धारण करते है. यहां तीन प्रकारके अभिग्रह बतलाये है.

[१] काष्ठके भाजनमें लाके देवे ऐसा आहार ग्रहन करना.

[२] शुद्ध हाथ, शुद्ध भोजन चावल आदि मिले तो ग्रहन करना.

[३] भोजनादिसे खरडे हुवे (लिप्त) हाथोंसे आहार देवे तो ग्रहन करना.

(४६) तीन प्रकारके अभिग्रह—

[१] भाजनमें डालता हुवा आहार देवे, तो ग्रहन करुं.

[२] भाजनसे निकालता हुवा देवे तो ग्रहन करुं.

[३] भोजनका स्वाद लेनेके लीये प्रथम ग्रास मुंहमें डालता हो, वैसा आहार ग्रहन करुं.

तथा ऐसा भी कहते है-ग्रहन करता हुवा तथा प्रथमग्रास आस्वादन करता हुवा देवे तो मेरे आहारादि ग्रहन करना. अभिग्रह करनेपर वैसाही आहार मिले तो लेना, नहीं तो अनादरपणे ही परीसहरुप शत्रुओंका पराजय कर मोक्षमार्गका साधन करते रहना. इति.

श्री व्यवहार सूत्र नौवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

(१०) दशवां उद्देशा.

(१) भगवान् वीर प्रभुने दोय प्रकारकी प्रतिमा (अभिग्रह) फरमाइ है.

[१] वज्र मध्यम चंद्रप्रतिमा-वज्रका आदि और अन्त विस्तारवाला तथा मध्य भाग पतला होता है.

[२] यवमध्यम चंद्रप्रतिमा-यवका आदि अन्त पतला और मध्य भाग विस्तारवाला होता है.

इसी माफिक मुनि तपश्चर्या करते है. जिसमें यवमध्यचंद्र प्रतिमा धारण करनेवाले मुनि एक मास तक अपने शरीर संरक्षणका त्याग कर देते है. जो देव मनुष्य तिर्यंच संबंधी कोइ भी परीसह उत्पन्न होते है उसे सम्यक् प्रकारसे सहन करते है. वह परीसह भी दो प्रकारके होते है.

[१] अनुकुल—जो वन्दन, नमस्कार पूजा सत्कार करनेसे राग केसरी खडा होता है. अर्थात् स्तुतिमें हर्ष नहीं.

[२] प्रतिकूल—दंडासे मारे, जोतसे, बेंतसे मारे पीटे, आक्रोश वचन बोले, उस समय द्वेष गजेन्द्र खडा होता है.

इस दोनों प्रकारके परीषहको जीते यवमध्यम प्रतिमा धारी मुनिको शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको एक दात आहार और एक दात पाणी लेना कल्पै. दूजको दो दात, तीजको तीन दात, यावत् पूर्णिमाको पंद्रह दात आहार और पंद्रह दात पाणी लेना कल्पै. आहारकी विधि जो ग्राम, नगरमें भिक्षाचर भिक्षा लेकर निवृत्त हो गये हो, अर्थात् दो प्रहर (दुपहर) को भिक्षाके लीये जावे. चंचलता, चपलता, आतुरता रहित जो एकेला भोजन करता हो, दुपद, चतुष्पद न वंछे ऐसा नीरस आहार हो, सोभी एक पग दरवाजाकी अन्दर, और एक पग दरवाजाके बाहार, वह भी खरडे हाथोंसे देवे, तो लेना कल्पै. परन्तु दो, तीन, यावत् बहुतसे जन एकत्र हो, भोजन करते हो वहांसे न कल्पै. बालकके लीये, गर्भवतीके लीये, ग्लानके लीये कीया हुवा भी नहीं कल्पै. बच्चाओंको दुध पान करातीको छोडाके देवे तो भी नहीं कल्पै. इत्यादि एषणीय आहार पूर्ववत् लेना कल्पै.

कृष्णपक्षकी प्रतिपदाको चौदह दात, दूजको तेरह दात, यावत् चतुर्दशीको एक दात आहार, और एक दात पाणी लेना कल्पै, तथा अमावस्याको चौविहार उपवास करना कल्पै. और सूत्रोंमें इसका कल्पमार्ग बतलाया है; इसी माफिक पालन करनेसे यावत् आज्ञाका आराधक हो सक्ता है.

वज्र मध्यम चन्द्र प्रतिमा स्वीकार करनेवाले मुनियोंको यावत् अनुकूल प्रतिकूल परीसह सहन करे. इस प्रतिमाधारी मुनि, कृष्णपक्षकी प्रतिपदाको पंद्रह दात आहार और पंद्रह दात पाणी, यावत् अमावस्याको एक दात आहार, एक दात पाणी लेना कल्पै. शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको दोय दात आहार दोय दात पाणी लेना कल्पै. यावत् शुक्लपक्षकी चतुर्दशीको पंद्रह दात आहार, पंद्रह दात पाणी, और पुर्णिमाको चौविहार उपवास करना कल्पै यावत् सम्यक् प्रकारसे पालन करनेसे आज्ञाका आराधक होता है. यह दोनों प्रतिमामें आहारका जैसे जैसे अभिग्रह कर भिक्षा निमित्त जाते है, वैसा वैसाही आहार मिलनेसे आहार करते है. अगर ऐसा आहार न मिले तो, उस रोज उपवासही करते है.

(२) पांच प्रकारके व्यवहार है—

[१] आगमव्यवहार. [२] सूत्रव्यवहार. [३] आज्ञाव्यवहार. [४] धारणाव्यवहार. [५] जीतव्यवहार.

(१) आगमव्यवहार—जैसे अरिहंत, केवली, मनःपर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी, जातिस्मरण ज्ञानी, चौदह पूर्वधर, दश पूर्वधर, श्रुतकेवली—यह सब आगम व्यवहारी है. इन्होंके लीये कल्प-कायदा नहीं है. कारण—अतिशय ज्ञानवाले भूत, भविष्य, वर्तमानमें लाभालाभका कारण जाने, वैसी प्रवृत्ति करे.

(२) सूत्रव्यवहार—अंग, उपांग, मूल, छेदादि जिस कालमें जितने सूत्र हो, उसके अनुसार प्रवृत्ति करना, उसे सूत्र व्यवहार कहते है.

(३) आज्ञाव्यवहार—कितनी एक बातोंका सूत्रमें प्रतिपादन भी नहीं है, परन्तु उसका व्यवहार पूर्व महर्षियोंकी आज्ञासे ही चलता है.

(४) धारणाव्यवहार—गुरुमहाराज जो प्रवृत्ति करते थे, आलोचना देते थे, तब शिष्य उस बातकी धारणा कर लेते थे. उसी माफिक प्रवृत्ति करना यह धारणा व्यवहार है.

(५) जीतव्यवहार—जमाना जमानाके बल, संहनन, शक्ति, लोकव्यवहार आदि देख अशठ आचार, शासनको पथ्यकारी हो, भविष्यमें निर्वाहा हो, ऐसी प्रवृत्तिको जीतव्यवहार कहते है.

आगम व्यवहारी हो, उस समय आगम व्यवहारको स्थापन करे, शेष च्यारों व्यवहारको आवश्यक्ता नहीं है. आगम व्यवहारके अभावमें सूत्र व्यवहार स्थापन करे, सूत्र व्यवहारके अभावमें आज्ञा व्यवहार स्थापन करे, आज्ञा व्यवहारके अभावमें धारणा व्यवहार स्थापन करे, धारणा व्यवहारके अभावमें जीत व्यवहार स्थापन करे.

प्रश्न—हे भगवन्! एसे किस कारणसे कहते हो ?

उत्तर—हे गौतम ! जिस जिस समयमें जिस जिस व्यवहारकी आवश्यक्ता होती है, उस उस समय उस उस व्यवहार माफिक प्रवृत्ति करनेसे जीव आज्ञाका आराधक होता है.

भावार्थ—व्यवहारके प्रवृतानेवाले निःस्पृही महात्मा होते

है. वह द्रव्य क्षेत्र काल भाव देखके प्रवृत्ति करते है. किसी अपेक्षासे आगमव्यवहारी सूत्रव्यवहारकी प्रवृत्ति, सूत्रव्यवहारी आज्ञाव्यवहारकी प्रवृत्ति, आज्ञाव्यवहारी धारणाव्यवहारकी प्रवृत्ति, धारणाव्यवहारी जीतव्यवहारकी प्रवृत्ति-अर्थात् एक व्यवहारी दुसरे व्यवहारकी अपेक्षा रखते है, उस अपेक्षा संयुक्त व्यवहार प्रवृतानेसे जिनाज्ञाका आराधक हो सक्ता है.

(३) च्यार प्रकारके पुरुष (साधु) कहे जाते है.

[१] उपकार करते है, परन्तु अभिमान नहीं करे.

[२] उपकार तो नहीं करे, किन्तु अभिमान बहुत करे.

[३] उपकार भी करे और अभिमान भी करे.

[४] उपकार भी नहीं करे और अभिमान भी नहीं करे.

(४) च्यार प्रकारके पुरुष (साधु) होते है.

[१] गच्छका कार्य करे परन्तु अभिमान नहीं करे.

[२] गच्छका कार्य नहीं करे, खाली अभिमान ही करे.

[३] गच्छका कार्य भी करे, और अभिमान भी करे.

[४] गच्छका कार्य भी नहीं करे, और अभिमान भी नहीं करे.

(५) च्यार प्रकारके पुरुष होते है.

[१] गच्छकी अन्दर साधुवोंका संग्रह करे, किन्तु अभिमान नहीं करे.

[२] गच्छकी अन्दर साधुवोंका संग्रह नहीं करे, परन्तु अभिमान करे.

[३] गच्छकी अन्दर साधुवोंका संग्रह करे और अभिमान भी करे.

[४] गच्छकी अन्दर साधुवोंका संग्रह भी नहीं करे, और अभिमान भी नहीं करे, एवं वस्त्र, पात्रादि.

(६) च्यार प्रकारके पुरुष होते है—

[१] गच्छके छते गुण दीपावे, शोभा करे, परन्तु अभिमान नहीं करे एवं चौभंगी.

(७) च्यार प्रकारके पुरुष होते है.

[१] गच्छकी शुश्रूषा (विनय भक्ति) करते है, किन्तु अभिमान नहीं करते. एवं चौभंगी.

एवं गच्छकी अन्दर जो साधुवोंको अतिचारादि हो, तो उन्होंको आलोचना करवाके विशुद्ध करावे.

(८) च्यार प्रकारके पुरुष होते है—

[१] रुप-साधुका लिंग, रजोहरण, मुखवस्त्रिकादिको छोडे (दुष्कालादि तथा राजादिका कोप होनेसे समयको जानके रुप छोडे) परन्तु जिनेन्द्रका श्रद्धारुप धर्मको नहीं छोडे.

[२] रुपको नहीं छोडे (जमालीवत्) किन्तु धर्मको छोडे.

[३] रुप और धर्म-दोनोंको नहीं छोडे.

[४] रुप और धर्म-दोनोंको छोडे, जैसे कुलिंगी श्रद्धासे भ्रष्ट और संयमरहित.

(९) च्यार प्रकारके पुरुष होते है—

[१] जिनाज्ञारुप धर्मको छोडे, परन्तु गच्छमर्यादाको नहीं छोडे. जैसे गच्छमर्यादा है कि-अन्य संभोगीको वाचना नहीं देना, और जिनाज्ञा है कि-योग्य हो उस सबको वाचना देना. गच्छमर्यादा रखनेवाला सबको वाचना न देवे.

[२] जिनाज्ञा रखे, परन्तु गच्छमर्यादा नहीं रखे.

[३] दोनों रखे.

[४] दोनों नहीं रखे.

भावार्थ—द्रव्यक्षेत्र देखके आचार्यमहाराज मर्यादावादी हो कि--साधु साधुओंको वाचना देवे, साध्वी साध्वीयोंको वाचना दे. और जिनाज्ञा है कि योग्य हो तो सबको भी आगमवाचना दे. परन्तु देशकालसे आचार्यमहाराजकी मर्यादाका पालन, भविष्यमें लाभका कारण जान करना पडता है.

(१०) च्यार प्रकारके पुरुष होते है—

[१] प्रिय धर्मी—शासनपर पुर्ण प्रेम है, धर्म करनेमें उत्साही है, किन्तु दृढ धर्मी नहीं है, परिषह सहन करने को मन मजबुत रखने में असमर्थ है.

[२] दृढ धर्मी है, परन्तु प्रियधर्मी नहीं है.

[३] दोनों प्रकार है.

[४] दोनों प्रकार असमर्थ है.

(११) च्यार प्रकारके आचार्य होते है—

[१] दीक्षा देनेवाले आचार्य हो, किन्तु उत्थापन नहीं करते है.

[२] उत्थापन करते है, परन्तु दीक्षा देनेवाले नहीं है.

[३] दोनों है.

[४] दोनों नहीं है.

भावार्थ—एक आचार्य विहार करते आये, वह वैरागी शिष्योंको दीक्षा देके वहां निवास करनेवाले साधुवोंको सुप्रत

कर विहार कर गये. उस नव दिक्षित साधुको उत्थापन वडी दीक्षा अन्य आचार्यादि देवे इसी अपेक्षा समझना.

(१२) च्यार प्रकारके आचार्य होते है—

[१] उपदेश करते है, परन्तु वाचना नहीं देते है.
[२] वाचना देते है, किन्तु उपदेश नहीं करते है.
[३] दोनों करते है.
[४] दोनों नहीं करते है.

भावार्थ—एक आचार्य उपदेश कर दे कि—अमुक साधुको अमुक आगमकी वाचना देना वह वाचना उपाध्यायजी देवे. कोइ आचार्य ऐसे भी होते है कि—आप खुद अपने शिष्य समुदायको वाचना देवे.

(१३) धर्माचार्य महाराजके च्यार अन्तेवासी शिष्य होते है—

[१] दीक्षा दीया हुवा शिष्य पासमें रहै, परन्तु उत्थापन कीया हुवा शिष्य पासमें नहीं मिले.
[२] उत्थापनवाला मिले, परन्तु दीक्षावाला नहीं मिले.
[३] दोनों पासमें रहै.
[४] दोनों पासमें नहीं मिले.

भावार्थ—आचार्य महाराज अपने हाथसे लघु दीक्षा दी, उसको वडी दीक्षा किसी अन्य आचार्यने दी. वह शिष्य अपने पासमें है. और अपने हाथसे उत्थापन (वडी दीक्षा) दी, वह साधु दुसरे गणविच्छेदक के पास है. तथा लघु दीक्षावाला अन्य साधुवोंके पास है, आपके पास सब वडी दीक्षावाले है.

(१४) आचार्य महाराजके पास च्यार प्रकारके शिष्य रहते है—

[१] उपदेश दीये हुवे पासमें है, किन्तु वाचना दीया वह पासमें नहीं है.

[२] वाचनावाला पासमें है, किन्तु उपदेशवाला पासमें नहीं है.

[३] दोनों पासमें है.

[४] दोनों पासमें नहीं है.

भावार्थ—पुर्ववत्.

एवं च्यार सूत्र धर्माचार्य और धर्म अन्तेवासी के है. लघु दीक्षा, वडीदीक्षा उपदेश और वाचनाकी भावना पुर्ववत् एवं १८ सूत्र.

(१९) स्थविर महाराजकी तीन भूमिका होती है—

[१] जाति स्थविर.

[२] दीक्षा स्थविर.

[३] सूत्र स्थविर.

जिसमें साठ वर्षकी आयुष्यवाला जातिस्थविर है, वीश वर्ष दीक्षावाला दीक्षा स्थविर है और स्थानांग तथा समवायांग सूत्र—अर्थके जानकार सूत्र स्थविर है.

(२०) शिष्यकी तीन भूमिका है—

[१] जघन्य—दीक्षा देनेके बाद सात दिनके बाद वडी दीक्षा दी जावे.

[२] मध्यम दीक्षा देनेके बाद च्यार मास होनेपर वडी दीक्षा दी जावे.

[३] उत्कृष्ट छे मास होने पर वडी दीक्षा दी जावे.

भावार्थ—लघु दीक्षा देनेके बाद पिंडेषणा नामका अध्य-

यत्न सूत्रार्थ कंठस्थ करलेनेके बादमें वडी दीक्षा दी जावे, उसका काल बतलाया है.

(२१) साधु साध्वीयोंको क्षुल्लक—छोटा लडका, लडकी या आठ वर्षसे कम उम्मरवालाकों दीक्षा देना, वडीदीक्षा देना, शिक्षा देना, साथमें भोजन करना, सामेल रहना नहीं कल्पै.

भावार्थ—जबतक वह बालक दीक्षाका स्वरुपको भी नहीं जाने, तो फिर उसे दीक्षा दे अपने ज्ञानादिमें व्याघात करनेमें क्या फायदा है? अगर कोइ आगम व्यवहारी हो, वह भविष्यका लाभ जाने तो वह एसेको दीक्षा दे भी सक्ता है।

(२२) साधु साध्वीयोंको आठ वर्षसे अधिक उम्मरवाला वैरागीको दीक्षा देना कल्पै, यावत् उसके सामेल रहना.

(२३) साधु साध्वीयोंको, जो बालक साधु साध्वी जिसकी कक्षामें बाल (रोम) नहीं आया हो, ऐसोंको आचारांग और निशीथसूत्र पढाना नहीं कल्पै.

(२४) साधु साध्वीयोंको जिस साधु साध्वीकी काखमें रोम (बाल) आया हो, विचारवान् हो, उसे आचारांग सूत्र और निशीथसूत्र पढाना कल्पै.

(२५) तीन वर्षोंके दीक्षित साधुवोंको आचारांग और निशीथ सूत्र पढाना कल्पै. निशीथसूत्रका फरमान है कि जो आगम पढनेके योग्य हो, धीर, गंभीर, आगम रहस्य समझनेमें शक्तिमान हो उसे आगमोंका ज्ञान देना चाहिये.

(२६) च्यार वर्षोंके दीक्षित साधुवोंको सूयगडांग सूत्रकी वाचना देना कल्पै.

(२७) पांच वर्षोंके दिक्षित साधुवोंको दश कल्प और व्यवहारसूत्रकी वाचना देना कल्पै.

(२८) आठ वर्षोंके दीक्षित साधुवोंको स्थानांग और समवायांग सूत्रकी वाचना देना कल्पै.

(२९) दश वर्षोंके दीक्षित साधुवोंको पांचवा आगम भगवती सूत्रकी वाचना देना कल्पै.

(३०) इग्यारा वर्षोंके दीक्षित साधुवोंको क्षुल्लक प्रवृत्ति, विमाण महविमाण प्रवृत्ति, अंगचुलीया, वंगचुलीया, व्यवहारचुलीया अध्ययनकी वाचना देना कल्पै.

(३१) बारहा वर्षोंके दीक्षित मुनिको अरुणोपात, गरुलोपात, धरणोपात, वैशमणोपात, वेलंधरोपात नामका अध्ययनकी वाचना देना कल्पै,

(३२) तेरहा वर्षोंके दीक्षित मुनिको उत्थानसूत्र, समुत्थानसूत्र, देवेन्द्रोपात, नागपर्यायसूत्रकी वाचना देना कल्पै.

(३३) चौदा वर्षोंके दीक्षित मुनिको स्वपनभावना सूत्रकी वाचना देना कल्पै.

(३४) पन्दर वर्षोंके दीक्षित मुनिको चरणभावना सूत्रकी वाचना देना कल्पै.

(३५) सोला वर्षोंके दीक्षित मुनिको वेदनीशतक नामका अध्ययनकी वाचना देना कल्पै.

(३६) सत्तरा वर्षोंके दीक्षित मुनिको आसीविषभावना नामका अध्ययनकी वाचना देना कल्पै.

(३७) अठारा वर्षोंके दीक्षित मुनिको दृष्टिविषभावना नामका अध्ययनकी वाचना देना कल्पै.

(३८) एकोनविंश वर्षोंके दीक्षित मुनिको दृष्टिवाद अंगकी वाचना देना कल्पै.

(३९) बीश वर्षोंके दीक्षित साधुको सर्व सूत्रोंकी वाचना देना कल्पै. अर्थात् स्वसमय, परसमयके सर्व ज्ञान पठन पाठन करना कल्पै.

(४०) दश प्रकारकी वैयावच्च करनेसे कर्मोंकी निर्जरा और संसारका अन्त होता है. आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, नवशिष्य, ग्लान मुनि, कुल, गण, संघ, स्वधर्मी इस दशोंकी वैयावच्च करता हुवा जीव संसारका अन्त और कर्मोंकी निर्जरा कर अक्षय सुखको प्राप्त कर लेता है.

इति दशवां उद्देशा समाप्त.

इति श्री व्यवहारसूत्रका संक्षिप्त सार समाप्त

॥ श्री रत्नप्रभसूरि सद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथ श्री

शीघ्रबोध भाग २२ वां.

(श्रीनिशीथ सूत्र.)

निशीथ—आचारांगादि आगमोंमें मुनियोंका आचार बतलाया है, उस आचारसे स्खलना पाते हुवे मुनियोंको नशियत देनेरुप यह निशिथसूत्र है. तथा मोक्षमार्गपर चलते हुवे मुनियोंको प्रमादादि चौर उन्मार्गपर ले जाता हो, उस मुनियोंको हितशिक्षा दे सन्मार्गपर लानेरुप यह निशिथसूत्र है.

शास्त्रकारोंका निर्देश वस्तुतत्त्व बतलानेका है, और वस्तुतत्त्वका स्वरुप सम्यक् प्रकारसे समझना उसीका नाम ही सम्यग्ज्ञान है,

धर्मनीतिके साथ लोकनीतिका घनिष्ठ संबंध है. जैसे लोकनीतिका नियम है कि—अमुक अकृत्य कार्य करनेवाला मनुष्य, अमुक दंडका भागी होता है. इससे यह नहीं समझा जाता है कि सब लोग ऐसे अकृत्य कार्य करते होंगे. इसी माफिक धर्मशास्त्रोंमें भी लिखा है कि—अमुक अकृत्य कार्य करनेवालेको अमुक प्रायश्चित्त दिया जाता है. इसीसे यह नहीं समझा जावे कि—सब धर्मज्ञ अमुक अकृत्य कार्य करनेवाले होंगे. हां, धर्मशास्त्र और नीतिका फरमान है कि—अगर कोइभी अकृत्य कार्य करेगा,

वह अवश्य दंडका भागी होगा. यह उद्देश दुराचारसे बचाना और सदाचारमें प्रवृत्ति करानेके लीये ही है. दुराचार सेवन करना मोहनीय कर्मका उदय है, और दुराचारके स्वरुपको समझना यह ज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशम है, दुराचारको त्याग करना यह चारित्र मोहनीयकर्मका क्षयोपशम है.

जब दुराचारका स्वरुपको ठीक तौरपर जान लेगा, तब ही उस दुराचार प्रति घृणा आवेगी. जब दुराचार प्रति घृणा आवेगी, तब ही अंतःकरणसे त्यागवृत्ति होगी. इसवास्ते पेस्तर नीतिज्ञ होनेकी खास आवश्यक्ता है. कारण—नीति धर्मकी माता है. माताही पुत्रको पालन और वृद्धि कर सक्ती है.

यहां निशिथसूत्रमें मुख्य नीतिके साथ सदाचारका ही प्रतिपादन कीया है. अगर उस सदाचारमें वर्त्तते हुवे कभी मोहनीय कर्मोदयसे स्खलना हो, उसे शुद्ध बनानेको प्रायश्चित्त बतलाया है. प्रायश्चित्तका मतलब यह है कि—अज्ञातपनेसे एकदफे जिस अकृत्य कार्यका सेवन किया है उसकी आलोचना कर दूसरी बार उस कार्यका सेवन न करना चाहिये.

यह निशिथसूत्र राजनीतिके माफिक धर्मकानुनका खजाना है. जबतक साधु साध्वी इस निशिथसूत्ररुप कानुनकोषको ठीक तौरपर नहीं समझे हो, वहांतक उसे अग्रेसरपदका अधिकार नहीं मिल सक्ता है. अग्रेसरकी फर्ज है कि—अपने आश्रित रहे हुवे साधु साध्वीयोंको सन्मार्गमें प्रवृत्ति करावे. कदाच उसमें स्खलना हो तो इस निशिथसूत्रके कानुन अनुसार प्रायश्चित्त दे उसे शुद्ध बनावे. तात्पर्य यह है कि साधु साध्वी जबतक आचारांग और निशिथसूत्र गुरुगमतासे नहीं पढे हो, वहांतक उस मुनियोंको अग्रेसर होके विहार करना, व्याख्यान देना, गोचरी जाना नहीं

कल्पे. वास्ते आचार्यश्रीको भी चाहिये कि अपने शिष्य शिष्यणीयोंको योग्यता पूर्वक पेस्तर आचारांगसूत्र और निशिथसूत्रकी वाचना दे. और मुनियोंको भी प्रथम इसका ही अभ्यास करना चाहिये. यह मेरी नम्रता पूर्वक विनंती है.

संकेत—

(१) जहांपर ३ तीनका अंक रखा जावेगा, उसे—यह कार्य स्वयं करे नहीं, अन्य साधुवोंसे करावे नहीं, अन्य कोइ साधु करते हो उसे अच्छा समझे नहीं–उसको सहायता देवे नहीं.

(२) जहांपर केवल मुनिशब्द या साधुशब्द रखा हो वहां साधु और साध्वीयों दोनों समझना चाहिये. जो साधुके साथ घटना होती है, वह साधु शब्दके साथ जोड देना और साध्वीयोंके साथ घटना होती हो, वह साध्वीशब्दके साथ जोड देना.

(३) लघु मासिक, गुरु मासिक, लघुचातुर्मासिक, गुरु चातुर्मासिक तथा मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, चतुर्मासिक, पंच मासिक और छे मासिक—इस प्रायश्चित्तवालोंकी क्या क्या प्रायश्चित्त देना, उसके बदलेमें आलोचना सुनके प्रायश्चित्त देनेवाले गीतार्थ—बहुश्रुतजी महाराज पर ही आधार रखा जाता है. कारण—आलोचना करनेवाले किस भावोंसे दोष सेवन कीया है, और किस भावोंसे आलोचना करी है, कितना शारीरिक सामर्थ्य है, वह द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव देखके ही शरीर तथा संयमका निर्वाह करके ही प्रायश्चित देते है. इस विषयमें वीसवां उद्देशामें कुछ खुलासा कीया गया है. अस्तु.

(१) अथ श्री निशिथसूत्रका प्रथम उद्देशा.

जो भिख्खु—अष्ट कर्मोंरुप शत्रुदलको भेदनेवालोंको भिक्षु कहा जाता है. तथा निरवद्य भिक्षा ग्रहण कर उपजीविका करणेवालोंको भिक्षु कहा जाता है. यहां भिक्षुशब्दसे शास्त्रकारोंने साधु साध्वीयों दोनोंको ग्रहन कीया है. 'अंगादान' अंग—शरीर (पुरुष स्त्री चिन्हरुप शरीर) कुचेष्टा (हस्तकर्मादि) करनेसे चित्तवृत्ति मलीनके कारण कर्मदल एकत्र हो आत्मप्रदेशोंके साथ कर्मबन्ध होता है. उसे 'अंगादान' कहते है.

(१) हस्तकर्म. (२) काष्टादिसे अंग संचलन. (३) मर्दन. (४) तैलादिसे मालीस करना, (५) काष्ठादि सुगन्धी पदार्थका लेप करना. (६) शीतल पाणी तथा गरम पाणीसे प्रक्षालन करना. (७) त्वचादिका दूर करना. (८) घ्राणेंद्रियद्वारा गंध लेना. (९) अचित्त छिद्रादिसे वीर्यपातका करना. यह सूत्र मोहनीय कर्मकी उदीरणा करनेवाले है. ऐसा अकृत्य कार्य साधुवोंको न करना चाहिये. अगर कोइ करेगा, तो निम्न लिखित प्रायश्चित्तका भागी होगा. मोहनीय कर्मकी उदीरणा करनेवाले मुनियोंको क्या नुकशान होता है, वह दृष्टांतद्वारा बतलाया जाता है.

(१) जैसे सुते हुवे सिंहको अपने हाथोंसे उठाना. (२) सुते हुवे सर्पको हाथोंसे मसलना. (३) जाज्वल्यमान अग्निको अपने हाथोंसे मसलना. (४) तिक्षण भालादि शस्त्रपर हाथ मारना. (५) दुखती हुइ आंखोको हाथसे मसलना. (६) आशीविष सर्प तथा अजगर सर्पका मुंहको फाडना. (७) तीक्षण धारवाली तलवारसे हाथ घसना, इत्यादि पूर्वोक्त कार्य करनेवाला मनुष्यको अपना जीवन देना पडता है. अर्थात् सिंह, सर्प,

अग्नि शस्त्रादिसे कुचेष्टा करनेसे कुचेष्टा करनेवालोंको बडा भारी नुकशान होता है. वास्ते मुनि उक्त कार्य स्वयं करे, अन्यके पास करावे, अन्य करते हुवेको आप अच्छा समझ अनुमोदन करे. अ-र्थात् अन्य उक्त कार्य करते हुवेको सहायता करे.

(१०) कोइ भी साधु साध्वी सचित्त गन्ध गुलाब, केवडादि पुष्पोंकी सुगन्ध स्वयं लेवे, लीरावे, लेतेको अनुमोदन करे.

(११) ,, सचित्त प्रतिबद्ध सुगन्ध ले, लीरावे, लेतेको अनुमोदे.

(१२) ,, पाणीवाला रहस्ता तथा कीचडवाला रहस्तापर अन्यतीर्थीयोंके पास अन्यतीर्थीयोंके गृहस्थोंके पास काष्ठ पत्थरादि रखावे, तथा उंचा चढनेके लीये रस्सा सीडी आदि रखावे. (३)

(१३) ,, अन्य तीर्थीयोंसे तथा अन्य० के गृहस्थोंसे पाणी निकालनेकी नाली तथा खाइ गटर करावे. (३)

(१४) ,, अन्य तीर्थीयोंसे, अन्य० के गृहस्थोंसे छीका, छीकाके ढक आदिक करावे. (३)

(१५) ,, अन्य० अन्य० के गृहस्थोंसे सूतकी दोरी, उ-नका कंदोरा नाडी—रसी, तथा चिलमिली (शयन तथा भोजन करते समय जीवरक्षा निमित्त रखी जाती है.) करे. (३)

(१६) ,, अन्य० अन्य० के गृहस्थोंसे सुइ (सूचि) घ-सावे—तीक्षण करावे. (३)

(१७) ,, एवं कतरणी. (१८) नखछेदणी. (१९) का-नसोधणी.

भावार्थ—बारहसे उन्नीसवे सूत्रमें अन्य तीर्थीयों तथा अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थोंसे कार्य करानेकी मना है. कारण—उन्होंसे कार्य करानेसे परिचय बढता है. वह असंयति है, अयतनासे कार्य करे. असंयतियोंके सर्व योग सावद्य है.

(२०) ,, बिगर कारण सुइ, (२१) कतरणी, (२२) नख छेदणी, (२३) कानसोधणीकी याचना करे. (३)

भावार्थ—गृहस्थोंके वहां जानेका कोइभी कारन न होनेपर भी सुइ, कतरणीका नामसे गृहस्थोंके वहां जाके सुइ, कतरणी आदिकी याचना करे.

(२४) ,, अविधिसे सुइ, (२५) कतरणी, (२६) नखछेदणी. (२७) कानसोधणी याचे. (३)

भावार्थ—सुइ आदि याचना करते समय ऐसा कहना चाहिये कि—हम सुइ ले जाते है, वह कार्य हो जानेपर वापिस ला देंगे, अगर ऐसा न कहे तो अविधि याचना कहते है. तथा सुइ आदि लेना हो, तो गृहस्थ जमीनपर रख दे, उसे आज्ञासे उठा लेना. परन्तु हाथोहाथ लेना इसे भी अविधि कहते है, कारण—लेते रखते कहां भी लग जावे, तो साधुवोंका नाम सामेल होता है.

(२८) ,, अपने अकेलेके नामसे सुइ याचके लावे. अपना कार्य होनेके बाद दुसरा साधु मागनेपर उसको देवे. (२९) एवं कतरणी. (३०) नखछेदणी. (३१) कानसोधणी.

भावार्थ—गृहस्थोंको ऐसा कहे कि मैं मेरे कपडे सीनेके लीये सुइ आदि ले जाता हुं, और फिर दुसरोंको देनेसे सत्यवचनका लोप होता है. दुसरे साधु मांगनेपर न देनेसे उस साधुके दिलमें रंज होता है. वास्ते उपयोगवाला साधु किसीका भी नाम खोलके नहीं लावे. अगर लावे तो सर्व साधु समुदायके लीये लावे.

(३२) ,, कार्य होनेसे कोइ भी वस्तु लाना और कार्य हो जानेसे वह वस्तु वापिस भी दी जावे उसे शास्त्रकारोंने 'पडि-

हारियं ' कहते है. अर्थात् उसे सरचीणी भी कहते है. वस्त्र सीनेके नामसे सुइकी याचना करी, उस सुइसे पात्र सीवे, इसी माफिक.

(३३) वस्त्र छेदनेके नामसे कतरणी लाके पात्र छेदे.

(३४) नख छेदनेके नामसे नखछेदणी लाके कांटा नीकाले.

(३५) कानका मेल निकालनेके नामसे कानसोधणी लाके दांतोका मेल निकाले.

भावार्थ—एक कार्यका नाम बोलके कोइ भी वस्तु नही लाना चाहिये. कारण-अपने तो एक ही कार्य हो, परन्तु उसी वस्तुसे दुसरे साधुवोंको अन्य कार्य हो, अगर वह साधु दुसरे साधुवोंको न देवे, तो भी ठीक नहीं. और देवे तो अपनी प्रतिज्ञा का भंग होता है वास्ते पेस्तर याचना ही ठीकसर करना चाहिये. अर्थात् साधु ऐसा कहे कि हमको इस वस्तुका खप है. अगर गृहस्थ पूछे कि—हे मुनि ! आप इस वस्तुको क्या करोगे ? तब मुनि कहे कि-हमारे जिस कार्यमें जरुरत होगी, उसमें काम लेंगे.

(३६) ,, सुइ वापिस देते वखत अविधिसे देवे.

(३७) कतरणी अविधिसे देवे.

(३८) एवं नखछेदणी अविधिसे देवे.

(३९) कानसोधणी अविधिसे देवे.

भावार्थ—सुइ आदि देते समय गृहस्थोंको हाथोहाथ देवे. तथा इधर उधर फेंकके चला जावे, उसे अविधि कहते है. कारण—गृहस्थोंके हाथोहाथ देनेमें कभी हाथमें लग जावे तो साधुका नाम होता है. इधर उधर फेंक देनेसे कोइ पक्षी आदि भक्षण करनेसे जीवघात होता है.

(४०) ,, तुंबाका पात्र, काष्ठका पात्र, मट्टीका पात्र जो अन्यतीर्थीयों तथा गृहस्थोंसे घसावे, पुंछावे, विषमका सम करावे,

समका विषम करावे, नये पात्रा तैयार करावे, तथा पात्रों संबंधी स्वल्प भी कार्य गृहस्थोंसे करावे. ३

भावार्थ—गृहस्थोंका योग सावद्य है. अयतनासे करे. मातेतगी रखना पडे, उसकी निष्पत् पैसा दीलाना पडे. इत्यादि दोषोंका संभव है.

(४१) ,, दांडा (कान परिमाण) लट्ठी (शरीर परिमाण), चीपटी लकडी तथा वांसकी खापटी, कर्दमादि उतारनेके लीये और वांसकी सुइ रजोहरणकी दशी पोनेके लीये—उसको अन्यतीर्थीयों तथा गृहस्थोंके पास समरावे, अच्छी करावे, विषमकी सम करावे इत्यादि. भावना पूर्ववत्.

(४२) ,, पात्राको एक थेगला (कारी) लगावे. ३

भावार्थ—विगर फूटे शोभाके निमित्त तथा बहुत दिन चलनेके लोभसे थेगलो (कारी) लगावे. ३

(४३) ,, पात्राके फूट जानेपर भी तीन थेगलेसे अधिक लगावे.

(४४) वह भी विना विधि, अर्थात् अशोभनीय, जो अन्य लोग देख हीलना करे, ऐसा लगावे. ३

(४५) पात्राको अविधिसे बांधे, अर्थात् इधर उधर शिथिल बन्धन लगावे.

(४६) विना कारण एक भी बन्धनसे बांधे. ३

(४७) कारण होनेपर भी तीन बन्धनोंसे अधिक बन्धन लगावे.

(४८) अगर कोइ आवश्यक्ता होनेपर अधिक बन्धनवाला पात्रा भी ग्रहन करनेका अवसर हुवा तो भी उसे देढ माससे अधिक रखे. ३

(४९) ,, वस्त्रको एक थेगला (कारी) लगावे, शोभाके लीये.

(५०) कारन होनेपर तीन थेगलेसे अधिक लगावे. ३

(५१) अविधिसे वस्त्र सीवे. ३

(५२) वस्त्रके कारन विना एक गांठ देवे.

(५३) जीर्ण वस्त्रको चलानेके लीये तीन गांठसे अधिक देवे.

(५४) ममत्वभावसे एक गांठ देके वस्त्रको बांध रखे.

(५५) कारन होनेपर तीन गांठसे अधिक देवे.

(५६) वस्त्रको अविधिसे गांठ देवे.

(५७) मुनि मर्यादासे अधिक वस्त्रकी याचना करे. ३

(५८) अगर किसी कारणसे अधिक वस्त्र ग्रहन कीया है, उसे देढ माससे अधिक रखे. ३

भावार्थ—वस्त्र और पात्र रखते है, वह मुनि अपनी संयमयात्राका निर्वाहके लीये ही रखते है. यहांपर पात्र और वस्त्रके सूत्रों बतलाये है. उसमें खास तात्पर्य प्रमादकी तथा ममत्वभावकी वृद्धि न हो और मुनि हमेशां लघुभूत रहके स्वहित साधन करे.

(५९) ,, जिस मकानमें साधु ठेरे हो, उस मकानमें धुवा जमा हुवा हो, कचरा जमा हुवा हो, उसे अन्यतीर्थीयों तथा उन्होंके गृहस्थोंसे लीरावे, साफ करवावे. ३

(६०) ,, पूतिकर्म आहार—एषणीय, निर्दोष आहारकी अन्दर एक सीत मात्र भी आधाकर्मी आहारकी मिल गइ हो, अथवा सहस्र घरके अन्तरे भी आधाकर्मी आहारका लेप भी शुद्ध आहारमें मिश्रित हो, एसा आहार ग्रहन करे. ३

उपर लिखे हुवे ६० बोलोंसे कोइभी बोल, मुनि स्वयं से-

वन करे, अन्य कोइके पास सेवन करावे, अन्य कोइ सेवन करता हो उसे अच्छा समझे, उस मुनिको गुरु मासिक प्रायश्चित्त होता है गुरुमासिक प्रायश्चित्त किसको कहते है, वह इसी निशिथ सूत्रके वीसवां उद्देशामें लिखा जावेगा.

इति श्री निशिथसूत्र–प्रथम उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(२) श्री निशिथसूत्रका दूसरा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' काष्ठकी दंडीका रजोहरण अर्थात् काष्ठकी दंडीके उपर एक सूतका तथा उनका वस्त्र लगाया जाता है, उसे ओघारीया (निशितीया) कहते है. उस ओघारीया रहित मात्र काष्ठकी दंडीका ही रजोहरण आप स्वयं करे, करावे, अनुमोदे. (२) एवं काष्ठकी दंडीका रजोहरण ग्रहन करे. ३ (३) एवं धारण करे. ३ (४) एवं धारण कर ग्रामानुग्राम विहार करे. ३ (५) दुसरे साधुवोंको ऐसा रजोहरण रखनेकी अनुज्ञा दे. ३

(६) आप रखके उपभोगमें लेवे.

(७) अगर ऐसाही कारण होनेपर काष्ठकी दंडीका रजोहरण रखा भी हो तो देढ (१॥) माससे अधिक रखा हो.

(८) काष्ठकी दंडीका रजोहरणको शोभाके निमित्त धोवे, धूपादि देवे.

भावार्थ—रजोहरण साधुवोंका मुख्य चिन्ह है. और शास्त्रकारोंने रजोहरणको धर्मध्वज कहा है. केवल काष्ठकी दंडी होनेसे अन्य जीवोंको भयका कारण होता है. इधर उधर पडजानेसे

जीवादिको तकलीफ होती है. तथा प्रतिमा प्रतिपन्न श्रावक होता है, वह काष्ठकी दंडीका रजोहरण रखता है. उसीका अलग पण भी वस्त्र विहीन रजोहरण मुनि रखनेसे होता है. इसी वास्ते वस्त्रयुक्त रजोहरण मुनियोंको रखनेका कल्प है. कदाच ऐसा कारण हो तो दोढ मास तक वस्त्र रहित भी रख सक्ते है.

(९) ,, अचित्त प्रतिबद्ध सुगंधको सुंघे. ३

(१०) ,, पाणीके मार्गमें तथा कीचड—कर्दम के मार्गमें काष्ट, पत्थर तथा पाटों और उंचे चढनेके लीये अवलंबन मुनि स्वयं करे ३

(११) एवं पाणीकी खाइ, नालों स्वयं करे.

(१२) एवं छीका ढकण करे.

(१३) सूत, उन, सणादिकी रसी-दोरी करे, तथा चिलमिली आदिकी दोरी वटे. ३

(१४) ,, सुइको घसे.

(१५) कतरणी घसे.

(१६) नखछेदणी घसे.

(१७) कानसोधणी—मुनि आप स्वयं घसे, तीक्षण करे. ३

भावार्थ—भांगे, तूटे तथा हाथमें लगनेसे रक्त निकले तो अस्वाध्याय हो प्रमाद वडे गृहस्थोंको शंका इत्यादि दोष है.

(१८) ,, स्वल्प ही कठोर वचन, अमनोज्ञ वचनबोले. ३

(१९) ,, स्वल्प ही मृषावाद वचन बोले. ३

(२०) ,, स्वल्प ही अदत्तादान ग्रहन करे. ३

(२१) ,, स्वल्प ही हाथ, पग, कान, आंख, नख, दांत, मुंह—शीतल पाणीसे तथा गरम पाणीसे एकवार धोवे वा वारंवार धोवे. ३

(२२) ,, अखंडित चर्म अर्थात् संपूर्ण चर्म मृगछालादि रखे. ३

भावार्थ—विशेष कारण होनेपर साधु चर्मकी याचना करते है, वह भी एक खंडे सारखे.

(२३) ,, संपूर्ण वस्त्र रखे. ३

भावार्थ—संपूर्ण वस्त्रकी प्रतिलेखन ठीक तौरपर नहीं होती है, चौरादिका भय भी रहता है.

(२४) ,, अगर संपूर्ण वस्त्र लेनेका काम भी पड जावे, तो भी उसको काममें आने योग टुकडे कीया विगर रखे. ३

(२५) ,, तुंबा, काष्ठ, मट्टीका पात्रको आप स्वयं घसे, समारे, सुन्दर आकारवाला करे. ३

भावार्थ—प्रमादादिकी वृद्धि और स्वाध्याय ध्यानमें विघ्न होता है.

(२६) एवं दंड, लठ्ठी, खापटी, वंस, सुइ स्वयं घसे, समारे, सुन्दर बनावे. ३

(२७) ,, साधुवोंके पूर्व संसारी न्यातोले थे, उन्होंकी सहायतासे पात्रकी याचना करे. ३

(२८) ,, न्यातीके सिवाय दुसरे लोगोंकी सहायतासे पात्रकी याचना करे.

(२९) कोइ महान् पुरुष (धनाढ्य) तथा राजसतावालाकी सहायतासे

(३०) कोइ बलवानकी सहायतासे.

(३१) पात्र दातारको पात्रदानका अधिकाधिक लाभ बतलाके पात्र याचे. ३

भावार्थ—साधु दीनतासे उक्त न्यातीलादिकों कहे कि—हमारे पात्रकी जरुरत है. आप साथ चलके मुझे पात्र दीला दो. आप साथमें न चलोगे, तो हमे पात्र कोइ न देगा तथा न्यातीलादि साधुवोंके लीये पात्रयाचनाकी कोशीष कर, साधुको पात्र दीलावे. अर्थात् मुनियोंको पराधीन न होना चाहिये.

(३२) ,, नित्यपिंड (आहार) भोगवे. ३

(३३) ,, अग्रपिंड अर्थात् पहेले उतरी हुइ रोटी आदिको गृहस्थ, गाय कुत्तेको देते है—ऐसा आहार भोगवे. ३

(३४) ,, हमेशां भोजन बनावे उसे आधा भाग दानार्थ नीकलते हो, ऐसा आहार तथा अपनी आमदानीसे आधा हिस्सा पुन्यार्थ निकाले, उससे दानशालादि खोले. ऐसा आहार लेवे. ३

(३५) ,, नित्य भाग अर्थात् अमुक भागका आहार दीनादिको देना—ऐसा नियम कीया हो, ऐसा आहार लेवे—भोगवे. ३

(३६) ,, पुन्यार्थ नीकाला हुवा आहारसे किंचित् भाग भी भोगवे. ३

भावार्थ—जो गृहस्थ दानार्थ, पुन्यार्थ निकाला भोजन दीन गरीबोंको दीया जाता है. उसे साधु ग्रहन करनेसे उस भिक्षाचर लोगोंको अंतराय होगा. अथवा अन्य भी आधाकर्मी, उद्देशिक आदि दोषका भी संभव होगा.

(३७) ,, नित्य एकही स्थानमें निवास करे. ३

भावार्थ—विगर कारण एक स्थानपर रहनेसे गृहस्थ लोगोंका परिचय बढ जानेपर रागद्वेषकी वृद्धि होती है.

(३८) ,, पहले अथवा पीछे दानेश्वर दातारकी तारीफ (प्रशंसा) करे. ३

भावार्थ—जैसे चारण, भाट, भोजकादि, दातारोंकी तारीफ करते है, उसी माफीक साधुवोंको न करना चाहिये. वस्तुतत्व-स्वरुप अवसरपर कह भी सक्ते है.

(३९) ,, शरीरादि कारणसे स्थिरवास रहे हुवे तथा ग्रामानुग्राम विहार करते हुवे जिस नगरमें गये है. वहांपर अपने संसारी पूर्व परिचित जैसे मातापितादि पीछे सासु सुसरा उन्होंके घरमें पहिले प्रवेश कर पीछे गौचरी जावे. ३

भावार्थ—पहिले उन लोगोंको खबर होनेसे पूर्व स्नेहके मारे सदोष आहारादि बनावे. आधाकर्मी आहारका भी प्रसंग होता है.

(४०) ,, अन्य तीर्थीयोंके साथ, गृहस्थोंके साथ, प्रायश्चि-त्तीयें साधुवोंके साथ तथा मूल गुणोंसे पतित ऐसे पासत्थादिके साथ, गृहस्थोके वहां गौचरी जावे. ३

भावार्थ—अन्य तीर्थीयादिके साथ जानेसे लोगोंको शंका होगी कि—यह सब लोग आहार एकत्र ही लाते होंगे, एकत्र ही करते होंगे. अथवा दुसरेकी लज्जासे दबावसे भी आहारादि देना पडे. इत्यादि.

(४१) एवं स्थंडिल भूमिका तथा विहारभूमि (जिनमन्दिर)

(४२) एवं ग्रामानुग्राम विहार करना. भावना पूर्ववत्.

(४३) ,, मुनि समुदाणी भिक्षाकर स्थानपर आके अच्छा सुगन्धि पदार्थका भोजन करे और खराब दुर्गन्धि भोज-नको परठे. ३

(४४) एवं अच्छा नीतरा हुवा पाणी पीवे और खराब गुदला हुवा पाणी परठे. ३

(४५) ,, अच्छा सरस भोजन प्राप्त हो, वा आप भोजन

करनेपर आहार बढ जावे और दो कोशकी अन्दर एक मंडलेके उस भोजन करनेवाले स्वधर्मी साधु हो, उसको विगर पूछे वह आहार परठे. ३

भावार्थ—जबतक साधुवोंको काम आते हो, वहांतक परठना नहीं चाहिये. कारण—सरस आहार परठनेसे अनेक जीवोंकी विराधना होती है.

(४६) ,, मकानके दातारको शय्यातर कहते है. उस शय्यातरका आहार ग्रहण करे.

(४७) शय्यातरका आहार विना उपयोगसे लीया हो, खबर पडनेपर शय्यातरका आहार भोगवे. ३

(४८) ,, शय्यातरका घर पूछे विगर गवेषणा कीये विगर गोचरी जावे. ३ कारन—न जाने शय्यातरका घर कौनसा है. पहलेके आहारके सामेल शय्यातरका आहार आ जावे, तो सब आहार परठना पडता है.

(४९) ,, शय्यातरकी निश्रासे अशनादि च्यार प्रकारका आहार ग्रहन करे. ३

भावार्थ—मकानका दातार चलके घर बतावे. दलाली करे, तो भी साधुको आहार लेना नहीं कल्पै. अगर लेवे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(५०) ,, ऋतुबद्ध चौमास पर्युषणा तक भोगवनेके लीये पाट, पाटला, तृणादि संस्तारक लाया हो, उसे पर्युषणाके बाद भोगवे. ३

(५१) अगर जन्तु आदि उत्पन्न हुवा हो तो, दश रात्रिके बाद भोगवे. अर्थात् जन्तुवोंके लीये दशरात्रि अधिक भी रख सके.

(५२) ,, पाट पाटला वर्षादमें पाणीसे भीजता हो, उसे उठाके अन्दर न रखे. ३

(५३) ,, एक मकानके लीये पाट पाटला लाया हो, फिर किसी कारणसे दुसरे मकानमें जाना हो, उस बखत विगर आज्ञा दुसरे मकानमें ले जावे. ३

(५४) ,, जितने कालके लीये पाट पाटला तृण संस्तारक लाया हो, उसे कालमर्यादासे अधिक विना आज्ञा भोगवे. ३

(५५) ,, पाट पाटला के मालिककी आज्ञा विगर दुसरेको देवे. ३

(५६) ,, पाट पाटला शय्या संस्तार विना दीये दुसरे ग्राम विहार करे. ३

(५७) ,, जीवोत्पत्ति न होनेके कारण पाट पाटले पर कोइ भी पदार्थ लगाया हो, उसे विगर उतारे धणीको पीछा देवे. ३

(५८) ,, जीव सहित पाट पाटला गृहस्थोंका वापिस देवे. ३

(५९) ,, गृहस्थोंका पाट पाटला आज्ञासे लाया, उसे कोइ चौर ले गया. उसकी गवेषणा नहीं करे. ३

भावार्थ—बेदरकारी रखनेसे दुसरी दफे पाट पाटला मीलनेमें मुश्केली होगी ?

(६०) जो कोइ साधु साध्वी किंचित् मात्र भी उपधि न प्रतिलेखन करी रखे, रखावे, रखते हुवेको अच्छा समझे.

उपर लिखे ६० बोलोंसे कोइ भी बोल, साधु साध्वी सेवन करे, दुसरोंसे सेवन करावे, अन्य सेवन करते हुवेको अच्छा समझे, सहायता देवे. उस साधु साध्वीयोंको लघु मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि पुर्ववत्.

इति श्री निशिथसूत्रके दुसरे उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(३) श्री निशिथसूत्रका तीसरा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' मुसाफिर खानेमें, बागबगीचेमें, गृहस्थोंके घरमें, परिव्राजकोंके आश्रममें, चाहे वह अन्य तीर्थी हो चाहे गृहस्थ हो, परन्तु वहांपर जोर जोरसे पुकारकर अशनादि च्यार प्रकारके आहारकी याचना करे, करावे, करतेको अच्छा जाने. यह सूत्र एक वचनापेक्षा है.

(२) इसी माफिक बहु वचनापेक्षा.

(३-४) जैसे दो अलापक पुरुषाश्रित है, इसी माफिक दो अलापक स्त्री आश्रित भी समझना. यह च्यार अलापक सामान्यपणे कहा, इसी माफिक च्यार अलापक उक्त लोक कुतूहल (कौतुक) के लीये आये हुवेसे अशनादि च्यार प्रकारके आहारकी याचना करे. ३. ५—६—७—८

एवं च्यार अलापक उक्त च्यारों स्थानपर सामने लाने अपेक्षाका है. गृहस्थादि सामने आहारादि लावे, उस समय मुनि कहे कि—सामने लाया हुवा हमको नहीं कल्पै, इसपर गृहस्थ सात आठ कदम वापिस जावे. तब साधु कहे कि—तुम हमारे वास्ते नहीं लाये हो, तो यह अशनादि हम ले सक्के है. ऐसी मायावृत्ति करनेसे भी प्रायश्चित्तके भागी होते है. एवं १२ सूत्र हुवे.

(१३) ,, गृहस्थोंके घरपर भिक्षा निमित्त जाते है, उस समय गृहस्थ कहे कि—हे मुनि! हमारे घरमें मत आइये. ऐसा कहनेपर भी दुसरी दफे उस गृहस्थके वहां भिक्षा निमित्त प्रवेश करे. ३

(१४) ,, जीमनवार देख वहांपर जाके अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

भावार्थ—इस वृत्तिसे लघुता होती है. लोलुपता बढती है.

(१५) ,, गृहस्थोंके वहां भिक्षा निमित्त जाते है. वहां तीन घरसे ज्यादा सामने लाके देते हुवे अशनादिको ग्रहन करे. ३

भावार्थ—दृष्टिसे विगर देखी हुइ वस्तु तो मुनि ग्रहण कर ही नहीं सक्ते है, परन्तु कितनेक लोक चोका रखते है, और कोइ देशोंमें ऐसी भी भाषा है कि—यह भातपाणीका घर, यह बैठनेका घर, यह जीमनेका घर—ऐसे संज्ञा वाची घरोंसे तीन घरसे उपरांत सामने लाके देवे, उसे साधु ग्रहन करे. ३

(१६) ,, अपने पावोंको (शोभानिमित्त) प्रमार्जे, अच्छा साफ करे. ३

(१७) अपने पावोंको दबावे, चंपावे.

(१८) ,, तैल, घृत, मक्खन, चरबीसे मालिस करावे. ३

(१९) लोद्र कोकणादि सुगन्धि द्रव्यसे लिप्त करे.

(२०) एवं शीतल पाणी, गरम पाणीसे एकवार, वारवार धोवे. ३

(२१) ,, अलतादिक रंगसे पावोंको रंगे. ३

भावार्थ—विगर कारण शोभा निमित्त उक्त कार्य स्वयं करे, अनेरोंसे करावे, करते हुवेको अच्छा समझे, अथवा सहायता देवे, वह साधु दंडका भागी होता है.

इसी माफिक छे सूत्र (अलापक) काया (शरीर) आश्रित भी समझना, और इसी माफिक छे सूत्र, शरीरमें गडगुम्बड आदि होनेपर भी समझना. ३३

(३४) ,, अपने शरीरमें मेद, फुनसी, गडगुम्बड, जलंधर, हरस, मसा आदि होनेपर तीक्षण अस्त्रसे छेदे, तोडे, काटे. ३

(३५) एवं छेद भेद काटकर अन्दरसे रक्त, राद, चरबी, निकाले. ३

(३६) ,, एवं शीतल पाणी, गरम पाणी कर, विशुद्ध होनेपर भी धोवे. ३

(३७) एवं विशुद्ध होनेपर भी अनेक प्रकार लेपनकी जातिका लेप करे ३. (३८) एवं अनेक प्रकारका मालिस मर्दन करे ३. (३९) एवं अनेक प्रकारके सुगंधि पदार्थ तथा सुगन्धि धूपादिकी जाती लगाके अपने शरीरको सुवासित बनावे ३.

(४०) एवं अपने शरीरमें किरमीयादिको अंगुलि कर निकाले. ३

यह सोलासे चालीश तक पचीश सूत्रोंका भावार्थ—उक्त कार्य करनेसे प्रमादवृद्धि, अस्वाध्यायवृद्धि शस्त्रादिसे आतमघात, रोगवृद्धि तथा शुश्रूषावृद्धि अनेक उपाधिये खडी हो जाती है. वास्ते प्रायश्चितका स्थान कहा है. उत्सर्ग मार्गवाले मुनियोंको रोगादिकों सम्यक् प्रकारसे सहन करना और अपवाद मार्गवाले मुनियोंको लाभालाभका कारण देख गुरु आज्ञाके माफिक वर्ताव करना चाहिये. यहांपर सामान्य सूत्र कहा है.

(४१) ,, अपने दीर्घ-लम्बा नखोंको (शोभा निमित्त) कटावे, समरावे. ३

(४२) ,, अपने गुह्य स्थानके दीर्घबालोंको कटावे, कपावे, समरावे. ३

(४३) ,, अपनी चक्षुके दीर्घ बालोंको कटावे, समरावे. ३

(४४) एवं जंघोंका बाल (केश).

(४५) एवं काखका बाल.

(४६) दाढी मुंछोका बाल.

(४७) मस्तकके बाल,

(४८) एवं कानोंके बाल.

(४९) कानकी अन्दरके बाल.

उक्त लंबे बालोंको (शोभा निमित्त) कटावे, समरावे, सुन्दरता बनावे, वह मुनि प्रायश्चितका भागी होता है. मस्तक, दाढी मुच्छोके लोच समय लोच करना कल्पे.

(५०) ,, अपने दांतोंको एकवार अथवा वारंवार घसे. ३

(५१) शीतल पाणी गरम पाणीसे धोवे. ३

(५२) अलतादिके रंगसे रंगे. ३

भावार्थ—अपनी सुन्दरता-शोभा बढानेके लीये उक्त कार्य करे, करावे, करतेको सहायता देवे.

(५३) ,, अपने होठोंकों मसले, घसे. ३

(५४) चांपे, दबावे.

(५५) तैलादिका मालीस करे.

(५६) लोद्रव आदि सुगंधि द्रव्य लगावे.

(५७) शीतल पाणी गरम पाणीसे धोवे. ३

(५८) अलतादि रंगसे रंगे, रंगावे, रंगतेको सहायता देवे भावना पूर्ववत्.

(५९) ,, अपने उपरके होठोंका लंबापणा तथा होठोंपर के दीर्घबालोंको काटे, समारे, सुन्दर बनावे. ३

(६०) एवं नेत्रोंके भोपण काटे, समारे. ३

(६१) एवं अपने नेत्रों (आंखों)को मसले.

(६२) मर्दन करे.

(६३) तैलादिका मालीस करे.

(६४) लोद्रवादि सुगन्धी द्रव्यका लेपन करे.

(६५) शीतल पाणी, गरम पाणीसे धोवे.

(६६) काजलादि रंगसे रंगे, अर्थात् शोभाके लीये सुरमादिका अंजन करे. ३

(६७) ,, अपने भँवरोंके बालोंको काटे, समारे. ३

(६८) एवं पछवाडे तथा छातीके बालोंको काटे, समारे सुन्दरता बनावे. ३

(६९) ,, अपने आंखोंका मैल, कानोंका मैल, दान्तोंका मैल, नखोंका मैल निकाले, विशुद्ध करे. ३

भावार्थ—अपनी शुश्रूषा निमित्त उक्त कार्य करनेकी मना है कारण—इसीसे प्रमादकी वृद्धि होती है. और स्वाध्यायादि धर्म कृत्यमें विघ्न होता है.

(७०) ,, अपने शरीरसे परसेवा, मैल, जमा हुवा पसीना मैलको निकाले, विशुद्ध करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. ३ भावना पूर्ववत्.

(७१) ,, ग्रामानुग्राम विहार करते समय शीतोष्ण निवारणार्थे शिरपर छत्र धारण करे. ३

यहांतक शुश्रूषा संबन्धी ५६ बोल हुवे है.

(७२) ,, सणका दोरा, कपासका दोरा, उनका दोरा, अर्कतूलका दोरा, बोड वनस्पतिके दोरोंसे वशीकरण करे. ३

(७३) ,, गृहस्थोंके घरमें, घरके द्वारमें, घरके प्रतिद्वारमें, घरकी अन्दरके द्वारमें, घरकी पोलमें, घरके चोकमें, घरके अन्य स्थानोंमें आप लघुनीत (पैसाब) वडीनीत (टटी) परठे, परठावे, परिठतेको अच्छा समझे.

(७४) एवं श्मशानमें मुरदेको जलाया हो, उसकी राखमें मुरदेकी विश्रामकी जगहा, मुरदेकी स्थूभ बनाइ हो, उस जगहा, मुरदेकी पंक्ति (कबरों), मुरदेकी छत्री बनाइ-वहांपर जाके टटी, पैसाब करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(७५) कोलसे बनानेकी जगहा, साजीखारादिके स्थान, गौ, बलहादिके रोग कारणसे डाम देते हो उस स्थानमें, तुसोंका ढेर करते हो उस स्थानमें, धानके खळे बनाते हो उस स्थानमें, टटी पैसाब करे. ३

(७६) सचित्त पाणीका कीचड हो, कर्दम हो, नीलण, फूलण हो ऐसे स्थानमें टटी पैसाब करे. ३

(७७) नवी बनी गोशाला, नवी खोदी हुइ मट्टी, मट्टीकी खान, गृहस्थलोगों अपने काममें ली हो, या न भी ली हो ऐसे स्थानमें टटी पैसाब करे. ३

(७८) उंबरके वृक्षोंका फल पडा हो, एवं वडवृक्ष, पीपलवृक्षोंके नीचे टटी पैसाब करे. ३ इस वृक्षोंका बीज सुक्षम और बहुत होते हैं.

(७९) इक्षु (साठा) के क्षेत्रमें, शाल्यादि धान्यके क्षेत्रमें, कसुंबादि फूलोंके वनमें, कपासादिके स्थानमें टटी पैसाब करे. ३

(८०) मडक वनस्पति, साक व० मूला व० मालक व० खार व० बहु बीजा व० जीरा व० दमणय व० मरुग वनस्पतिके स्थानोंमें टटी पैसाब करे. ३

(८१) अशोकवन, सीतवन, चम्पक वन, आम्रवन, अन्य भी तथा प्रकारका जहांपर बहुतसे पत्र, पुष्प, फल, बीजादि जीवोंकी विराधना होती हो, ऐसे स्थानमें टटी पैसाब करे. ३ तथा उक्त स्थानोंमे टटी पैसाब परठे, परिठावे, परिठवेको अच्छा समझे.

भावार्थ--प्रगट आहार निहार करनेसे मुनि दुर्लभबोधी पना उपार्जन करता है वास्ते टटी पेशाबके लीये दुर जाना चाहिये.

(८२) ,, अपने निश्राके तथा परनिश्राके मात्रादिका भाजनमें दिनको, रात्रिको, या विकालमें अतिबाधासे पीडित, उस मात्रादिके लघुनीत, वडीनीत कर सूर्य अनुदय अर्थात् जहां-पर दिनको सूर्यका प्रकाश नहीं पडते हो, ऐसा आच्छादित स्थानपर परठे, परिठावे, परिठतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—द्रव्यसे जहां सूर्यका प्रकाश पडते हो, और भावसे परिठनेवाले मुनिके हृदय कमलमें ज्ञान (परिठनेकी विधि) सूर्य प्रकाश कीया हो-ऐसे दोनों प्रकारके सूर्योदय न हुवा मुनि परठे तो प्रायश्चितका भागी होता है. कारण—रात्रिमें मात्रादि कर साधु सूर्योदय हो इतना बखत रख नहीं सकते है. क्योंकि उस पेसाब आदिमें असंख्य संमूर्छिम जीवोंकी उत्पत्ति होती है. इस वास्ते उक्त अर्थ संगतिको प्राप्त करता है.

उक्त ८२ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु साध्वीयोंको लघुमासिक प्रायश्चित्त होता है. विधि देखो वीसवां उद्देशासे.

इति श्री निशिथसूत्र-तीसरा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(४) श्री निशिथसूत्र—चौथा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वीयों' राजाको अपने वश करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(२) एवं राजाका अर्चन-पूजन करे. ३

(३) एवं अच्छा द्रव्यसे वस्त्र, भूषण, भावसे गुणानुवादादि बोलना. ३

(४) एवं राजाका अर्थी होना. ३

इसी माफिक च्यार सूत्र राजाके रक्षण करनेवाले दिवान-प्रधान आश्रित कहना. ५-८

इसी माफिक च्यार सूत्र नगर रक्षण करनेवाले कोटवालका भी कहना. ९-१२

इसी माफिक च्यार सूत्र निग्रामरक्षक (ठाकुरादि) आश्रित कहना. १३-१६

एवं च्यार सूत्र सर्व रक्षक फोजदारादिक आश्रित कहना. एवं सर्व २० सूत्र हुवे.

भावार्थ—मुनि सदैव निःस्पृह होते है. मुनिय.के लीये राजा और रंक सदश ही होते है. " जहा पुन्नस्स कत्थइ, तहा तुच्छस्स कत्थइ " अगर राजाको अपना करेगा, तो कभी राजाका कहना ही मानना होगा. ऐसा होनेसे अपने नियममें भी स्खलना पहुंचेगा वास्ते मुनियोंको सदैव निःस्पृहतासे ही विचरना चाहिये (यहां ममत्वभावका निषेध है.)

(२१) ,, अखंड औषधि (धान्यादि) भक्षण करे. ३

भावार्थ—अखंड धान्य सचित्त होता है. तथा सुंठादि अखंडितमें जीवादि भी कबी कबी मिलते है. वास्ते अखंडित औषधि खानेकी मना है.

(२२) ,, आचार्योपाध्यायके विना दीये आहार करे ३.

(२३) ,, आचार्योपाध्यायके विना दीये विगइ भोगवे. ३

(२४) ,, कोइ गृहस्थ ऐसे भी होते है कि साधुवोंके लीये आहार पाणी स्थापन कर रखते है. ऐसे घरोंकी याच पुछ, गवेषणा कीये विगर साधु नगरमें गौचरी निमित प्रवेश करे. ३

(२५) ,, अगर कोइ साध्वीयोंके विशेष कारण होनेपर साधुको साध्वीयोंके उपाश्रय जाना पडे तो अविधि (पहले साध्वीयोंको सावचेत होने योग संकेत करे नहीं) से प्रवेश करे. ३

भावार्थ—एकदम चले जानेसे न जाने साध्वीयों किस अवस्थामें बैठी है.

(२६) ,, साध्वी आनेके रहस्तेपर साधु दंडा, लठ्ठी, रजोहरण, मुखवस्त्रिकादि कोइ भी छोटी बडी वस्तु रखे. ३

भावार्थ—अगर साधु ऐसा जाने कि—यह रखे हुवे पदार्थको ओळंगके साध्वी आवेगी, तो उसको कहेंगे—हे साध्वी! क्या इसी माफिक ही पूजन प्रतिलेखन करते होंगे ? इत्यादि हांसी या अपमान करे. ६

(२७) ,, क्लेशकारी बातें कर नये क्रोधको उत्पन्न करे. ३

(२८) ,, पुराणा क्रोधको खमतखामणा कर उपशांत कर दीया हो, उसे उदीरणा कर क्रोधको प्रज्वलित बनावे. ३

(२९) ,, मुंह फाड फाडके हंसे. ३

(३०) ,, पासत्थे (भ्रष्टाचारी) को अपना साधु देके उन्होंका संघाडा बनावे. अर्थात् उसको साधु देके सहायता करे. ३

(३१) एवं उसके साधुको लेवे. ३

(३२--३३) एवं दो अलापक ' उसन्न ' क्रियासे शिथिलका भी समझना.

(३४--३५) एवं दो अलापक ' कुशीलों ' खराब आचारवालोंका समझना.

(३६--३७) एवं दो अलापक ' नितिया ' नित्य एक घरके

भोजन करनेवाले तथा नित्य विना कारण एक स्थानपर निवास करनेवालोंका समझना.

(३८—३९) एवं दो अलापक 'संसत्था' संवेगीके पास संवेगी और पासत्थावोंके पास पासत्था बननेवालोंका समझना.

(४०) ,, कचे पाणीसे 'संसक्त' पाणीसे भींजे हुवे ऐसे हाथोंसे भाजनमेंसे चाटुडी (कुरची) आदिसे आहार पाणी ग्रहन करे. ३ स्निग्ध (पूरा सूका न हो) सचित्त रजसे, सचित्त मट्टीसे, ओसके पाणीसे, नीमकसे, हरतालसे, मणसील (बोडल), पीली मट्टी, गेरुसे, खडीसे, हींगलुसे, अंजनसे, (सचित्त मट्टीका) लोद्रसे, कुकस, तत्कालीन आटासे, कन्दसे, मूलसे, अद्रकसे, पुष्पसे, कोष्टकादि—एवं २१ पदार्थ सचित्त, जीव सहित हो, उसे हाथ खरडा हो, तथा संघट्टा होते हुवे आहार पाणी ग्रहन करे. ३ वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है. इसी माफिक २१ पदार्थोंसे भाजन खरडा हुवा हो उस भाजनसे आहार पाणी ग्रहन करे. ३ एवं ८१

(८२) ,, ग्रामरक्षक पटेलादिको अपने वश करे, अर्चन करे, अच्छा करे, अर्थी बने. एवं इसी उद्देशाके प्रारंभमें राजाके च्यार सूत्र कहा था. इसी माफिक समझना. एवं देशके रक्षकों का च्यार सूत्र. एवं सीमाके रक्षकोंका च्यार सूत्र. एवं राज्य रक्षकोंका च्यार सूत्र. एवं सर्व रक्षकोंका च्यार सूत्र. कुल २० सूत्र. भावना पूर्ववत्. १०१

(१०२) ,, अन्योन्य आपसमें एक साधु दुसरे साधुका पग दबावे-चांपे. एवं यावत् एक दुसरे साधुके ग्रामानुग्राम विहार करते हुवे के शिरपर छत्र धारण करे, करावे. जो तीसरा उद्देशामें कहा है, इसी माफिक यहां भी कहना. परन्तु वहां पर

समान सूत्र साधुवोंके लीये है. और यहांपर विशेष सूत्र साधु आपसमें एक दुसरेके पांवादि दाबे-चांपे.

भावार्थ—विशेष कारण विना स्वाध्याय ध्यान न करते हुवे दबाने-चंपानेवाला साधु प्रायश्चित्तका भागी होता है. अगर किसी प्रकारका कारण हो ता एक साधु दूसरे साधुकी वैयावच्च करनेसे महा निर्जरा होती है. ५६ सूत्र मिलानेसे १५७ सूत्र हुवे.

(१५८) „ उपधि प्रतिलेखनके अन्तमें लघुनीत, वडीनीत परिठणेकी भूमिकाकों प्रतिलेखन न करे. ३

भावार्थ—रात्रि समय परिठनेका प्रयोजन होनेपर अगर दिनको न देखी भूमिकापर पैसाब आदि परिठनेसे अनेक त्रस स्थावर प्राणीयोंकी घात होती है.

(१५९) भूमिकाके भिन्न भिन्न तीन स्थान प्रतिलेखन न करे. ३ पहेले रात्रिमें, मध्य रात्रिमें, अन्त रात्रिमें परिठनेके लीये.

(१६०) „ स्वल्प भूमिकापर टटी पैसाब परठे. ३ स्वल्प भूमिका होनेसे जल्दीसे सुक नहीं सके. उसमें जीवोत्पत्ति होती है. वास्ते विशाल भूमिपर परठे.

(१६१) „ अविधिसे परठे. ३

(१६२) „ टटी पैसाब जाकर साफ न करे, न करावे, न करते हुवेको अच्छा समझे. उसे प्रायश्चित्त होता है.

(१६३) टटी पैसाब कर पाणीसे साफ न करके काष्ठ, कंकरा, अंगुली तथा शीला आदिसे साफ करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है. अर्थात् मलकी शुद्धि जल हीसे होती है. इसी वास्ते ही जैनमुनि पाणीमें चुना

विगैरह डालके रात्रि समय जल रखते है. शायद रात्रिमें टटी पैसाबका काम पड जावे तो उस जलसे शुचि कर सके.*

(१६४) ,, टटी पैसाब जाके पाणीसे शुचि न करे, न करावे, न करते हुवेको अच्छा समझे. वह मुनि प्रायश्चितका भागी होता है.

(१६५) जिस जगहपर टटी पैसाब कीया है, उस टटी पैसाबके उपर शुचि करे. ३

(१६६) जिस जगह टटी पैसाव कीया है, उससे अति दूर जाके शुचि करे. ३

(१६७) टटी पैसाब कर शुचिके लीये तीन पसली अर्थात् जरुरतसे अधिक पाणी खरच करे. ३

भावार्थ—टटी पैसाबके लीये पेस्तर सुकी जगह हो, वह भी विशाल, निर्जिव देखना चाहिये. जहांपर टटी बैठा हो वहांसे कुछ पावोंसे सरक शुचि करना चाहिये. ताके समूर्च्छिम जीवोंकी उत्पत्ति न हो. अशुचिका छांटा भी न लगे और जल्दी सुक भी जावे. यह विधि बादका कथन है.

(१६८) ,, प्रायश्चित्त संयुक्त साधु कभी शुद्धाचारी मुनिको कहे कि—हे आर्य! अपने दोनों साथही में गोचरी चले, साथ हीमें अशनादि च्यार प्रकारका आहार लावे. फिर बादमें वह आहार भेट (विभाग कर) अलग अलग भोजन करेंगे. ऐसे वचनोंको शुद्धाचारी मुनि स्वीकार करे, करावे, करतेको अच्छा समझे, वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है.

---

* ढुंढीये और तेरापन्थी लोग रात्रि समय पाणी नहीं रखते है. तो इस पाठका पालन कैसे कर सक्ते होंगे ? और रात्रिमें टटी पैसाब होनेपर क्या करते होंगे ?

भावार्थ—सदाचारी जो दुराचारीकी संगत करेगा तो लोगोंमें अप्रतीतिका कारण होगा. इति.

उपर लिखे १६८ बोलोंसे कोइ भी बोल साधु साध्वी सेवन करेंगे तो लघु मासिक प्रायश्चित्तके भागी होंगे. प्रायश्चित्तकी विधि वीसवां उद्देशासे देखे.

इति श्री निशिथसूत्र—चौथा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(५) श्री निशिथसूत्र—पांचवां उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' सचित्त वृक्षका मूल-वृक्षका मूल जमीनमें रहता है, कन्द (झडों) जमीनमें पसरती है. स्कन्ध-जमीनके उपर जिसको मूल पेड कहते है. उस मूल पेडसे चोतरफ च्यार हाथ जमीन सचित्त रहती है. कारण—उस जमीनके नीचे कन्द (झडो) पसरी हुइ है. यहांपर सचित्त वृक्षका मूल कहा है, वह उसी अपेक्षा है कि पसरी हुइ झडों तथा वह मूल उपरकी सचित्त भूमि उपर कायोत्सर्ग करना, संस्तारक बिछाना और बैठना यह कार्य करे. ३

(२) एवं वहां खडा होके एक बार वृक्षको अवलोकन करे तथा बार बार देखे. ३

(३) एवं वहांपर बैठके अशनादि च्यार आहार करे.

(४) एवं टटी पैसाब करे. ३

(५) एवं स्वाध्याय पाठ करे. ३

(६) एवं शिष्यादिको ज्ञान पढावे. ३

(७) एवं अनुज्ञा देवे. ३

(८) एवं आगमोंकी वाचना देवे. ३

(९) एवं आगमोंकी वाचना लेवे. ३

(१०) एवं पढे हुवे ज्ञानकी आवृत्ति करे. ३

भावार्थ—वहस्थान जीव सहित है. वहां बैठके कोइ भी कार्य नहीं करना चाहिये, अगर ऐसे सचित्त स्थानपर बैठके उक्त कार्य कोइ भी साधु करेगा, तो प्रायश्चित्तका भागी होगा.

(११) ,, अपनी चद्दर अन्य तीर्थी तथा उन्होंके गृहस्थोंके पास सीलावे. ३

(१२) एवं अपनी चद्दर दीर्घ-लंबी अर्थात् परिमाणसे अधिक करे. ३

(१३) ,, निंबके पत्ते, पोटल वृक्षके पत्ते, बिल वृक्षके पत्ते शीतल पाणीसे, गरम पाणीसे धोके-प्रक्षालके साफ करके भोजन करे. ३ यह सूत्र कोइ विशेष अरणीयादिके प्रसंगका है.

(१४) ,, कारणवशात् सरचीना रजोहरण लेनेका काम पडे.* मुनि गृहस्थोंको कहे कि—तुमारा रजोहरण हम रात्रिमें वापिस दे देंगे. ऐसा करार करनेपर रात्रिमें नहीं देवे. ३

(१५) एवं दिनका करार कर दिनको नहीं देवे. ३

भावार्थ—इसमें भाषाकी स्खलना होती है. मृषावाद लगता है. वास्ते मुनिको पेस्तरसे ऐसा समय करार ही नहीं करना चाहिये.

---

* कोइ तस्कर मुनिका रजोहरण चुराके ले गया, खबर करनेसे चोर कहता है कि—मैं दिनको लज्जाका मारा दे नहीं सक्ता. परन्तु रात्रिके समय आपका रजोहरण दे जाउंगा. ऐसी हालतमें गृहस्थोंसे करार कर मुनि रजोहरण लावे कि—तुमारा रजोहरण रात्रिमें देदुंगा.

(१६-१७) एवं दो सूत्र शय्यातर संबंधी रजोहरणका भी समझना. जैसा रजोहरणका च्यार सूत्र कहा है, इसी माफिक दांडो, लाठी, खापटी, वांसकी सूइका भी च्यार सूत्र समझना. एवं २१.

(२२) ,, सरचीना शय्या, संस्तारक, गृहस्थोंको वापिस सुप्रत कर दीया, फिर उसपर बैठे आसन लगावे. ३ अगर बैठना हो तो दुसरी दफे आज्ञा लेना चाहिये. नहीं तो चोरी लगती है.

(२३) एवं शय्यातर संबंधी.

(२४) ,, सण, उन, कपासकी लंबी दोरी भठे करे. ३

(२५) ,, सचित्त (जीव सहित) काष्ठ, वांस, बेंतादिका दांडा करे. ३

(२६) एवं धारण करे (रखे)

(२७) एवं उसे काममें लेवे.

भावार्थ—हरा झाडका जीव सहित दंडादि करने रखने और काममें लेनेकी मना है. इसे जीवविराधना होती है. इसी माफिक चित्रवाला दंडा करे, रखे, वापरे. २८-३०

इसी माफिक विचित्र अर्थात् रंग बेरंगा दंडा करे, रखे, वापरे. वह साधु प्रायश्चित्तका भागी होता है. ३१--३३

(३४) ,, ग्राम नगर यावत् सन्निवेशकी नवीन स्थापना हुइ हो, वहांपर जाके साधु अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

भावार्थ—अगर कोइ संग्रामादिके कटकके लीये नया ग्रामादिककी स्थापना करते समय अभिषेक भोजन बनाते है, वहां मुनि जानेसे शुभाशुभका ख्याल तथा लोगोंको शंका होती है

कि—यह कोइ प्रतिपक्षीयोंकि तर्फसे तो न आया होगा? इत्यादि शंकाके स्थानोंको वर्जना चाहिये.

(३५) एवं लोहाके आगर, तंबाका, तरुवेके, सीसाके, चंदीके, सुवर्णके, रत्नोंके, वज्रके आगरकी नवीन स्थापना होती हो वहां जाके साधु अशनादि आहार ग्रहन करे. ३

(३६) ,, मुंहसे बजानेकी वीणा करे. ३

(३७) दांतोंसे बजानेकी वीणा करे. ३

(३८) होठोंसे बजानेकी वीणा करे. ३

(३९) नाकसे बजानेकी वीणा करे. ३

(४०) काखसे बजानेकी ,,

(४१) हाथोंसे बजानेकी ,,

(४२) नखसे बजानेकी ,,

(४३) पत्र वीणा ,,

(४४) पुष्प वीणा ,,

(४५) फल वीणा ,,

(४६) बीज वीणा ,,

(४७) हरी तृणादिकी वीणा करे. ३

इसी माफिक मुंह वीणा बजावे, यावत् हरि तृणादिकी वीणा बजावे के बारह सूत्र कहना. एवं ५९.

(६०) ,, इसके सिवाय किसी प्रकारकी वीणा जो अनुदय शब्द विषयकी उदीरणा करनेवाले वाजित्र बजावेगा, वह साधु प्रायश्चित्तका भागी होगा.

भावार्थ—स्वाध्याय ध्यानमें विघ्नकारक, प्रमादकी वृद्धि करनेवाला शब्दादि विषय है. इसीसे मुनियोंको हमेशां दूर ही रहना चाहिये.

(६१) ,, साधु साध्वीयोंके उद्देश (निमित्त) बनाये हुवे मकानमें साधु साध्वी प्रवेश करे. ३

(६२) एवं साधुके निमित्त मकान लींपाया हो, छप्परबंधी कराइ हो, नया दरवाजा कराया हो—उस मकानमें प्रवेश करे. ३

(६३) एवं अन्दरसे कोइ भी वस्तु साधुवोंके लीये बाहार निकाले, काजा, कचरा निकाल साफ करे, उस मकानमें मुनि प्रवेश करे, वहां ठहरे. ३

भावार्थ—जहां साधुवोंके लीये जीवादिका बाद हो ऐसा मकानमें साधु ठहरे, वह प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(६४) ,, जिस साधुवोंके साथ अपना ' संभोग ' आहारादि लेना देना नहीं है, और क्षांत्यादि गुण तथा समाचारी मिलती नहीं है, उसको संभोग करनेका कहे. ३

(६५) ,, वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण अच्छा मजबुत बहुतकाल चलने योग्य है. उसको फाडतोड टुकडे कर परठे, परठावे. ३

(६६) एवं तुंबाका पात्र, काष्ठका पात्र, मट्टीका पात्र मजबुत रखने योग्य, बहुत काल चलने योग्यको तोडफोड परठे. ३

(६७) एवं दंडा, लट्ठी, खापटी, वांससूचि, चलने योग्यको परठे. ३

भावार्थ—किसी ग्रामादिमें सामान्य वस्तु मिली हो, और बडे नगरमें वह ही वस्तु अच्छी मिलती हो, तब पुद्गलानंदी विचार करे—इसको तोडफोडके परठ दे, और अच्छी दुसरी वस्तु याच ले—इत्यादि परन्तु ऐसा करनेवाले साधुवोंको निर्दय कहा है. वह प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(६८) ,, परिमाणसे अधिक 'रजोहरण' अर्थात् चौवीश अंगुलकी दंडी और आठ अंगुलकी दशीयों एवं बत्रीश अंगुलका रजोहरणसे अधिक रखे, दुसरोंसे रखावे, अन्य रखते हुवेको अच्छा समझे, अथवा सहायता देवे. *

(६९) ,, रजोहरणकी दशीयोंको अति सुक्षम (बारीक) करे. ३ प्रथम तो करणेमें प्रमाद बढता है. और उसकी अन्दर जीवादि फँस जानेसे विराधना भी होती है.

(७०) रजोहरणकी दशीयोंपर एकभी बन्धन लगावे. ३

(७१) एवं ओघारीयामें दंडी और दशीयों बन्धनके लीये तीन बन्धसे ज्यादा बन्धन लगावे. ३

(७२) एवं रजोहरणको अविधिसे बन्धे. नीचा उंचा, शिथिल, सख्त इत्यादि. ३

(७३) एवं रजोहरणको काष्ठकी भारीके माफिक बिचमें बन्ध करे. जिससे पूर्ण तोरपर काजा नीकाला नहीं जावे. जीवोंकी यतना भी पूर्ण न हो सके इत्यादि.

(७४) ,, रजोहरणको शिरके नीचे (ओशीकाकी जगह) धरे. ३

(७५) ,, बहु मूल्यवालो तथा वर्णादिकर संयुक्त रजोहरण रखे. ३ चौरादिका भय तथा ममत्व भावकी वृद्धि होती है.

(७६) ,, रजोहरणको अति दूर रखे तथा रजोहरण विगर इधर उधर गमनागमन करे. ३

(७७) ,, रजोहरण उपर बैठे. ३ कारण रजोहरणको शास्त्रकारोंने धर्मध्वज कहा है. गृहस्थोंको पूजने योग्य है.

---

* ढुंढीये लोग इस नियमका पालन कैसे करते होंगे ? कारणकि—दो दो हाथके लंबे रजोहरण रखते है. इस वीरवाणीपर कुछ विचार करना चाहिये.

(७८) ,, रजोहरण उपर सुवे, अर्थात् रजोहरणको बेअदबीसे रखे, रखावे, रखतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—मोक्षमार्ग साधनेमें मुनिपद प्रधान माना गया है. मुनिपदकी पहेचान, मुनि के वेषसे होती है. मुनिवेषमें रजोहरण, मुखवस्त्रिका मुख्य है. इसका बहुमान करनेसे मुनिपदका बहुमान होता है. इसकी बेअदबी करनेसे मुनिपदकी बेअदबी होती है, वह जीव दुर्लभबोधी होता है. भवान्तरमें उसको रजोहरण मुखवस्त्रिका मिलना दुर्लभ होगा. वास्ते इसका आदर, सत्कार, विनय, भक्ति करना भव्यात्माओंका मुख्य कर्तव्य है.

उपर लिखे ७८ बोलोंसे कोइ भी बोल सेवन करनेवाले मुनियोंको लघु मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र—पांचवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(६–७) श्री निशिथसूत्र—छट्ठा—सातवां उद्देशा.

शास्त्रकारोंने कर्मोंकी विचित्र गति बतलाइ है. जिसमें भ(मोहनीय कर्मका तो रंग ढंग कुछ अजब तरहका ही बतलाया है. बडे बडे सत्त्वधारी जो आत्मकल्याणकी श्रेणिपर चडते हुवेको भी मोहनीय कर्म नीचे गिरा देता है. जैसे आर्द्रकुमार, अरणिकमुनि, नंदिषेण, कंडरीकादि.

उंचा चढना और नीचा गिरना—इसमें मुख्य कारण संगतका है. सत्संग करनेसे जीव उच्च श्रेणीपर चढता है, कुसंगत करतेसे जीव नीचा गिरता है सुसंगत और कुसंगत—दोनोंका स्वरुपको

सम्यक्प्रकारसे जानना यह ज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशम है. जाननेके बादमें कुसंगतका त्याग करना और सत्संगका परिचय करना यह मोहनीय कर्मका क्षयोपशम है. इस जगह शास्त्रकारोंने कुसंगतके कारणको जानके परित्याग करणेका ही निर्देश कीया है.

अगर दीर्घकालकी वासनासे वासित मुनि अपनी आत्मरमणता करते हुवे के परिणाम कभी गिर पडे तथा अकृत्य कार्य करे, उसको भी प्रायश्चित्त ले अपनी आत्माको निर्मल बनानेका प्रयत्न इस छठ्ठे और सातवे उद्देशामें बतलाया गया है. जिसको देखना हो वह गुरुगमता पूर्वक धारण कीये हुवे ज्ञानवाले महात्मावोंसे सुने. इस दोनों उद्देशोंकी भाषा करणी इस वास्ते ही मुलतवी रख गइ है. इति ६–७

इस दोनों उद्देशोंके बोलोंको सेवन करनेवाले साधु साध्वीयोंको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा.

इति श्री लघुनिशिथ सूत्रका छठा सातवां उद्देशा.

---

(८) श्री निशिथसूत्रका आठवां उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' मुसाफिरखाना, उद्यान, गृहस्थोंका घर यावत् तापसोंके आश्रम इतने स्थानोंमें मुनि अकेली स्त्री के साथ विहार करे; स्वाध्याय करे अशनादि च्यार प्रकारका आहार करे, टटी पैसाब जावे, और भी कोइ निष्ठुर विषय विकार संबंधी कथा वार्ता करे. ३

(२) एवं उद्यान, उद्यानके घर (बंगला), उद्यानकी शाला, निज्ञाण, घर—शालामें अकेला साधु अकेली स्त्रीके साथ पूर्वोक्त कार्य करे. ३

(३) ग्रामादिके कोट, अट्टाली, आठ हाथ परिमाण रहस्ता, बुरजों, गढ, दरवाजादि स्थानोंमें अकेला साधु अकेली स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे. ३

(४) पाणीके स्थान तलाव, कुँवे, नदीपर, पाणी लानेके रहस्तेपर, पाणी आनेकी नेहरमें, पाणीका तीरपर, पाणीके उंच स्थानके मकानमें अकेली स्त्रीसे उक्त कार्यों करे. ३

(५) शून्य घर, शून्य शाला, भग्न घर, भग्नशाला, कुडाघर, कोष्ठागार आदि स्थानोंमे अकेली स्त्री साथ उक्त कार्यों करे. ३

(६) तृणघर, तृणशाला, तुसोंके घर, तुसोंकीशाला, भुंसाका घर, भुंसाकी शालामें--अकेली स्त्रीके साथ उक्त कार्यों करे. ३

(७) रथशाला, रथघर, युगपात (मैना) की शाला, घरादिमें अकेली स्त्रीके साथ उक्त कार्यों करे. ३

(८) किरयाणाकी शाला, घर, बरतनोंकी शाला-घरमें अकेली स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे. ३

(९) बेलोंकी शाला-घर, तथा महा कुटुंबवालोंके विलास मकानादिमें अकेला स्त्री के साथ उक्त कार्यों करे. ३

भावार्थ—किसी स्थानपर भी अकेली स्त्री के साथ मुनि कथा वार्त्ता करेगा, तो लोगोंको अविश्वास होगा, मनोवृत्ति मलिन होगी, इत्यादि अनेक दोषोंकी उत्पत्तिका संभव है. वास्ते शास्त्रकारोंने मना कीया है.

(१०) रात्रिके समय तथा विकाल संध्या (श्याम) समय अनेक स्त्रीयोंकी अन्दर, स्त्रीयोंसे संसक्त, स्त्रीयोंके परिवारसे प्रवृत्त होके अपरिमित कथा कहे. ३

भावार्थ—दिनको भी स्त्रीयोंका परिचय करना मना है, तो

रात्रिका कहेना ही क्या? नीतिकारोंने भी सुशील बहनोंको रात्रि समय अपने घरसे बाहार जाना मना कीया है. ढुंढीये और तेरापन्थी साधु रात्रिमें व्याख्यानके लिये सेंकडो स्त्रीयोंको आमन्त्रण कर दुराचारको क्यों बढाते है ?

(११) „ स्वगच्छ तथा परगच्छकी साध्वीके साथ ग्रामानुग्राम विहार करते कबी आप आगे, कबी साध्वी आगे चले जाने पर आप चिंतारुप समुद्रमें गिरा हुवा आर्त्तध्यान करता विहार करे तथा उक्त कार्यों करते रहे. ३ यह ११ सूत्रोंमें जैसे मुनियोंके लीये स्त्रीयोंके परिचयका निषेध बतलाया है, इसी माफिक साध्वीयोंको पुरुषोंका परिचय नहीं करना चाहिये.

(१२) „ साधु साध्वीयोंके संसार संबंधी स्वजन हो चाहे अस्वजन हो, श्रावक हो चाहे अश्रावक हो, परंतु साधुके उपाश्रय आधीरात तथा संपूर्ण रात्रि उस गृहस्थोंको उपाश्रयमें रखे, रहने देवे. ३

(१३) एवं अगर गृहस्थ अपनेही दिलसे यहां रहा हो उसे साधु निषेध न करे, अनेरोंसे निषेध न करावे, निषेध न करते हुवे को अच्छा समझे वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है.

भावार्थ—रात्रिमें गृहस्थोंके रहनेसे परिचय बढता है, संघट्टा होता है, साधुवोंके मल मूत्र समय कदाच उन लोगोंको दुर्गंध होवे, स्वाध्याय ध्यानमें विघ्न होवे-इत्यादि दोषोंका संभव है. वास्ते गृहस्थोंको अपने पासमें रात्रिभर नहीं रखना. अगर विशाल मकानमें अपनी निश्रायमें एकाद कमरा कीया हो, अपने उपभोगमें आता हो, उस मकानकी यह बात है. शेष मकानमें श्रावक लोग सामायिक, पौषध तथा धर्मजागरणा कर भी सकते है.

(१४) अगर कोइ ऐसा भी अवसर आ जावे, अथवा निषेध

करने पर भी गृहस्थ नहीं जाता हो तो उसकी निश्रायसे मकानसे बाहार निकलना तथा प्रवेश करना नहीं कल्पै. अगर ऐसा करे तो मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(१५) ,, राजा—(प्रधान, पुरोहित, हाकिम, कोटवाल, और नगरशेठ संयुक्त) जाति, कुल, उत्तम ऐसा क्षत्रिय जातिका राजा, जिसके राज्याभिषेकके समय अपने गोत्रजोंको भोजन कराने निमित्त तथा किसी प्रकारके महोत्सव निमित्त अशनादि च्यार प्रकारका आहार निपजाया (तैयार कराया), उस अशनादि च्यार प्रकारका आहारसे साधु साध्वी आहारादि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—द्रव्यसे वहां जानेसे लघुता होवे, लोलुपता बढे, बहुतसे भिक्षुक एकत्र होनेसे वस्त्र, पात्र, शरीरकी विराधना होवे, भावसे अपना आचारमें खलल पहुंचे. शुभाशुभ होनेसे साधुवों पर अभावका कारण होवे इत्यादि अनेक दोषोंका संभव है. वास्ते मुनि ऐसा आहारादि ग्रहन न करे. अगर कोइ आज्ञा उलंघन करेगा, वह इस प्रायश्चित्तका भागी होगा.

(१६) एवं राजाकी उत्तरशाला अर्थात् बेठनेकी कचेरी तथा अन्दरका घरकी अन्दरसे अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

(१७) अश्वशाला, हाथीशाला, विचार करनेकी शाला, गुप्त सलाह करनेकी शाला, रहस्यकी वार्त्ता करनेकी शाला, मथुन कर्म करनेकी शाला, उक्त स्थानोंमे जाते हुवेका अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

(१८) ,, संग्रह कीया हुवा, संग्रह करते हुए पक्वानादि, तथा मेवा मिष्टान्नादि और दुध, दहीं, मक्खन, घृत, गुड, खांड, सक्कर, मिश्री, और भी भोजनकी जाति ग्रहन करे. ३

(१९) ,, खातों पीतों बचा हुवा आहार देतों, भेटतों, बचा हुवा आहार, नाखतों बचा हुवा आहार, अन्य तीर्थीयोंके निमित्त, कृपणोंके निमित्त, गरीब लोगोंके निमित्त—ऐसा आहारादि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. भावना पूर्ववत् पंद्रहवां सूत्रकी माफिक समझना.

उपर लिखे १९ बोलोसे कोइ भी बोल, साधु साध्वी सेवन करेगा, उसको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा, प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र—आठवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(९) श्री निशिथसूत्रका नौवां उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' राजपिंड (अशनादि आहार) ग्रहन करे, ग्रहन करावे ग्रहन करते हुवेको अच्छा समझे.

भावार्थ—सेनापति, प्रधान, पुरोहित, नगरशेठ और सार्थवाह—इस पांच अंग संयुक्तको राजा कहा जाता है.

(१) उन्होंके राज्याभिषेक समयका आहार लेनेसे शुभाशुभ होनेमें साधुवोंका निमित्त कारण रहता है.

(२) राजाका बलिष्ठ आहार विकारक होता है, और राजाका आहार बचे, उसमें पंडा लोगोंका विभाग होता है. वह आहार लेनेसे उन लोगोंको अंतरायका कारण होता है. एवं राजपिंड भोगवे. ३

(३) ,, राजाके अन्तेउर (जनानागृह) में प्रवेश करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—साधु हमेशां मोहसे विरक्त होता है. वहां जानेपर रुप, लावण्य, शृंगार तथा मोहक पदार्थ देखनेसे मोहकी वृद्धि होती है. प्रश्न, ज्योतिष, मंत्रादि पूछनेपर साधु न बतानेसे कोपायमान होवे, राजादिको शंका होवे-इत्यादि दोषोंका संभव है.

(४) ,, साधु, राजा के अन्तेउर-गृहद्वार जाके दरवानसे कहे कि—हे आयुष्मन् ! मुझे राजाका अन्तेउरमें जाना नहीं कल्पे. तुम हमारा पात्र लेके जाओ, अन्दरसे हमे भिक्षा ला दो. ऐसा वचन बोले. ३

(५) इसी माफिक दरवान बोले कि—हे साधु ! तुमको राजाका अंतेउरमें जाना नहीं कल्पे. आपका पात्र मुझे दो, मैं आपको अन्दरसे भिक्षा लादुं. ऐसा वचन साधु सुने, सुनावे, सुनतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—विगर देखे आहार लेना नहीं कल्पै. सामने लाया आहार भी मुनिको लेना नहीं कल्पै.

(६) ,, राजा जो उत्तम जातिवाला है. उनके राज्याभिषेक समय भोजन निष्पन्न हुवा है, जिसमें द्वारपालोंका भाग है, पशु, पक्षीका भाग, नोकरोंका भाग, देवताका भाग, दास दासीयोंका भाग, अश्वोंका भाग, हाथीयोंका भाग, अटवी निवासीयोंका भाग, दुर्भिक्ष-जिसको भिक्षा न मिलती हो, दुश्कालादिके गरीबोंका भाग, ग्लान—चमारोंका भाग, बादलादि बरसातसे भिक्षाको न आ सके, पाहुणा आया हुवा उन्होंका भाग, इन्होंके सिवाय भी केइ जीवोंका भागवाला आहार है. उसे ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—उक्त जीवोंको अन्तराय पडे जिससे साधुवोंसे द्वेष करे, अप्रीतिका कारण होवे इत्यादि.

(७) " राजाका राज्याभिषेक हुवे, उसके धान्य-कोठारकी शाला, धन-खजानाकी शाला, दुध, दहीं, घृतादि स्थापन करनेकी शाला, राजाके पीने योग्य पाणीकी शाला, राजाके धारण करने योग्य वस्त्र, आभूषणकी शाला, इस छे शालाओंकी याचना न करी हो, पूछा न हो, गवेषणा न करी हो, परन्तु च्यार पांच रोज गृहस्थोंके घर गौचरीके लीये प्रवेश करे. ३

भावार्थ–उक्त छे शालाओंकी याचना कीये विना गौचरी जावे ता कदाच अनजानपणे उसी शालाओंमें चला जावे, तब राजादिको अप्रतीतिका कारण होता है. उस समय विषादिका प्रयोग हुवा हो तो साधुका अविश्वास होता है. इस वास्ते शास्त्रकारोंने प्रथमसे ही मुनियोंको सावचेत कीया है. ताके किसी प्रकारसे दोषका संभव ही न रहे.

(८) ,, राजा यावत् नगरसे बाहार जाता हुवा तथा नगरमें प्रवेश करते हुवेको देखनेको जानेके लीये एक कदम भरनेका मनसे अभिलाषा करे, करावे, करते हुवेको अच्छा समझे.

(९) एवं स्त्रीयों सर्वांग विभूषित, शृंगार कर आती जातीको नेत्रोंसे देखने निमित्त एक कदम भरनेकी अभिलाषा करे. ३

(१०) ,, राजादिक मृगादिका शिकार गया, वहांपर अशनादि च्यार प्रकारका आहार बनाया उस आहारसे आप ग्रहन करे.

(११) ,, राजाके कोइ भेटणा–निजराणा आया है, उस समय राजसभा एकत्र हुइ है, मसलत कर रहे है, वह सभा विर्जन नहीं हुइ, विभाग नहीं पडा. अगर कोइ नवी जुनी होनेवाली है उस हालतमें साधु आहार पाणीके लीये गौचरी जावे, अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

(१२) जहांपर राजा ठहरे है, उसकी नजदीकमें, आसपासमें साधु ठहर स्वाध्याय करे, अशनादि च्यार आहार करे, लघुनात वडीनीत परठे, औरभी कोइ अनार्य प्रयोग कथा कहे. ३

(१३) ,, राजा बाहार यात्रा निमित्त गया हुवाका अशनादि च्यार आहार ग्रहन करे. ३

(१४) एवं यात्रासे आते हुवेका आहार लेवे. ३

(१५-१६) एवं दो सूत्र नदीयात्रा आतों जातोंका.

(१७-१८) एवं दो सूत्र गिरियात्राका.

(१९) एवं क्षत्रिय राजाका महा अभिषेक होते समय गमनागमन करे, करावे. ३

(२०) एवं चंपानगरी, मथुरा, बनारसी श्रावस्ति, साकेतपुर, कपिलपुर, कौशांबी मिथिला, हस्तिनापुर, और राजगृह-इस नगरोंमें अगर राज्याभिषेक चलता हो, उस समय साधु दोय वार तीनवार गमनागमन करे, करावे, करतेकों अच्छा समझे.

भावार्थ—सामान्य साधुवोंको ऐसे समय गमनागमन नहीं करना चाहिये. कारण—शुभाशुभका कारण हो तथा राजादिको वादी प्रतिवादीके विषय शक उत्पन्न हुवे. इसलीये मना है.

(२१) ,, राज्याभिषेकका समय क्षत्रियोंके लीये बनाया भोजन, राजावोंके लीये, अन्य देशोंके राजावोंके लीये, नोकरोंके लीये, राजवंशीयोंके लीये, बनाया हुवा आहार मुनि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. कारण—यह भी राजपिंड ही है.

(२२) ,, राज्याभिषेक समय, जो नट--स्वयं नाचनेवाले, नटवे-परको नचानेवाले, रसीपर नाचनेवाले,झालीपर कूदनेवाले,

बांसपर खेलनेवाले, मल्ल--मुष्टियुद्ध करनेवाले, भांड--कुचेष्टा करनेवाले, कथा कहनेवाले, पावडे जोड जोड गानेवाले, बांदरेकी माफिक कूदनेवाले, खेल तमासा करनेवाले, छत्र धरनेवाले— इन्होंके लीये अशनादि आहार बनाया हो, उस आहारसे साधु ग्रहन करे. ३ कारण—अन्तरायका कारण होता है.

(२३) ,, राज्याभिषेक समय, जो अश्व पालनेवाले, हस्ती पालनेवाले, महिष पालनेवाले, वृषभ पालनेवाले, एवं सिंह, व्याघ्र, छाली मृग, श्वान, सूवर, भेड, कुकडा, तीतर, बटेवर, लावग, चहुं, हंस, मयूर, शुकादि पोषण करनेवाले, इन्हीके मर्दन करनेवाले, तथा इसिको फिराने खीलानेवाले, इन्होंके लीये च्यार प्रकारका आहार निष्पन्न कीया हुवा आहार साधु ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. वह मुनि प्रायश्चितका भागी होता है.

(२४) ,, राज्याभिषेक समय, जो सार्थवाहकके लीये, पग चंपी करनेवालोंके लीये, मर्दन करनेवालोंके लीये, तैलादिका मालीस करनेवालोंके लीये, स्नान मज्जन करानेवालोंके लीये, शृंगारसजानेवालोंके लीये, चम्मर, छत्र, वस्त्र, भूषण धारण करानेवालोंके लीये, दीपक, तरवार, धनुष्य, भालादि धारण करनेवालोंके लीये, अशनादि च्यार प्रकारका आहार बनाया, उस आहारसे मुनि आहार ग्रहन करे. भावना पूर्ववत्.

(२५) ,, राज्याभिषेक समय, जो वृद्ध पुरुषोंके लीये, कृत नपुंसकोंके लीये, कंचुकी पुरुषोंके लीये, द्वारपालोंके लीये, दंड धारकोंके लीये बनाया आहार साधु ग्रहन करे. ३

(२६) ,, राज्याभिषेक समय जो कुब्ज दासीयोंके लीये, यावत् पारसदेशकी दासीयोंके लीये बनाया हुवा आहार, मुनि ग्रहन करे. ३ भावना पूर्ववत् अन्तराय होता है.

इस २६ बोलोंसे कोइ भी बोल साधु साध्वीयों सेवन करे, करावे, करतेको अनुमोदन करे, अर्थात् अच्छा समझे. उस साधु साध्वीयोंको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवा उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र—नौवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(१०) श्री निशिथसूत्र—दशवा उद्देशाः

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' अपने आचार्य भगवानको तथा रत्नत्रयादिसे वृद्ध मुनियोंको कठोर (स्नेह रहित) वचन बोले. ३

(२) ,, अपने आचार्य भगवान् तथा रत्नत्रयादिसे वृद्ध मुनियोंको कर्कश (मर्मभेदी) वचन बोले. ३

(३) एवं कठोर (कर्कश) कारी वचन बोले. ३

(४) एवं आचार्य भगवान्की आशातना करे. ३

भावार्थ—आशातना मिथ्यात्वका कारण है.

(५) ,, अनन्तकाय संयुक्त आहार करे. ३

भावार्थ—वस्तु अचित्त है, परन्तु नील, फूल, कन्द, मुलादिसे प्रतिबद्ध है. ऐसा आहार करनेवाला प्रायश्चितका भागी होता है.

(६) ,, आदाकर्मी आहार (साधुके लीये ही बनाया गया हो) को ग्रहन करे. ३

(७) ,, गतकालमें लाभालाभ सुख दुःख हुवा. उसका निमित्त प्रकाशे. ३

(८) एवं वर्त्तमान कालका.

(९) एवं अनागत कालका निमित्त कहे, प्रकाश करे.

भावार्थ—निमित्त प्रकाश करनेसे स्वाध्याय ध्यानमें विघ्न होवे, राग द्वेषकी वृद्धि होवे, अप्रतीतिका कारण-इत्यादि दोषों-का संभव है.

(१०) ,, अन्य किसी आचार्यका शिष्यको भरममें (भ्रममें) डाल देवे, चित्तको व्यग्र कर अपनी तर्फ रखनेकी कोशीश करे. ३

(११) ,, एवं प्रशिष्यको भरम (भ्रम) में डाल, दिशामुग्ध बनाके अपने साथ ले जावे तथा वस्त्र, पात्र, ज्ञानसूत्रादिका लोभ दे, भरमाके ले जावे. ३

(१२) ,, किसी आचार्यके पास कोइ गृहस्थ दीक्षा लेता हो, उसको आचार्यजीका अवगुणवाद बोल (यह तो लघु है, हीनाचारी है, अज्ञान है-इत्यादि) उस दीक्षा लेनेवालाका चित्त अपनी तर्फ आकर्षित करे. ३

(१३) एवं एक आचार्यसे अरुचि कराके दुसरोंके साथ भेजवा दे.

भावार्थ—ऐसा अकृत्य कार्य करनेसे तीसरा महाव्रतका भंग होता है. साधुवोंकी प्रतीति नहीं रहती है. एक ऐसा कार्य करनेसे दुसरा भी देखादेखी तथा द्वेषके मारे करेंगा, तो साधुमर्यादा तथा तीर्थंकरोंके मार्गका भंग होगा.

(१४) ,, साधु साध्वीयोंके आपसमें क्लेश हो गया हो तो उस क्लेशका कारण प्रगट कीये विना, आलोचना कीया विगर, प्रायश्चित लीये विगर, खमतखामणा कीया विगर तीन रात्रिके उपरांत रहे तथा साथमें भोजन करे. ३

भावार्थ--विगर खमतखामणा रहेंगा, तो कारण पाके फिर भी उस क्लेशकी उदीरणा होगा.

(१५) ,, क्लेश करके अन्य आचार्य पाससे आये हुवेको तीन रात्रिसे अधिक अपने पास रखे. ३

भावार्थ—आये हुवे साधुको मधुर वचनोंसे समझावे कि-हे भद्र! तुमको तो जहां जावेंगा, वहां ही संयम पालना है, तो फिर अपने आचार्यको ही क्यों छोडते हो, वापिस जावे, आचार्य महाराजकी वैयावच्च, विनय, भक्ति कर प्रसन्न करो. इत्यादि हित शिक्षा दे, क्लेशसे उपशान्त बनाके वापिस उसी आचार्यके पास भेजना. ऐसा कारणसे तीन रात्रि रख सक्ते है. जयादा रखे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(१६) ,, लघु प्रायश्चित्तवालेको गुरु प्रायश्चित कहै. ३ (द्वेषके कारणसे).

(१७) एवं गुरु प्रायश्चित्तवालेको लघु प्रायश्चित्त कहे. ३ (रागके कारणसे)

(१८) एवं लघु प्रायश्चित्तवालेको गुरु प्रायश्चित्त देवे. ३

(१९) गुरु प्रायश्चित्तवालेको लघु प्रायश्चित्त देवे. ३ भावना पूर्ववत्.

(२०) ,, लघु प्रायश्चित्त सेवन कीया हुवा साधुके साथ आहार पाणी करे. ३

(२१) ,, लघु प्रायश्चित्तका स्थान सेवन कीया है, उसे आचार्य सुना है कि—अमुक साधुने लघु प्रायश्चित्त सेवन कीया है. फिर उसके साथ आहार पाणी करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(२२) ,, एवं सुनलेने पर तथा स्वयं जानलेनेपर आलो-चना करने योग्य प्रायश्चित्तकी आलोचना नहीं करे. यह हेतु उसके साथ आहारपाणी करे. ३

(२३) संकल्प—अमुक दिन आलोचना कर प्रायश्चित्त लेवेंगा. परन्तु जबतक आलोचना कर प्रायश्चित्त नहीं लीया है, वहांतक उसे दोषित साधुके साथ आहार पाणी करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. जैसे च्यार सूत्र लघु प्रायश्चित्त आश्रित कहा है, इसी माफिक च्यार सूत्र (२४-२५-२६-२७) गुरुप्राय-श्चित्त आश्रित कहना. इसी माफिक च्यार सूत्र (२८-२९-३०-३१) लघु और गुरु दोनों सामेलका कहना. ×

(३२) ,, लघु प्रायश्चित्त तथा गुरु प्रायश्चित्त, लघु प्राय-श्चित्तका हेतु, गुरु प्रायश्चित्तका हेतु, लघु प्रायश्चित्तका संकल्प, गुरु प्रायश्चित्तका संकल्प. सुनके, हृदयमें धारके फिर भी उस प्राय-श्चित्त संयुक्त साधुके साथ एक मंडलपर भोजन करे, करावे, कर-तेको अच्छा समझे.

भावार्थ—कोइ साधु प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना नहीं करते है. उसके साथ दुसरे साधु आहार पाणी करते हो, तो उसे एक कीस्मकी सहायता मिलती है. दुसरी दफे दोष सेव-नमें शंका नहीं रहेती है. दुसरे साधु भी स्वच्छंदी हो प्रायश्चित्त सेवन करनेमें शंका नहीं लावेंगा तथा दोषित साधुवोंके साथ भोजन करनेवालोंमें एकांश व्याप्त होगा, इत्यादि. इसी वास्ते

× एक प्राचीन प्रतिमें गुरु प्रायश्चित्त और लघु प्रायश्चित्तसे भी च्यार सूत्र लिखा हुवा है. विकल्पके संबंधसे यह भी च्यार विकल्प हो सक्ते है. तथा लघु प्रा०का हेतु, गुरु प्रा० संकल्प, लघु प्रा० संकल्प, गुरु प्रा० हेतु. लघु गुरु दोनोंका हेतु तथा दोनोंका संकल्प यह भी च्यार सूत्र है.

दोषित साधुवोंको हितबुद्धिसे आलोचना करवाके ही उन्होंके साथ आलाप संलाप करनेकी ही शास्त्रकारोंकी आज्ञा है.

(३३) ,, सूर्योदय होनेके बाद तथा सूर्य अस्त होने के पहला मुनियोंकी भिक्षावृत्ति है. साधु नीरोगी है, और सूर्योदय होनेमें तथा अस्त न होनेमें कुच्छ भी शंका नहीं है. उस समय भिक्षा ग्रहन कर, लायके भोजन करनेको बैठा, तथा भोजन करते बखत स्वयं अपनी मतिसे तथा दुसरे गृहस्थोंके वचन श्रवण करनेसे ख्याल हुवा कि—यह भिक्षा सूर्योदय पहला तथा सूर्य अस्त होनेके बाद में ग्रहन की गइ है. (अति बादल तथा पर्वतादिकी व्याघातसे) ऐसी शंका होनेपर मुंहका भोजन थुंकके साफ करे, पात्राका पात्रामें रखे, हाथका हाथमें रखे. अर्थात् उस सब आहारको एकान्त निर्जीव भूमिपर विधिपूर्वक परठे, तो भगवानकी आज्ञाका अतिक्रम न हुवे, (परिणाम विशुद्ध है). अगर शंका होनेपर भी आप भोगवे तथा अन्य किसी साधुवोंको देवे, तो वह मुनि, रात्रिभोजनके दोषका भागी होता है. उसे चातुर्मासिक प्रायश्चित देना चाहिये.

(३४) ,, इसी माफिक साधु निरोगी है, परन्तु सूर्योदय होने में तथा अस्त होनेमें शंका है, यह दो सूत्र निरोगीका कहा. इसी माफिक दो सूत्र रोगी साधुवोंका भी समझना. (३५-३६)

भावार्थ—किसी आचार्यादिकी वैयावच्चमें शीघ्रतासे जाना पडे, छोटे गामोंमें दिनभर भिक्षाका योग न बना, दिवसके अन्तमें किसी नगरमें पहुंचे, उस समय बादल बहुत है, तथा पर्वतकी व्याघात होनेसे ऐसा मालुम होता है कि—अबी दिन होगा तथा पहले दिन भिक्षाका योग नहीं बना. दुसरे दिन सूर्योदय होते ही क्षुधा उपशमानेके लीये तथा विशेष पिपासा होनेसे, छास

आदि लेनेका काम पडे, उस अपेक्षा यह विधि बतलाइ है. सामान्यतासे तो साधु दुसरी तीसरी पौरुषीमें ही भिक्षा करते है.

(३७) ,, कोइ साधु साध्वीयोंको रात्रि समय तथा वैकाल (प्रतिक्रमणका बखत) समय अगर आहार पाणी संयुक्त उगालो (गुचलको) आवे, उसको निर्जीव भूमिपर परठ देनेसे आज्ञाका भंग नहीं होता है. अगर पीछे भक्षण करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(३८) ,, किसी बीमार साधुको सुनके उसकी गवेषणा न करे. ३

(३९) अमुक गाममें साधु बीमार है, ऐसा सुन आप दुसरे रहस्तेसे चला जावे, जाने कि—मैं उस गाममें जाउंगा तो बीमार साधुकी मुझे वैयावच्च करना पडेगा.

भावार्थ—ऐसा करनेसे निर्दयता होती है. साधुकी वैयावच्च करनेमें महान् लाभ है. साधुकी वैयावच्च साधु न करेंगा, तो दुसरा कौन करेंगा ?

(४०) ,, कोइ साधु बीमार साधुके लीये दवाइ याचनेको गृहस्थोंके वहां गया, परन्तु वह दवाइ न मिली तो उस साधुने आचार्यादि वृद्धोंको कह देना चाहिये कि—मेरे अन्तरायका उदय है कि इस बीमार मुनिके योग्य दवाइ मुझे न मिली. अगर वापिस आयके ऐसा न कहे. वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है. कारण-आचार्यादि तो उस मुनिके विश्वासपर बैठे है.

(४१) ,, दवाइ न मिलनेपर साधु पश्चात्ताप न करे. जैसे—अहो ! मेरे कैसा अन्तराय कर्मका उदय हुवा है कि—इतनी याचना करनेपर भी इस बीमार साधुके योग्य दवाइ न मिली इत्यादि.

भावार्थ—जितनी दवाइ मिले, उतनी लाके बीमारको देना- न मिलनेपर गवेषणा करना. गवेषणा करनेपर भी न मिले तो पश्चात्ताप करना. कारण बीमार साधुको यह शंका न हो कि— सब साधु प्रमाद करते है. मेरे लीये दवाइ लानेका उद्यम भी नहीं करते है.

(४२) ,, प्रथम वर्षाऋतु-श्रावण कृष्णप्रतिपदामें ग्रामानुग्राम विहार करे. ३

(४३) ,, अपर्युषणको पर्युषण करे. ३

(४४) पर्युषणको पर्युषण न करे.

भावार्थ—आषाढ चौमासी प्रतिक्रमणसे ५० दिन भाद्रपद शुक्लपंचमीको पर्युषण होता है. पर्युषण प्रतिक्रमण करनेसे ७० दिनोंसे कार्तिक चातुर्मासिक प्रतिक्रमण होता है अगर वर्त्तमान चतुर्मासमें अधिक मास भी हो, तों उसे काल चूलिका मानना चाहिये।

(४५) ,, पर्युषण (सांवत्सरिक) प्रतिक्रमण समय गौके बालों जितने केश (बाल) शिरपर रखे. ३

भावार्थ—मुनियोंका सांवत्सरिक प्रतिक्रमण पहला शिरका लोच करना चाहिये।

(४६) ,, पर्युषण—संवत्सरीके दिन इतर स्वल्प बिन्दु मात्र आहार करे. ३

भावार्थ—संवत्सरीके दिन शक्ति सहित साधुवोंको चौविहार उपवास करना चाहिये.

(४७) ,, अन्य तीर्थीयों तथा अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थोंके साथ पर्युषण करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—जैसे जैन मुनियोंके पर्युषण होते है, इसी माफिक अन्य तीर्थी लोग भी अपनी ऋषि पंचमी आदि दिनको मुकर कीया है. वह अन्यतीर्थी कहे कि—हे मुनि! तुमारा पर्युषण हमको करावे और हमारा पर्युषण तुम करो. ऐसा करना साधु साध्वीयोंको नहीं कल्पै.

(४८) ,, आषाढी चातुर्मासीके बाद साधु साध्वी वस्त्र, पात्र ग्रहन करे. ३

भावार्थ—जो वस्त्रादि लेना हो, वह आषाढ चातुर्मासी प्रतिक्रमण करनेके पेस्तर ही ग्रहन कर लेना. बाद में कार्तिक चातुर्मासी तक वस्त्र नहीं ले सक्ते है.+

उपर लिखे ४८ बोलोंसे कोइ भी बोल सेवन करनेवाले साधु साध्वीको गुरु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र-दशवां उद्देशाका संचिप्त सार.

(११) श्री निशिथसूत्र—इग्यारवां उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' लोहाका पात्र करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(२) एवं लोहाका पात्राको रखे.

+ समवायांगसूत्र—"समणे भगवं महावीरे सवीसइ राइ मास वइक्कंते सत्तरिएहिं राइंदिएहिं संसेहिं वासावासं पज्जोसमेइ" अर्थात् आषाढ चातुर्मासीसे पचाश दिन और कार्तिक चातुर्मासिके सीत्तर दिन पहला सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करना साधुवोंको कल्पै.

(३) एवं लोहाका पात्रामें भोजन करे तथा अन्य काममें लेवे. ३

(४) एवं तांबाका पात्र करे.

(५) धारे रखे.

(६) भोगवे. ३

(७) एवं तरुवेका पात्रा करे.

(८) धारे.

(९) भोगवे. ३ एवं तीन सूत्र सीसाके पात्रोंका १०-११-१२. एवं तीन सूत्र कांसीके पात्रोंका १३-१४-१५. एवं तीन सूत्र रुपाके पात्रोंका १६-१७-१८. एवं तीन सूत्र सुवर्णके पात्रोंका १९-२०-२१. एवं जातिरुप पात्र २४. एवं मणिपात्रोंके तीन सूत्र. २५-२६-२७. एवं तीन सूत्र कनकपात्रोंका २८-२९-३०. दांत पात्रोंके ३३. सींग पात्रोंके ३६. एवं वस्त्र पात्रोंके ३९. एवं चर्म पात्रोंके तीन सूत्र ४२. एवं पत्थर पात्रके तीन सूत्र ४५. एवं अंकरत्नोंके पात्रोंका तीन सूत्र ४८. एवं शंख पात्रोंके तीन सूत्र ५१. एवं वज्ररत्नों के पात्र करे, रखे, उपभोगमें लेवे. ३ इति ५४ सूत्र.

भावार्थ—मुनि पात्र रखते है. वह निर्ममत्व भावसे केवल संयमयात्रा निर्वाह करनेके लीये ही रखते है. उक्त पात्रो धातुके, ममत्वभाव बढानेवाले है. चौरादिका भय, संयम तथा आत्मघातके मुख्य कारण है. वास्ते उक्त पात्रोंकी मना करी है. जैसे ५४ सूत्रों उक्त पात्र निषेधके लीये कहा है, इसी माफिक ५४ सूत्र पात्रोंके बंधन करनेके निषेधका समझना. जैसे पात्रोंका लोहका बन्ध करे, लोहके बन्धनवाला पात्र रखे, लोहाका बन्धन वाला पात्र उपभोगमें लेवे यावत् वज्ररत्नों तकके सूत्र कहना. भावार्थ पूर्ववत्. १०८

(१०९) ,, पात्रा याचने निमित्त दोय कोश उपरांत गमन करे, गमन करावे, गमन करनेको अच्छा समझे. ३

(११०) एवं दोय कोश उपरांतसे सामने दोय कोशकी अन्दर लायके देवे, उस पात्रको मुनि ग्रहन करे. ३

(१११) ,, श्रीजिनेश्वर देवोंने सूत्रधर्म (द्वादशांगरुप), चारित्रधर्म (पंचमहाव्रतरुप), इस धर्मका अवगुणवाद बोले, निंदा करे, अयश करे, अकीर्ति करे. ३

(११२) ,, अधर्म, मिथ्यात्व, यज्ञ, होम, ऋतुदान, पिंडदान, इत्यादिकी प्रशंसा-तारीफ करे. ३

भावार्थ—धर्मकी निन्दा और अधर्मकी तारीफ करनेसे जीवोंकी श्रद्धा विपरीत हो जाती है. वह अपनी आत्मा और अनेक पर आत्मावोंको डुबाते हुवे और दुष्कर्म उपार्जन करते है.

(११३) ,, जो कोइ साधु साध्वी, जो अन्यतीर्थी तापसादि और गृहस्थ लोगोंके पावोंको मसले, चंपे, पुंजे. यावत् तीसरा उद्देशामें पावोंसे लगाके ग्रामानुग्राम विहार करते हुवेके शिरपर छत्र करनेतक ५६ सूत्र वहांपर साधु आश्रित है, यहांपर अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ आश्रित है. इति १६८ सूत्र हुवे,

(१६९) ,, साधु आप अन्धकारादि भयोत्पत्तिके स्थान जाके भय पामे.

(१७०) अन्य साधुवोंको भयोत्पत्तिके स्थान ले जाय के भयोंतपन्न करावे.

(१७१) स्वयं कुतूहलादि कर विस्मय पामे.

(१७२) अन्य साधुवोंको विस्मय उपजावे.

(१७३) स्वयं संयमधर्मसे विपरीत बने.

(१७४) अन्य साधुवोंको विपरीत बनावे, अर्थात् अपना स्वभाव संयममें रमणता करनेका है, इन्हसे विपरीत बने, हांसी टंटा, फिसादादि करे, करावे, करतेको सहायता देवे.

(१७५) ,, मुंहसे बजानेकी वीणा करे, करावे, करने हुवेको सहायता देवे.

भावार्थ—भय, कुतूहल विपरीत होना, सब बालचेष्टा है, संयमको बाधाकारी है. वास्ते साधुवोंको पहलेसे ऐसा निमित्त कारणही नहीं रखना चाहिये. यह मोहनीय कर्मका उदय है. इसको बढानेसे बढता जावे, और कम करनेसे कमती हो जावे, वास्ते ऐसे अकृत्य कार्य करनेवालोंको प्रायश्चित्त बतलाया है.

(१७६) ,, दोय राजावोंका विरुद्ध पक्ष चल रहा है. उस समय साधु साध्वीयों वारवार गमनागमन करे. ३

भावार्थ—राजावोंको शंका होती है कि—यह कोइ परपक्षवाला साधुवेष धारण कर यहांका समाचार लेनेको आता होगा. तथा शुभाशुभका कारण होनेसे धर्मको—शासनको नुकशान होता है.

(१७७) ,, दिनका भोजन करनेवालोंका अवगुनवाद बोले. जैसे एक सूर्यमें दोय वार भोजन न करना इत्यादि.

(१७८) ,, रात्रिभोजनका गुणानुवाद बोले, जैसे रात्रिभोजन करना बहुत अच्छा है. इत्यादि.

(१७९) ,, पहले दिन भोजन ग्रहन कर, दुसरे दिन दिनको भोजन करे. तथा पहली पोरसीमें भिक्षा ग्रहण कर चौथी पोरसीमें भोजन करे. ३

(१८०) एवं दिनको अशनादि च्यार आहार ग्रहन कर रात्रिमें भोजन करे. ३

(१८१) रात्रिमें अशनादि च्यार आहार ग्रहन कर दिनका भोजन करे. ३

(१८२) एवं रात्रिमें अशनादि च्यार आहार ग्रहन कर रात्रिमें भोजन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—रात्रिमें आहार ग्रहन करनेमें तथा रात्रिमें भोजन करनेमें सुक्ष्म जीवोंको विराधना होती है. तथा प्रथम पोरसीमें लाया आहार, चरम पोंरसीमें भोगवनेसे कल्पातिक्रम दोष लगता है.

(१८३) ,, कोइ गाढागाढी कारण विगर अशनादि च्यार प्रकारका आहार, रात्रिमें वासी रखे, रखावे, रखतेको अच्छा समझे.

(१८४) अति कारणसे अशनादि च्यार आहार, रात्रिमें वासी रखा हुवाको दुसरे दिन बिन्दुमात्र स्वयं भोगवे, अन्य साधुको देवे. ३

भावार्थ-कबी गोचरीमें आहार अधिक आगया, तथा गोचरी लानेके बाद साधुवोंको बुखारादि बेमारीके कारणसे आहार बढ गया, वखत कमती हो, परठनेका स्थान दूर है, तथा घनघोर वर्षाद वर्ष रही है. ऐसे कारणसे वह बचा हुवा आहार रह भी जावे तो उसको दुसरे दिन नहीं भोगवना चाहिये, रात्रि समय रखनेका अवसर हो, तो राखमें मसळ देना चाहिये. ताके उसमें जीवोत्पत्ति न हो. अगर रात्रिवासी रहा हुवा अशनादि आहारको मुनि खानेकी इच्छा भी करे, उसे यह प्रायश्चित बतलाया है.

(१८५) ,, कोइ अनार्यलोक मांस, मदिरादिका भोजन स्वयं अपने लीये तथा आये हुवे पाहुणे (महिमान) के लीये

बनाया हो, इधर उधर लाते, ली जाते हो, जिसका रुप ही अदर्शनीय है. जहांपर ऐसा कार्य हो रहा है, उसीकी तर्फ जानेकी अभिलाषा, पिपासा, इच्छा ही साधुवोंको न करनी चाहिये. अगर करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होगा. कारण-वह जातेमें लोगोंको शंकाका स्थान मिलेगा.

(१८६) ,, देवोंको नैवेद्य चढानेके लीये, जो अशनादि आहार तैयार कीया है, उसकी अन्दरसे आहार ग्रहन करे. ३ यह लोकविरुद्ध है. कदाच देवता कोपे तो नुकशान करे.

(१८७) ,, जो कोइ साधु साध्वी जिनाज्ञा विराधके अपने छंदे चलनेवाले है, उसकी प्रशंसा करे. ३

(१८८) ऐसे स्वच्छंदे चलनेवालोंको वन्दे. ३ इसीसे स्वच्छंदचारीयोंकी पुष्टि होती है.

(१८९) ,, साधुवोंके संसारपक्षके न्यातीले हो, अ न्यातीले हो, श्रावक हो, अन्य गृहस्थ हो, परन्तु दीक्षाके योग्य न हो, जिसमें दीक्षा ग्रहन करनेका भान भी न हो, ऐसा अपात्रको दीक्षा देवे. ३

भावार्थ—भविष्यमें वडा भारी नुकशानका कारण होता है.

(१९०) ,, अगर अज्ञातपनेसे ऐसे अपात्रको दीक्षा दे दी हो, तत्पश्चात् ज्ञात हुवा कि-यह दीक्षाके लीये अयोग्य है. उसको पंचमहाव्रतरुप वडीदीक्षा देवे. ३

(१९१) अगर वडीदीक्षा देनेके बाद ज्ञात हो कि-यह संयमके लीये योग्य नहीं है. ऐसेको ज्ञान, ध्यान देवे, सूत्र-सिद्धांतकी वाचना देवे, उसकी वैयावच्च करे, साथमें एक मंडले-पर भोजन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. भावना पूर्ववत्.

(१९२) ,, वस्त्र सहित साधु, वस्त्र सहित साध्वीयोंकी अन्दर निवास करे. ३

(१९३) एवं वस्त्र सहित, वस्त्र रहित.

(१९४) वस्त्र रहित, वस्त्र सहित.

(१९५) वस्त्र रहित, वस्त्र रहितकी अन्दर निवास करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—साधु, साध्वीयोंको किसी प्रकारसे सामेल रहना नहीं कल्पै. कारण-अधिक परिचय होनेसे अनेक तरहका नुकशान है. और स्थानांगसूत्रकी चतुर्भंगीके अभिप्राय-अगर कोइ विशेष कारण हो-जैसे किसी अनार्य ग्रामकी अन्दर अनार्य आदमीयोंकी बदमासी हो, ऐसे समय साध्वीयों एकतर्फसे आइ हो, दुसरी तर्फसे साधु आये हो, तो उस साध्वीके ब्रह्मचर्य रक्षण निमित्त, धर्मपुत्रके माफिक रह भी सक्ते है. तथा वस्त्रादि चौर हरण कीया हो एसा विशेष कारणसे रह भी सक्ते है.

(१९६) ,, रात्रिमें वासी रखके पीपीलिका उसका चूर्ण, सुठी चूर्ण, बलवालुणादि पदार्थ भोगवे. ३ तथा प्रथम पोरसीमें लाया चरम पोरसीमें भोगवे. ३

(१९७) ,, जो कोइ साधु साध्वी-बालमरण-जैसे पर्वतसे पडके मरजाना, मरुस्थलकी रेतीमें खुचके मरना, खाड-खाइमें पडके मरना. इस च्यारोंमें फस कर मरना, कीचडमें फस कर मरना, पाणीमें डूबके मरना, पाणीमें प्रवेश करना, कूपादिमें कूदके मरना, अग्निमें प्रवेश कर तथा कूद कर अग्निमें पडके मरना, विषभक्षण कर मरना, शस्त्रसे घात कर मरना, पांच इंद्रियोंके वश हो मरना, मनुष्य मरके मनुष्य होना.

पशु मरके पशु होना अंतःकरणमें मायशल्य रखके मरना, फांसी लेके मरना, महाकायावाले मृतक पशुके कलेवरमें प्रवेश हो मरना संयमादि शुभ योगोंसे भ्रष्ट हो, अर्थात् विराधक भावमें मरना, इन्हके सिवाय भी जो बालमरण मरनेवालोंकी प्रशंसा तारीफ करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

उपर लिखे १९७ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु-साध्वीयोंको गुरुचातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र-इग्यारवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

(१२) श्री निशिथसूत्र-बारहवां उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' 'कलूणं' दीनपणाको धारण करता हुवा त्रस-जीव गौ, भेंसादिको तृणकी रसी (दोरी)से बांधे. एवं मुंज रसीसें बांधे. काष्ठकी चाखडी तथा खोडासे बन्धन करे, चर्मकी रसीसे, रज्जुकी रसीसे, सूतकी रसीसे, अन्य भी किसी प्रकारकी रसीसे, त्रस जीवोंको बांधे, बधावे, अन्य कोइ साधु बांधते हो, उसको अच्छा समझे.

(२) एवं उक्त बन्धनोंसे बन्धा हुवा त्रस जीवोंको खोले, खोलावे, खोलतोंको अच्छा समझे.

भावार्थ—कोइ साधु, गृहस्थोंके मकानमें ठेरे हुवे है. वह गृहस्थ जैन मुनियोंके आचारसे अज्ञात है. गृहस्थ कहे कि—हे मुनि! में अमुक कार्यके लीये जाता हुं. मेरे गौ, भेंसादि पशु,

जंगलसे आजावे, तो यह रसी (दोरी) यहां रखता हुं. तुम उस पशुवोंको बांध देना, तथा यह बंधे हुवे गौ, भैंसादि पशुवोंको छोड देना. उस समय मुनि, मकानमें रहनेके कारण ऐसी दीनता लावे कि-अगर इसका कार्यमें नहीं करुंगा, तो मुजे मकानमें ठेरनेको न देगा, तथा मकानसे निकाल देगा, तो मैं कहां ठेरुंगा? ऐसी दीनवृत्तिको धारण कर, मुनि, उस गृहस्थका वचन स्वीकार कर, उक्त रसीयोंसे त्रस-प्राणी जीवोंको बांधे तथा छोडे तो प्रायश्चित्तका भागी होता है. तात्पर्य यह है कि—मुनियोंको सदैव निःस्पृहता-निर्भयता रखना चाहिये. मकान न मिले तो जंगलमें वृक्ष नीचे भी ठेर जाना, परन्तु ऐसा पराधीन हो, गृहस्थोंका कार्य न करना चाहिये.*

* इस पाठका तेराहपन्थी लोग बिलकुल मिथ्या अर्थ कर जीवदयाकी जड पर कुठार चलाते हैं. वह लोग कहते हैं कि —'कालूणं' अनुकंपा लके मुनि जीवोंको बांधे नहीं, और छोडे नहीं, तथा गृहस्थ लोग मरते हुवे जीवोंको छोडावे, उसको अच्छा समझनेमें मुनिको पाप लगता हैं, तो छोडानेवाले गृहस्थोंको पुन्य कहांसे? वहांतक पहुंच गये हैं कि—हजारों गौसे भरा हुवा मकानमें अग्नि लग जावे तथा कोइ महात्मावोंको दुष्ट जन फांसी लगावे, उसे बचानेमें भी महापाप लगता है. ऐसा तेराहपन्थीयोंका कहना है.

बुद्धिमान् विचार कर सक्ते है कि—भगवान् नेमिनाथ तीर्थंकर, अपने विवाह समय हजारों पशु, पक्षीयोंकी अनुकंपा कर, उन्होंको जीवितदान दीया था. परमात्मा पार्श्वप्रभुने अग्निमें जलता हुवा नागको बचाया. भगवान् शांतिनाथने पूर्वभवमें पारेवाका प्राण बचाया. भगवान् वीरप्रभुए गोशालाको बचाया. और तीर्थंकरोने खुद अपने मुखारविंदसे अनुकंपाको सम्यक्त्वका चौथा लक्षण बतलाया हैं. तो फिर पन्थी लोग किस आधारसे कहते है कि—अनुकंपा नहीं करना. अगर वह लोग मिथ्यात्वके प्रबल उदयसे कइ भी देवे, तो आर्य मनुष्य उसे कैसे मान सकेगा? विशेष खुलासा अनुकंपाछत्तीसीसे देखो.

(३) ,, प्रत्याख्यान कर वारंवार भंग करे. ३

(४) ,, प्रत्येक वनस्पति मिश्रित भोजन करे. ३

(५) ,, किसी कारणसे चर्म रखना पडे, तो भी रोमसहित चर्म रखे.

(६) ,, तृणका बना हुवा पीडा (पाट—बाजोट) पलालका बना पीडा, गोंबरसे लींपा हुवा पीडा, काष्टका पीडा, वेतका पीडा, गृहस्थोंके वस्त्रादिसे आच्छादित कीया हुवा पर स्वयं बैठे, अन्यको बैठावे, बैठते हुवेको अच्छा समझे.

भावार्थ—उसमें जीवादि हो तो दृष्टिगोचर नहीं होते है. बैठनेसे जीवोंकी विराधना होती है. इत्यादि दोषका संभव है.

(७) ,, साध्वीकी पीछोवडी (चद्दर) अन्यतीर्थी तथा उन्होंके गृहस्थोंसे सीवावे. ३ इसीसे अन्य तीर्थीयोंका परिचय बढता है, पराधीन होना पडता है. उसके योग सावद्य होते है. इत्यादि,

(८) ,, चर्मा, जितनी पृथ्वीकायका आरंभ स्वयं करे, अन्यके पास आदेश दे करवावे, करते हुवेको अच्छा समझे. एवं अप्काय, तेउकाय, वाउकाय, वनस्पतिकायका ९-१०-११-१२

(१३) ,, सचित्त वृक्षपर चढे, चढावे, चढतेको अच्छा समझे.

(१४) ,, गृहस्थोंके भाजनमें अशनादि आहार करे. ३

(१५) ,, गृहस्थोंका वस्त्र पेहरे. ३

भावार्थ—वस्त्र अपनी निश्रायमें याचके नहीं लीया है, गृहस्थोंका वस्त्र है, वापरके वापिस देवे. उस अपेक्षा है. अर्थात् गृहस्थके वस्त्र मांगके ले लीया, फिर वापिस भी दे दीया, ऐसा करना साधुवोंकों नहीं कल्पै.

(१६) ,, गृहस्थोंके पलंग, पथरणे आदिपर सुवे—शयन करे. ३

(१७) ,, गृहस्थोंको औषधि बतावे, गृहस्थोंके लीये औषधि करे.

(१८) ,, साधु भिक्षाको आनेके पेस्तर साधु निमित्त हाथ, चाटुडी, कडछी, भाजन कचे पाणीसे धोकर साधुको अशनादि च्यार आहार देवे. ऐसे साधु ग्रहन करे.

(१९) ,, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ, भिक्षा देते समय हाथ, चाटुडी, भाजनादि कचे पाणीसे धो देवे और साधु उसे ग्रहन करे. ३

भावार्थ—जीवोंकी विराधना होती है.

(२०) ,, काष्ठके बनाये हुवे पुतलीयें, अश्व, गजादि. एवं वस्त्रके बनाये. चीढेके बनाये. लेप, लीष्टादिसे दांतके बनाये खीलुने, मणि, चंद्रकांतादिसे बनाये हुवे भूषणादि, पत्थरके बनाये मकानादि, ग्रंथित पुष्पमालादि, वेष्ठित—बीठसे बीठ मिलाके पुष्पदडादि. सुवर्णादि धातु भरतसे बनाये पदार्थ, बहुत पदार्थ एकत्र कर चित्र विचित्र पदार्थ, पत्र छेदन कर अनेक मोदक (मादक) पदार्थ, जिसको देखनेसे मोहनीय कर्मकी उदीरणा हो ऐसा पदार्थ देखनेकी अभिलाषा करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—ऐसे पदार्थको देखनेकी अभिलाषा करनेसे स्वाध्याय ध्यानमें व्याघात, प्रमादकी वृद्धि, मोहनीय कर्मकी उदीरणा, यावत् संयमसे पतित होता है.

(२१) ,, काकडीयों उत्पन्न होनेके स्थान, 'काच्छा' केले आदि फलोत्पत्तिके स्थान, उत्पलादि कमलस्थान, पर्वतका

निर्जरणा, उज्झरणा, वापी, पुष्करिणी. दीर्घ वापी, गुजागर वापी, सर (तलाव), सरपंक्ति-आदि स्थानोंको नेत्रोंसे देखनेकी अभिलाषा करे. ३ भावना पूर्ववत्.

(२२) ,, पर्वतके नदीके पासके काच्छा केलीघर, गुप्तघर, वन-एक जातिका वृक्ष, महान् अटवीका वन, पर्वत-विषम पर्वत.

(२३) ग्राम, नगर, खेड, कविठ, मंडप, द्रोणीमुख, पट्टण, सोना—चांदीका आगर, तापसोंका आश्रम, घोषी निवास करनेका स्थान, यावत् सन्निवेश.

(२४) ग्रामादिमें किसी प्रकारका महोत्सव हो रहा हो.

(२५) ग्रामादिका वध (घात) हो रहा हो.

(२६) ग्रामादिमें सुन्दर मार्ग बन रहा है, उसे देखनेको जानेका मन भी करे. ३

(२७) ग्रामादिमें दाह (अग्नि) लगी हो, उसे देखनेकी अभिलाषा मनसे भी करे. ३

(२८) जहां अश्वक्रीडा, गजक्रीडा, यावत् सुवरक्रीडा होती हो.

(२९) जहांपर चौरादिकी घात होती हो.

(३०) अश्वका युद्ध, गजयुद्ध, यावत् शूकर युद्ध होता हो.

(३१) जहांपर बहुत गौ, अश्व, गजादि रहते हो, ऐसी गौशालादि.

(३२) जहांपर राज्याभिषेकका स्थान है, महोत्सव होता हो, कथा समाप्तका महोत्सव होता हो, मानानुमान-तोल, माप, लंब, चोड जाननेका स्थान, वाजींत्र, नाटक, नृत्य, बीना बजानेका स्थान, ताल, ढोल, मृदंग आदि गाना बजाना होता हो.

(३३) चौर, बील, पारधीयोंका उपद्रवस्थान, वैर, खार, क्रोधादिसे हुवा उपद्रव युद्ध, महासंग्राम, क्लेशादिके स्थानोंको.

(३४) नाना प्रकारके महोत्सवकी अन्दर बहुतसी स्त्रीयों, पुरुषों, युवक, वृद्ध, मध्यम वयवाले, अनेक प्रकारके वस्त्र, भूषण, चंदनादिसे शरीर अलंकृत बनाके केइ नृत्य, केइ गान, केइ हास्य, विनोद, रमत, खेल, तमासा करते हुवे, विविध प्रकारका अशनादि भोगवते हुवेको देखने जानेका मनसे अभिलाष करे, करावे. करतेको अच्छा समझे.

(३५) ,, इस लोक संबंधी रुप (मनुष्य-स्त्रीका), परलोक संबंधी रुप, (देव-देवी, पशु आदि) देखे हुवे, न देखे हुवे, सुने हुवे, न सुने हुवे, ऐसे रुपोंकी अन्दर रंजित, मूर्च्छित, गृद्ध हो देखनेकी मनसे भी अभिलाषा करे. ३

भावार्थ—उपर लिखे सब किसमके रुप, मोहनीय कर्मकी उदीरणा करानेवाले है. जैसे एक दफे देखनेसे हरसमय वह ही हृदयमें निवास कर ज्ञान, ध्यानमें विघ्न करनेवाले बन जाते है. वास्ते मुनियोंको किसी प्रकारका पदार्थ देखनेकी अभिलाषा तक भी नहीं करना चाहिये.

(३६) ,, प्रथम पोरसीमें अशनादि च्यार प्रकारका आहार लाके उसे चरम पोरसी तक रखे. ३

(३७) ,, जिस ग्राम, नगरमें आहार ग्रहन कीया है, उसको दों कोशसे अधिक ले जावे. ३

(३८) ,, किसी शरीरके कारणसे गोबर लाना पडता हो, पहले दिन लाके दुसरे दिन शरीरपर बांधे.

(३९) दिनको लाके रात्रिमें बांधे.

(४०) रात्रिमें लाके दिनको बांधे.

(४१) रात्रिमें लाके रात्रिमें बांधे.

भावार्थ—ज्यादा वखत रखनेसे जीवादिकी उत्पत्ति होती है, तथा कल्पदोष भी लगता है. इसी माफिक च्यार भांगा लेपणकी जातिकाभी समझना. भावार्थ—गड गुंबड होनेपर पोटीस विगेरे तथा शरीरके लेपन करनेमें आवे, तो उपर मुजब च्यार भांगाका दोषको छोडके निरवद्य औषध करना साधुका कल्प है. ४५

(४६) ,, अपनी उपधि (वस्त्र, पात्र, पुस्तकादि) अन्यतीर्थीयोंको तथा गृहस्थोंको देवे, वह अपने शिर उठाके स्थानांतर पहुंचा देवे.

(४७) उसे उपधि उठानेके बदलेमें उसको अशनादि च्यार प्रकारका आहार देवे, दीलावे, देतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—अपनी उपधि गृहस्थ तथा अन्यतीर्थीयोंको देनेमें संयमका व्याघात, गृहस्थोंकी खुशामत करना पडे, उपकरण फूटे तूटे, सचित्त पाणी आदिका संघटा होनेसे जीवोंकी हिंसा होवे, उसके पगार तथा आहारपाणीका बंदोबस्त करना पडे. इत्यादि दोष है.

(४८) ,, गंगा नदी, यमुना नदी, सीता नदी, ऐरावती नदी और मही नदी—यह पांचों महानदीयों, जिसका पाणी कितना है (समुद्र समान). ऐसी महा नदीयों एक मासमें दोय बार, तीन बार उतरे, उतरावे, अन्य उतरते हुवेको अच्छा समझे.

भावार्थ—वारवार उतरनेसे जीवोंकी विराधना होवे तथा किसी समय अनजानते ही विशेष पाणीका पूर आजानेसे आपघात, संयमघात हो, इत्यादि दोष लगते है.

उपर लेखे ४८ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले साधु, साध्वीयोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्रके बारहवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(१३) श्री निशिथसूत्र–तेरहवा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' अन्तरा रहित सचित्त पृथ्वीकायपर बैठ-सुवे खडा रहै, स्वाध्याय ध्यान करे. ३

(२) सचित्त पृथ्वीकी रज उडी हुइ पर बैठ, यावत् स्वाध्याय करे. ३

(३) एवं सचित्त पाणीसे स्निग्ध पृथ्वीपर बैठ, यावत् स्वाध्याय करे. ३

(४) एवं सचित्त–तत्काल खानसे निकली हुइ शिला, तथा शिलाको तोडे हुवे छोटे छोटे पत्थरपर बैठे, तथा कीचडसे, कचरासे जीवादिकी उत्पत्ति हुइ हो, काष्ठके पाट-पाटलादिमें जीवोत्पत्ति हुइ हो, इंडा, प्राणी (बेइंद्रियादि) बीज, हरिकाय, ओसका पाणी, मकडीजाला, निलण-फूलण, पाणी, कच्ची मट्टी, मांकड, जीवोंका झाला संयुक्त हो, उसपर बैठे, उठे, सुवे, यावत् स्वाध्याय करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(५) ,, घरकी देहलीपर, घरके उंबरे (दरवाजाका मध्य भाग) उखलपर, स्नान करनेके पाटेपर, बैठे, सुवे, शय्या करे, यावत् वहां बैठके स्वाध्याय-ध्यान करे. ३

(६) एवं ताटी, भींत, शिला, छोटे छोटे पत्थरे विगेरेसे आच्छादित भूमिपर शयन करे, यावत् स्वाध्याय ध्यान करे. ३

(७) ,, एक तर्फ आदि भींतपर दोनों तर्फ आदि आदि भींतपर पाट-पाटला रखके बैठे, मोटी ईंटोंकी राशिपर तथा और भी जिस जगा चलाचल (अस्थिर) हो, उस स्थानपर बैठ यावत् स्वाध्याय करे. ३

भावार्थ—जीवोंकी विराधना होवे, आप स्वयं गिर पडे, आत्मघात, संयमघात होवे, उपकरणादि पडनेसे तूटे फूटे—इत्यादि दोष लगता है.

(८) ,, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थ लागोंको संसारिक शिल्प-कला, चित्रकला, वस्त्रकला, गणितकलादि (७२) श्लाघाकरणरूप जोडकला, श्लोकबंधकी कला, चोपड, शेत्रंज, कांकरी रमनेकी कला, ज्योतिषकला, वैद्यककला, सलाह देना, गृहस्थके कार्यमें पटु बनाना, क्लेश, युद्ध संग्रामादिकी कला बतलाना, शिखवाना, स्वयं करे, अन्यसे करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—मुनि आप संसारमें अनेक कलावोंका अभ्यास कीया हुवा है, फिर दीक्षा लेनेपर गृहस्थोंपर स्नेह करते हुवे, उक्त कलावों गृहस्थोंको शीखावे, अर्थात् उस कलावोंसे गृहस्थ-लोग सावद्य वेपार कर अनेक क्लेशके हेतु उत्पन्न करेंगे. वास्ते मुनिको तो गृहस्थोंको एक धर्मकला, कि जिससे इसलोक पर-लोकमें सुखपूर्वक आत्मकल्याण करे, ऐसा ही बतलानी चाहिये.

(९) ,, अन्यतीर्थीयोंको तथा गृहस्थोंको कठिन शब्द बोले. ३

(१०) एवं स्नेह रहित कर्कश वचन बोले. ३

(११) कठोर और कर्कश वचन बोले. ३

(१२) ,, आशातना करे.

(१३) कौतुक कर्म (दोरा राखडी).

(१४) भूतिकर्म, रक्षादिकी पोटली कर देना.

(१५) ,, प्रश्न, हानि-लाभका प्रश्न पूछे.

(१६) अन्यतीर्थी गृहस्थ पूछनेपर ऐसे प्रश्नोंका उत्तर, अर्थात् हानि लाभ बतावे.

(१७) एवं प्रश्न, विद्या, मंत्र, भूत, प्रेतादि निकालनेका प्रश्न पूछे.

(१८) उक्त प्रश्न पूछनेपर आप बतलावे तथा शीखावे.

(१९) भूतकाल संबन्धी.

(२०) भविष्यकाल संबन्धी.

(२१) वर्त्तमानकाल संबन्धी निमित्त भाषण करे. ३

(२२) लक्षण—हस्तरेखा, पगरेखा, तिल, मसा, लक्षण आदिका शुभाशुभ बतावे.

(२३) स्वप्नके फल प्ररुपे.

(२४) अष्टापद—एक जातकी रमत, जैसे शेत्रंजी आदिका खेलना शीखावे.

(२५) रोहणी देवीको साधन करनेकी विद्या शिखावे.

(२६) हरिणगमैषी देवको साधन करनेका मंत्र शिखावे.

(२७) अनेक प्रकारकी रससिद्धि, जडीबुट्टी, रसायन बतावे.

(२८) लेपजाति—जिससे वशीकरण होता हो.

(२९) दिग्मूढ हुवा अन्यतीर्थी, गृहस्थोंको रहस्ता बतलावे, अर्थात् क्लेशादि कर कितनेक आदमी आगे चले गये हो, और

कितनेक आदमी उन्होंको मारनेके लीये जा रहे हो, उस समय मुनिको रहस्ता पूछे, तथा

(३०) कोइ शिकारी दिग्मूढ हुवे रहस्ता पूछे, उसे मुनि रहस्ता बतावे, तथा दुसरे भी अन्यतीर्थी गृहस्थोंको रहस्ता बतावे. कारण—वह आगे जाता हुवा दिग्मूढतासे रहस्ता भूल जावे, दूसरे रहस्ते चला जावे, कष्ट पडनेपर मुनिपर कोप करे इत्यादि.

(३१) धातु निधान, अन्यतीर्थी—गृहस्थोंको बतलावे. आप गृहस्थपणेमें निधान जमीनमें रखा, वह दीक्षा लेते समय किसीको कहना भूल गया था, फिर दीक्षा लेनेके बाद स्मृति होनेपर अपने रागीयोंको बतलावे तथा दीक्षा लेनेके बादमें कहांपर ही निधान देखा हुवा बतावे. कारण—वह निधान अनर्थका ही हेतु होता है, मोक्षमार्गमें विघ्नभूत है.

भावार्थ—यह सब सूत्र अन्यतीर्थीयों, गृहस्थोंके लीये कहा है. मुनि, गृहस्थावास अनर्थका हेतु, संसारभ्रमणका कारण जाण त्याग कीया था, फिर उक्त क्रिया गृहस्थलोगोंको बतलानेसे अपना नियमका भंग, गृहस्थ परिचय, ध्यानमें व्याघात इत्यादि अनेक नुकशान होता है. वास्ते इस अलाय बलायसे अलग ही रहना अच्छा है.

(३२) ,, अपना शरीर (मुंह) पात्रेमें देखे.

(३३) काचमें देखे.

(३४) तलवारमें देखे.

(३५) मणिमें देखे.

(३६) पाणीमें देखे.

(३७) तैलमें देखे.

(३८) ढीलागुलमें देखे.

(३९) चरबीमें देखे.

भावार्थ—उक्त पदार्थोंमें मुनि अपना शरीर मुंह) को देखे, देखावे, देखतोंको अच्छा समझे. देखनेसे शुश्रूषा बढती है. सुन्दरता देख हर्ष, मलिनता देख शोकसे रागद्वेष उत्पन्न होते है. मुनि इस शरीरको नाशवन्त ही समझे. इसकी सहायतासे मोक्षमार्ग साधनेका ही ध्यान रखे.

(४०) ,, शरीरका आरोग्यताके लीये वमन (उलटी) करे. ३

(४१) एवं विरेचन (जुलाब) लेवे. ३

(४२) वमन, विरेचन दोनों करे. ३

(४३) आरोग्य शरीर होनेपर भी दवाइयों ले कर शरीरका बल-वीर्यकी वृद्धि करे. ३

भावार्थ—शरीर है, सो संयमका साधन है. उसका निर्वाहके लीये तथा बेमारी आनेपर विशेष कारण हो तो उक्त कार्य कर सके. परन्तु आरोग्य शरीर होनेपर भी प्रमादकी वृद्धि कर अपने ज्ञान—ध्यानमें व्याघात करे, करावे, करतेको अच्छा समझे, वह मुनि प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(४४) ,, पासत्था साधु, साध्वीयों (शिथिलाचारी) संयमको एक पास रखके केवल रजोहरण, मुखवस्त्रिका धारण कर रखी हो, ऐसे साधुवोंको वन्दन-नमस्कार करे. ३

(४५) एवं पासत्थावोंकी प्रशंसा-तारीफ श्लाघा करे. ३

(४६) एवं उसन्न-मूलगुण पंचमहाव्रत, उत्तरगुण पिंडविशुद्धि आदिके दोषित साधुवोंको वन्दन करे. ३

(४७) एवं प्रशंसा करे. ३ एवं दो सूत्र कुशीलीया-भ्रष्टाचारी साधुवोंका.

(४८-४९) एवं दो सूत्र नित्य एक घरका पिंड (आहार) तथा शक्तिवान् होनेपर भी एक स्थान निवास करनेवालोंका.

(५०-५१) एवं दो सूत्र संसक्ता-पासत्था मिलनेसे आप पासत्थ हो, संवेगी मिलनेसे आप संवेगी हो, ऐसे साधुवोंका.

(५२-५३) एवं दो सूत्र कथगा-स्वाध्याय ध्यान छोडके दिनभर स्त्रीकथा, राजकथा, देशकथा तथा भक्तकथा करनेवालोंका.

(५४-५५) एवं दो सूत्र पासणिया-ग्राम, नगर, बाग, बगीचे, घर, बाजार इत्यादि पदार्थ देखते फिरे, ऐसे साधुवोंका.

(५६-५७) एवं दो सूत्र ममत्वोंपाधि धारण करनेवालोंका. जैसे यह मेरा-यह मेरा करे ऐसे साधुवोंका.

(५८-५९) एवं दो सूत्र संप्रसारिक-जहां जावे. वहां मम-त्वभावसे प्रसारा करते रहे, गृहस्थोंके कार्यमें अनुमति देता रहे.

(६०-६१) ऐसे साधुवोंको वंदन करे, प्रशंसा करे. ३

भावार्थ—यह सब कार्य जिनाज्ञा विरुद्ध है. मोक्षमार्गमें विघ्न करनेवाला है, असंयमवर्धक है. इस अकृत्य कार्योंको धारण करनेवाले बालजीव, मुनिवेषको लज्जित करनेवाला है. ऐसेका वन्दन-नमस्कार तथा तारीफ करनेसे शिथिलाचारकी पुष्टि होती है. उस भ्रष्टाचारी साधुवोंको एक किसमकी सहायता मिलती है. वास्ते उक्त साधुवोंको वन्दन नमस्कार करनेवाला भी प्रायश्चित्तका भागी होता है.

(६२) ,, धात्रीकर्म आहार—गृहस्थोंके बालबच्चोंको खेलाके आहार ग्रहन करे. ३

(६३) ,, दूतीकर्म आहार—उधर इधरका समाचार कहे के आहार ग्रहन करे. ३

(६४) ,, निमित्त आहार—ज्योतिष प्रकाश करके आहार. ३

(६५) ,, अपने जाति, कुलका अभिमान करके आहार. ३

(६६) ,, रंक भिखारीकी माफिक दीनता करके ,, ३

(६७) ,, वैद्यक-औषधिप्रमुख बतलायके आहार लेवे. ३

(६८-७१) ,, क्रोध, मान, माया, लोभ करके आहार लेवे. ३

(७२) ,, पहला पीछे दातारका गुण कीर्त्तन कर आहार लेवे. ३

(७३) ,, विद्यादेवी साधन करनेकी विद्या बताके ,, ३

(७४) ,, मंत्रदेव साधन करनेका प्रयोग बताके ,, ३

(७५) ,, चूर्ण-अनेक औषधि सामेल कर रसायण बताके ,, ३

(७६) ,, योग—वशीकरणादि प्रयोग बतलायके ,, ३

भावार्थ--उक्त १५ प्रकारके कार्य कर, गृहस्थोंकी खुशामत कर आहार लेना निःस्पृही मुनिको नहीं कल्पै.

उपर लिखे, ७६ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवालोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो बीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र—बेरहवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(१४) श्री निशिथसूत्र—चौदवां उद्देशाः

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' को गृहस्थलोगपात्र-मूल्य-लाके देवे, तथा अन्य किसीसे मूल्य दिलावे. देतेको सहायता कर मूल्यका पात्र साधु साध्वीयोंको देवे, उस अकलपनीय पात्रको साधु साध्वी ग्रहन करे, शिष्यादिसे ग्रहन करावे, अन्य कोइ ग्रहन करते हुवे साधुको अच्छा समझे.

(२) एवं साधु साध्वीके निमित्त पात्र उधारा लाके देवे, उसे ग्रहन करे. ३

(३) एवं सलटा पलटा करदेवे. ३

(४) एवं निर्बलसे सबल जबरजस्तीसे दिलावे, दो भागीदारोंका पात्रमें एकका दिल नहीं होनेपर भी दुसरा देवे तथा सामने लायके देवे, उसे ग्रहन करे. ३

(५) ,, किसी देशमें पात्रोंकी प्राप्ति नहीं होती हो, और दुसरे देशोंमे निरवद्य पात्र मिलते हो, वहांसे साधु, गणि (आचार्य) का उद्देश, अर्थात् आचार्यके नामसे, अपने प्रमाणसे अधिक पात्र ग्रहन कीया हो, वह पात्र आचार्यको आमंत्रण न करे, आचार्यको पूछे विगर अपनी इच्छानुसार दुसरे साधुको देवे, दिलावे. ३

भावार्थ—सत्य भाषाका भंग, अविश्वासका कारण, साथमें क्लेशका कारण भी होता है.

(६) ,, लघु शिष्य शिष्यणी, स्थविर-वयोवृद्ध साधु साध्वी, जिसका हाथ, पग, कान, नाक, होठ आदि अवयव छेदा हुवा नहीं है, बेमार नहीं है, अर्थात् वह शक्तिमान् है, उसको परिमाणसे अधिक पात्र देवे, दिलावे, देतोंको अच्छा समझे.

(७) कथंचित् हाथ, पग, कान, नाक, होठ छेदाया हुवा है, किसी प्रकारकी अति बेमारी हो, उसको परिमाणसे अधिक पात्र नहीं देवे, नहीं दिलावे, नहीं देते हुवेको अच्छा समझे.

भावार्थ—आरोग्य अवस्थामें अधिक पात्र देनेसे लोलूपता बढे, उपाधि बढे, 'उपाधिकी पोट समाधिसे न्यारी,' अगर रोगादि कारण हो, तो उसे अधिक पात्र देनाही चाहिये. बेमार रोगवालाको सहायता देना, मुनियोंका अवश्य कर्त्तव्य है.

(८) ,, अयोग्य, अस्थिर, रखने योग्य न हो, स्वल्प समय चलने काबील न हो, जिसे यतना पूर्वक गौचरी नहीं लासके, ऐसा पात्रको धारण करे. ३

(९) अच्छा मजबूत हो, स्थिर हो, गौचरी लाने योग्य हो, मुनिको धारण करने योग्य हो, ऐसा पात्रको धारण न करे. ३

भावार्थ—अयोग्य, अस्थिर पात्र सुन्दर है तथा मजबूत पात्र देखनेमें अच्छा नहीं दीसता है. परन्तु मुनियोंको अच्छा खराबका ख्याल नहीं रखना चाहिये.

(१०) ,, अच्छा वर्णवाला सुन्दर पात्र मिलने पर वैराग्यका ढोंग देखानेके लीये उसे विवर्ण करे. ३

(११) विवर्णपात्र मिलनेपर मोहनीय प्रकृतिको खुश करनेको सुवर्णवाला करे. ३

भावार्थ—जैसा मिले, वैसेसे ही गुजरान कर लेना चाहिये.

(१२) ,, नवा पात्रा ग्रहन करके तैल, घृत, मक्खन, चरबी कर मसले लेप करे. ३

(१३) ,, नवा पात्रा ग्रहन कर उसके लोद्रव द्रव्य, कोकण

द्रव्य और भी सुगन्धी सुवर्णवाला द्रव्य एकवार वारवार लगावे, लेप करे. ३

(१४) ,, नवा पात्राको ग्रहन कर, शीतल पाणी, गरम पाणीसे एकवार वारवार धोवे. ३

एवं तीन सूत्र, बहुत दिन पात्रा चलेगा, उस लीये तैलादि, लोद्रवादि पाणीसे धोवेका समझना. १५-१६-१७

(१८) ,, सुगन्धि पात्र प्राप्त कर, उसे दुर्गन्धि करे. ३

(१९) दुर्गन्धि पात्र प्राप्त कर उसे सुगन्धि करे. ३

(२०) सुगन्धि पात्र ग्रहन कर तैल, घृत, मक्खन, चरबीसे लेप करे.

(२१) एवं लोद्रवादि द्रव्यसे.

(२२) शीतल पाणी. उष्ण पाणीसे धोवे.

एवं तीन सूत्र दुर्गन्धि पात्र संबंधि समझना. २३-२४-२५

एवं छे सूत्र सुगन्धि, दुर्गन्धि पात्र बहुत दिन चलनेके लीये भी समझना. २६-२७-२८-२९-३०-३१ भावना पूर्ववत्.

(३२) ,, पात्रोंको आतापमें रखना हो, तो अंतरा रहित पृथ्वीपर आतापमें रखे. ३

(३३) पृथ्वी (रज) पर आतापमें रखे. ३

(३४) संसक्त पृथ्वीपर आतापमें रखे.

(३५) जहांपर कीडी, मंकोडा, मट्टी, पाणी, नीलण, फूलण, जीवोंका झाला हो, ऐसी पृथ्वीपर पात्रा आतापमें रखे. ३. कारण- ऐसे स्थानोमें जीवोंकी विराधना होती है.

(३६) ,, घरके उंबरापर दरवाजेके मध्यभागपर, उखल, खुटा आदिपर पात्रोंको आताप लगानेको रखे. ३

(३७) कुट्टीपर, भींतपर, शिलापर, खुले अवकाशमें पात्रोंको आताप लगानेको रखे. ३

(३८) आदि भींतके खंद्पर, छत्रीके शिखरपर, मांचापर, मालापर, प्रासाद्पर, हवेलीपर और भी किसी प्रकारकी उंची जगाहपर, विषमस्थानपर, मुश्कीलसे रखा जावे, मुश्कीलसे उठाया जावे, लेते रखते पडजानेका संभव हो, एसे स्थानोमें पात्रोंको आताप लगानेको रखे. ३

भावार्थ—पात्रा रखते उतारते आप स्वयं पीसलके पडे, तो आत्मघात, संयमघात तथा पात्रा तूटे फूटे तो आरंभ बढे, उसको अच्छे करनेमें वखत खरच करना पडे इत्यादि दोषका संभव है.

(३९) ,, गृहस्थके वह पात्रामें पृथ्वीकाय (लूणादि) भरा हुवा है उसको निकालके मुनिको पात्र देवे, उस पात्रको मुनि ग्रहन करे. ३

(४०) एवं अप्काय.

(४१) एवं तेउकाय. (राख उपर अंगार रख ताप करते है.)

(४२) वनस्पति.

(४३) एवं कन्द, मूल, पत्र, पुष्प, फल, बीज निकाल पात्रा देवे, उस पात्रको मुनि ग्रहन करे. ३ जीव विराधना होती है.

(४४) ,, पात्रामें औषधि (गहुं, जव, जवारादि) पडी हो, उसे निकालके पात्र देवे, वह पात्र मुनि ग्रहन करे. ३

(४५) एवं त्रस पाणी जीव निकाले. ३

(४६) ,, पात्रको अनेक प्रकारकी साधुके निमित्त कोरणी कर देवे, उसे मुनि ग्रहन करे. ३

(४७) ,, मुनिके गृहस्थावासके न्यातीले अन्यातीले, श्रावक

अश्रावक मुनिके लीये ग्राममें तथा ग्रामांतरमें मुनिके नामसे पात्राकी याचना करे, वह पात्र मुनि ग्रहन करे, ३

(४८) एवं परिषदकी अन्दर उठके कहेकि—हे भद्रश्रोतावों! मुनिको पात्राकी जरुरत है, किसीके हो तो देना. इत्यादि याचना कीया हुवा पात्र ग्रहन करे. ३

(४९) ,, मुनि पात्र याचना करनेपर गृहस्थ कहे—हे मुनि! आप ऋतुबद्ध (मास कल्प) यहांपर ठेरे. हम आपको पात्रा देवेंगे ऐसा कहने पर वहांपर मुनि मासकल्प रहे. ३

(५०) एवं चातुर्मासका कहनेपर, मुनि पात्रोंके निमित्त चातुर्मास करे. ३

भावार्थ—गृहस्थलोग मूल्य मंगावे, तथा काष्ठादि कटवाके नया पात्र बनावे. इत्यादि.

इस उद्देशामें पात्रोंका विषय है. मुनिको संयमयात्रा निर्वाह करनेके लीये दृढ (मजबूत) संहननवाले मुनियोंको एक पात्र रखनेका हुकम है. मध्यम संहननवाले तीन[१] पात्र रखके मोक्षमार्गका साधन कर शके. परन्तु उसके रंगनेमें सुवर्ण, सुगन्धि करनेमें अपना अमूल्य समय खरच करना न चाहिये. लाभालाभका कारण तथा स्निग्ध रहनेके भयसे रंगना पडता हो, वह भी यतनासे करसक्के है.

इपर लिखे ५० बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले मुनियोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो बीसवां उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र-चौदवां उद्देशाका संक्षिप्त सार.

---

१ औपग्रहिक, कमंडल (तीरपणी) पडिगादि भी रखसक्ते है.

(१५) श्री निशिथसूत्र—पंदरहवा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' अन्य साधु साध्वी प्रत्ये निष्ठुर वचन बोले.

(२) एवं स्नेह रहित कर्कश वचन बोले.

(३) कठोर, कर्कश वचन बोले, बोलावे, बोलतेको अच्छा समझे.

(४) एवं आशातना करे. ३

भावार्थ—ऐसा बोलनेसे धर्म स्नेहका नाश और क्लेशकी वृद्धि होती है. मुनियोंका वचन प्रियकारी, मधुर होना चाहिये.

(५) ,, सचित्त आम्रफल भक्षण करे, ३

(६) एवं सचित्त आम्रफलको चूसे. ३

(७) एवं आम्रफलकी गुटली, आम्रफलके टुकडे (कातळी) आम्रफलकी एक शाखा, (डाली) छतु आदिको चूसे. ३

(८) आम्रफलकी पेसी मध्यभागको चूसे. ३

(९) सचित्त आम्र प्रतिबद्ध अर्थात् आम्रफलकी फांकों काटी हुइ, परन्तु अबीतक सचित्त प्रतिबद्ध है, उसकों खावे. ३

(१०) एवं उक्त जीव सहितकों चूसे. ३

(११) सचित्त जीव प्रतिबद्ध आम्रफल डाला, शाखादि भक्षण करे. ३

(१२) एवं उसे चूसे. ३

भावार्थ—जीव सहित आम्रफलादि भक्षण करनेसे जीव विराधना होती है, हृदय निर्दय हो जाता है. अपने ग्रहन किया हुवा नियमका भंग होते है.

(१३) ,, अपने पाव, अन्यतीर्थी, अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे

मसलावे, दबावे, चंपावे. ३ एवं यावत् तीसरा उद्देशामें ५६ सूत्र स्वअपेक्षाका कहा है, इसी माफिक यहां साधु, अन्य तीर्थी, अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे करावे, करानेका आदेश देवे, कराते हुवेको अच्छा समझे. यावत् ग्रामानुग्राम विहार करते समय अपने शिरपर छत्र धारण करवावे. ३

भावार्थ—अन्यतीर्थी लोगोंसे कुछ भी काम नहीं कराना चाहिये. वह कार्य पश्चात् शीतल पाणी विगेरेका आरंभ करे, करावे इत्यादि. ६८

(६९) ,, आराम, मुसाफिरखाना, उद्यान, स्त्रीपुरुषको आराम करनेका स्थान, गृहस्थोंका गृह तथा तापसोंके आश्रमकी अन्दर लघुनीत (पैसाब) वडीनीत (टटी) परिठे.

(७०) ,, एवं उद्यानके बंगला (गृह) उद्यानकी शाला, निज्ञान, गृहशाला इस स्थानोमें टटी, पैसाब परठे. ३

(७१) कोट, कोटके फिरणी रहस्ता, दरवाजा, बुरजोंपर टटी पैसाब परठे. ३

(७२) नदी, तलाव, कुवाका पाणी आनेका मार्ग, पाणी नीकलनेका पन्थ, पाणीका तीर, पाणीका स्थान (आगार) पर टटी, पैसाब परठे, परठावे. ३

(७३) शुन्य गृह, शुन्य शाला, भग्नगृह, भग्नशाला, कुडगर, भूमिमें गृह, भूमिकी शाला, कोठारका गृह-शाला. इस स्थानोमें टटी, पैसाब परठे. ३

(७४) तृण गृह, तृण शाला, तुस गृह-शाला, भूसाका गृह-शाला. इस स्थानोमें टटी, पैसाब करे ३, परठे. ३

(७५) ,, रथ रखनेका गृह-शाला, युगपात-सेविका, मैना रखनेका गृह—शालामें टटी, पैसाब परठे. ३

(७६) करियाणागृह—शाला, दुकान, धातुके बरतन रखनेका गृह—शाला.

(७७) वृषभ बांधनेका गृह, शाला तथा बहुतसे लोक निवास करते हो पेसा गृह, शालामें टटी, पैसाब परठे, अर्थात् उपर लिखे स्थानोमें टटी, पैसाब करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—गृहस्थोंको दुगंछा, धर्मकी हीलना, यावत् दुर्लभ-बोधीपणा उपार्जन करता है. मुनियोंको टटी, पैसाब करनेको जंगलमें खुब दूर जाना चाहिये. जहांपर कोइ गृहस्थ लोगोंका गमनागमन न हो, इसीसे शरीर भी निरोगी रहता है.

(७८) ,, अपने लाइ हुइ भिक्षासे अशनादि च्यार आहार, अन्यतीर्थी और गृहस्थोंको देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे.

(७९) एवं वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण देवे. ३ भावनापूर्ववत्.

(८०) ,, पासत्थे साधुवोंको अशनादि च्यार आहार.

(८१) वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण देवे. ३

(८२-८३) पासत्थासे अशनादि च्यार आहार और वस्त्र, पात्रा, कंबल, रजोहरण ग्रहन करे. ३

एवं उसन्नोंका च्यार सूत्र ८४-८५-८६-८७.

एवं कुशीलीयोंका च्यार सूत्र ८८-८९-९०-९१.

एवं नितीयोंका च्यार सूत्र ९२-९३-९४-९५.

एवं संसक्तोंका च्यार सूत्र ९६-९७-९८-९९.

एवं कथगोंका च्यार सूत्र १००-१०१-१०२-१०३,

एवं ममत्ववालोंका च्यार सूत्र १०४-१०५-१०६-१०७.

एवं पासणियोंका च्यार सूत्र १०८-१०९-११०-१११. भावना पूर्ववत् समझना.

उक्त शिथिलाचारीयोंसे परिचय करनेसे देखादेख अपनी प्रवृत्ति शिथिल होगी. लोकशंका, शासनहीलना, पासत्थावोंका पोषण इत्यादि दोषोंका सभव है.

(११२) ,, जानकार गृहस्थ साधुवोंके पूर्व सज्जनादि, वस्त्रकी आमंत्रणा करे, उस समय मुनि उस वस्त्रकी जांच पूछ, गवेषणा न करे. ३

(११३) जो वस्त्र, गृहस्थ लोक नित्य पहेरते हो, स्नान, मज्जनके समय पहेरते हो, रात्रि समय स्त्री परिचय समय पहेरते हो तथा उत्सव समय, राजद्वार जाते समय (बहुमूल्य) पहेरते हो, ऐसे वस्त्र ग्रहन करे.

भावार्थ—सज्जनादि पूर्व स्नेह कारण बहु मूल्य दोषित वस्त्र देता हो, तो मुनिको पेस्तर जांच पूछ करना चाहिये. तथा नित्यादि वस्त्र लेनेसे, वह वस्त्र अशुचि तथा विषय वर्धक होता है.

(११४). ,, साधु, साध्वी अपने शरीरकी विभूषा करनेके लीये अपने पावोंको एकवार मसले, दाबे, चंपे, वारवार मसले, दाबे, चंपे, एवं विभूषा निमित्त उक्त कार्य अन्य साधुवोंसे करावे, अन्य साधु उक्त कार्य करतेको अच्छा समझे, तारीफ करे, सहायता करे, करावे, करतेको अच्छा समझे. एवं यावत् तीसरे उद्देशामें ५६ सूत्रों कहा है, वह विभूषा निमित्त यावत् ग्रामानुग्राम विहार करते अपने शिरछत्र धरावे. ३ एवं १६९

(१७०) ,, अपने शरीरकी विभूषा निमित्त वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण और भी किसी प्रकारका उपकरण धारण करे, धारण करावे, करतेको अच्छा समझे.

(१७१) एवं वस्त्रादि धोवे, साफ करे, उज्वल करे. घटा मटा उस्तरी दे, गडीबन्ध साफ करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(१७२) एवं वस्त्रादिको सुगंधि पदार्थ लगावे, धूप देकर सुगन्धि बनावे. ३

भावार्थ—विभूषा कर्मबन्धका हेतु है. विषय उत्पन्न करनेका मूल कारण है. संयमसें भ्रष्ट करनेमें अग्रेसर है. इत्यादि दोषोंका संभव है.

उपर लिखे १७२ बोलोंसे एक भी बोल सेवन करनेवाले मुनियोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवा उद्देशासे.

इति श्री निशिथसूत्र—पंदरवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(१६) श्री निशिथसूत्र—सोलवा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' गृहस्थ शय्या—जहांपर दंपती क्रीडाकर्म करते हो, ऐसे स्थानमें प्रवेश करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—वहां जानेसे अनेक विषय विकारकी लेहरों उत्पन्न होती है. पूर्व कीये हुवे बिलास स्मृतिमें आते है इत्यादि दोषका संभव है.

(२) " गृहस्थोंके कचापाणी पडा हो, ऐसे स्थानमें प्रवेश करे. ३

(३) एवं अग्निके स्थानमें प्रवेश करे.

भावार्थ—जहां जैसा पदार्थ, वहां ऐसी भावना रहेती है. वास्ते एसे स्थानोंमें नही ठेरे अगर गौचरी आदिसे जाना हो तों कार्य होनेसे शीघ्रतासे लोट जावे.

(४) ,, इक्षु (सेलडीके सांठा) को चूसे. यावत् पंदरहवे उद्देशामें आम्रफलके आठ सूत्र कहा है, इसी माफिक यहां भी समझना. भावना पूर्ववत्. ११

(१२),, अटवी, अरण्य, विषमस्थान जानेवालोंका तथा अटवीमें प्रवेश करते हुवेका अशनादि च्यार प्रकारका आहार लेवे. ३

भावार्थ—कोइ काष्ठवृत्ति करनेवाला अपना निर्वाह हो, इतना आहार लाया है, उसे दीनतासे मुनि याचनेपर अगर आहार मुनिको दे देवेंगा, तो फिर उसे अपने लीये दुसरा आरंभ करना होगा, फलादि सचित्त भक्षण करना पडेगा या बडे कष्टसे अटवी उल्लंघन करेंगा. इत्यादि दोषोंका संभव है.

(१३) ,, उत्तम गुणोंके धारक, पंचमहाव्रत पालक, जितेंद्रिय. गीतार्थ, जैन प्रभावक, क्षांत्यादि गुण संयुक्त मुनियोंको पासत्थे, भ्रष्टाचारी आदि कहे, निंदा करे. ३

(१४) शिथिलाचारी, पासत्थावोंको उत्तम साधु कहे. ३

(१५) गीतार्थ, संवेगी, महापुरुषोंसे विभूषित गच्छको पासत्थोंका गच्छ कहे. ३

(१६) पासत्थोंके गच्छको गीतार्थोंका गच्छ कहै. ३

भावार्थ—द्वेषके वश हो अच्छाको बुरा, रागके वश हो बुराको अच्छा कहे. यह दृष्टि विपर्यास है. इससे मिथ्यात्वकी पुष्टि, शिथिलाचारीयोंकी पुष्टि, उत्तम गीतार्थोंको अपमान, शासनकी हीलना—इत्यादि अनेक दोषोंका संभव होता है.

(१७) ,, कोइ साधु एक गच्छसे क्लेश कर वहांसे विगर खमतखामणा कर, निकल दुसरे गच्छमें आवे, दुसरे गच्छवाले उस क्लेशी साधुको अपनेपास अपने गच्छमें रखे, उसे अशनादि च्यार आहार देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—क्लेशवृत्तिवाले साधुवोंके लीये कुछ भी रोकावट न होगा, तो एक गच्छमें क्लेशकर, तीसरे गच्छमें जावेगा, एक गच्छका क्लेशी साधुको दुसरे गच्छवाले रखलेंगे तो उस गच्छका साधुको भी दुसरे गच्छवाले रखलेंगे इससे क्लेशकी उत्तरोत्तर वृद्धि होगी, शासनकी हीलना, आत्मकल्याणका नाश, क्षांत्यादि गुणोंका उच्छेद आदि अनेक हानि होगी.

(१८) एवं क्लेशी साधुवोंका आहार ग्रहन करे.

(१९-२०) वस्त्रादि देवे, लेवे.

(२१--२२) शिक्षा देवे, लेवे.

(२३--२४) सूत्र सिद्धांतकी वाचना देवे, लेवे.

भावार्थ—ऐसे क्लेशी साधुवोंका परिचयतक करनेसे, चेपी रोग लगता है. वास्ते दूरही रहना चाहिये. एक साधुसे दूर रहेगा, तो दूसदकों भी क्षोभ रहेगा.

(२५) ,, साधुवोंके विहार करने योग्य जनपद--देश मोजुद होते हुवे भी बहुत दिन उलंघने योग्य अरण्यको उलंघ अनार्य देश (लाट देशादि) में विहार करे. ३

भावार्थ—अपना शारीरिक सामर्थ्य देखा विगर करनेसे रहस्तेमें आदाकर्मी आदि दोष तथा संयमसे पतित होनेका संभव है.

(२६) जिस रहस्तेमें चौर, धाडायती, अनार्य, धूर्तादि हो, ऐसे रहस्ते जावे. ३

भावार्थ—वस्त्र, पात्र, छीन लेवे, मार पीट करे द्वेष बढे, यावत् पतित करे. अगर स्वयं शक्तिमान्, विद्यादि चमत्कार, स्थिर संहननवाला, उपकार लाभालाभका कारण जानता हो, वह जा भी सके है.

(२७) ,, दुगंछणिक कुल.

(१) स्वल्प काल सुवा सुतकवाला घर.

(२) दीर्घ काल शुद्रादि इन्होंके घरसे अशनादि च्यार प्रकारका आहार ग्रहन करे. ३

(२८) एवं वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण ग्रहन करे. ३

(२९) एवं शय्या (मकान) संस्तारक ग्रहन करे. ३

भावार्थ—उत्तम जातिके मनुष्य, जिस कुलसे परेज रखते हो, जिसके हाथका पाणी तक भी नहीं पीते हो, ऐसे कुलका आहार पाणी लेना, साधुके वास्ते मना है.

(३०) ,, दुगंछणिक कुलमें जाके स्वाध्याय करे. ३

(३१) एवं शिष्यको वाचना देवे.

(३२) सदुपदेश देवे.

(३३) स्वाध्याय करनेकी आज्ञा देवे.

(३४) दुगंछणिक कुल (घर) में सूत्रकी वाचना लेवे.

(३५) स्वाध्याय (अर्थ) लेवे.

(३६) स्वाध्यायकी आवृत्ति करे.

भावार्थ—चांडालादि तथा सुवासुतकवालोंके घरमें सदैव अस्वाध्यायही रहेती है. वहांपर सूत्र सिद्धांतका पठन पाठन करना मना है. तथा दुगंछ अर्थात् लोकव्यवहारमें निंदनीय कार्य करनेवाला, जिसकी लोक दुगंछा करते है, पास न बैठे, न बै-

ठावे, ऐसा पासत्था, हीणाचारी, आचार, दर्शनसे भ्रष्ट तथा अ-प्रतीतिवालाको ज्ञान ध्यान देना तथा उससे ग्रहन करना मना है. यहां प्रथम लोक व्यवहार शुद्ध रखना बतलाया है. साथमें योगायोग, और लाभालाभ, द्रव्य, क्षेत्रका भी विचार करनेका है.

(३७) ,, अशनादि च्यार आहार लाके पृथ्वी उपर रखे. ३

(३८) एवं संस्तारक पर रखे. ३

(३९) अधर खुंटीपर रखे, छीकापर रखे, छातपर रखे. ३

भावार्थ—ऐसे स्थानपर रखनेसे पीपीलिका आदि जीवोंकी विराधना होवे. कीडीयों आवे, काग, कुता अपहरर्ण करे, स्निग्धता--चीकट लगनेसे जीवोत्पत्ति होवे--इत्यादि दोषका संभव है.

(४०) ,, असनादि च्यार आहार, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थोंके साथमें बैठके भोगवे. ३

(४१) चोतरफ अन्य तीर्थी गृहस्थ, चक्रकी माफिक और आप स्वयं उसके मध्य भागमें बैठके आहार करे. ३

भावार्थ—साधुको गुप्तपणे आहार करना चाहिये, जीनसे कोइकि अभिलाषही नहोवे.

(४२) ,, आचार्योपाध्यायजीके शय्या, संस्तारकके पावोंसे संघट्टा कर विगर खमायों जावे. ३

(४३) ,, शास्त्र परिमाणसे तथा आचार्योपाध्यायकी आज्ञासे अधिक उपकरण रखे. ३

(४४) ,, आन्तरा रहित पृथ्वीकायपर टटी, पैसाब परठे.

(४५) जहांपर पृथ्वीरज हो, वहांपर.

(४६) पाणीसे स्निग्ध जगाहपर.

(४७) सचित्त शिला, छोटे छोटे पत्थरेपर, तथा त्रस जीव, स्थावर जीव, नीलण, फूलण, कची पृथ्वी, झालादिपर टटी, पैसाब परठे, परठावे.

(४८) घरका उंबरा, स्थूभ, उखले, ओटले.

(४९) खन्धा, भींत, शेल, लेलू, उर्ध्वस्थानादि.

(५०) इंटो, स्तंभ, काष्ठके ढगपर, गोबरपर.

(५१) खाड, खाइ, स्थुभ, मांचा, माला, प्रासाद, हवेली आदि जो उर्ध्व हो, उसपर जाके टटी, पैसाव परठे, परिठावे, परिठावतेको अच्छा समझे. भावना पूर्ववत्. जीवोत्पत्ति, लोकापवाद तथा शासनहीलना इत्यादि दोषोंका संभव है.

उपर लिखे ५१ बोलोंसे एक भी बोलको सेवन करनेवाले मुनियोंको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होता है. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवा उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्रके सोलवा उदेशाका संक्षिप्त सार.

(१७) श्री निशिथसूत्र-सत्तरवा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' कुतूहल निमित्त त्रस प्राणीयोंको-जीवोंको तृणपाश (बन्धन) मुंजकी रसी, वेतकी रसी, सूतकी रसी, चर्मकी रसीसे बांधे, बंधावे, बांधतेको अच्छा जाने.

(२) एवं उक्त बंधनसे बन्धे हुवेको छोडे. ३ भावना पूर्ववत्. एसी कुतूहल करनेसे परजीवोंको तकलीफ अपने प्रमाद, ज्ञान, ध्यानमें विघ्न होता है.

(३) ,, कुतूहल निमित्त तृणमाला, पुष्पमाला, पत्रमाला, फलमाला, हरिकायमाला, बीजमाला करे. ३

(४) धारे, धरावे, धरतेको अच्छा समझे.

(५) भोगवे.

(६) पेहरे.

(७ कुतूहल निमित्त लोहा, तांबा, तरुवा, सीसा, चांदी, सुवर्णके खीलुने चित्र करे. ३

(८) धारण करे. ३

(९) उपभोगमें लेवे. ३

(१०) एवं हार (अठारसरी) अद्हार (नौसरी) तीनसरी सुवर्ण तारसे हार करे. ३

(११) धारण करे. ३

(१२) भोगवे. ३

(१३) चर्मके आभरण यावत् विचित्र प्रकारके आभरण करे. ३

(१४) धारण करे. ३

(१५) उपभोगमें लेवे. ३

भावार्थ—कुतूहल निमित्त कोइ भी कार्य करना कर्मबन्धका हेतु है. प्रमादकी वृद्धि, ज्ञान, ध्यान, स्वाध्यायमें व्याघात होता है.

(१६) ,, एक साधु दुसरा साधुका पाव अन्यतीर्थी तथ गृहस्थोंसे चंपावे, दबावे, यावत् तीसरे उद्देशाके ५६ बोल यहां-पर कहना. एवं एक साधु, साध्वीयोंके पाव, अन्यतीर्थी तथा गृहस्थोंसे दबावे, चंपावे, मसलावे. एवं ५६ सूत्र. एवं एक साध्वी साधुके पाव अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे दबावे, चंपावे, मसलावे. एवं

५६ सूत्र. एवं साध्वी साध्वीयोंके पाव अन्यतीर्थी गृहस्थोंसे दबावे, चंपावे, मसलावे. यावत् तीसरे उद्देशा माफिक ५६-५६ बोल कहेना, च्यार अलापकके २२४ सूत्र कहना. कुल २३९.

भावार्थ—साधु या साध्वी, कोइ भी कोशीश कर अन्यतीर्थी तथा उन्होंके गृहस्थोंसे साधु, साध्वीयोंका कोइ भी कार्य नहीं कराना चाहिये. कारण—उन्होंका सर्व योग सावद्य है. अयतनासे करनेसे जीवविराधना हो, शासनकी लघुता, अधिक परिचय, उन्होके प्रत्ये पीछा भी कार्य करना पडे, इसमें भी राग, द्वेषकी प्रवृत्ति बढे इत्यादि अनेक दोषोंका संभव है. वास्ते साधुवोंको निःस्पृहतासे मोक्षमार्गका साधन करना चाहिये.

(२४०) ,, अपने सदृश समाचारी, आचार व्यवहार अपने सरीखा है, ऐसा कोइ ग्रामान्तरसे साधु आये हो, अपने ठेरे है, उस मकानमें साधु, उतरने योग्यस्थान होनेपरभी उस पाहुणे साधुकों स्थान न देवे. ३

(२४१) एवं साध्वीयों, ग्रामांतरसे आइ हुइ साध्वीयोंको स्थान न देवे, ३

भावार्थ—इससे वत्सलताकी हानि होती है, लाकोंको धर्मसे श्रद्धा शिथिल पडती है, द्वेषभावकी वृद्धि होती है. धर्मस्नेहका लोप होता है.

(२४२) ,, उंचे स्थानपर पडी हुइ वस्तु, तकलीफसे उतारके देवे, ऐसा अशनादि वस्तु साधु लेवे. ३

(२४३) भूमिगृह, कोठारादि नीचे स्थानमें पडी हुइ वस्तु देवे. उसे मुनि ग्रहन करे. ३

(२४४) कोठी, कोठारादि अन्य स्थानमें वस्तु रख, लेपादि कीया हो, उसको खोलके वस्तु देवे, उसे मुनि लेवे. ३

भावार्थ—कबी वस्तु लेते, रखते पोसके पडजानेसे आत्मघात, संयमघात, जीवादिका उपमर्दन होता है. पीच्छा लेप करनेमे आरंभ होता है.

(२४५) ,, पृथ्वीकायपर रखा हुवा अशनादि च्यार आहार उठाके मुनिको देवे, वह आहार मुनिग्रहन करे, ३

(२४६) एवं अप्कायपर.

(२४७) एवं तेउकायपर.

(२४८) वनस्पतिकाय पर रखा हुवा आहार देवे, उसे मुनि ग्रहन करे. ३

भावार्थ—ऐसा आहार लेनेसे जीवोंकी विराधना होती है. आज्ञाका भंग व्यवहार अशुद्ध है.

(२४९) ,, अति उष्ण, गरमागरम आहार पाणी देते समय गृहस्थ, हाथसे, मुंहसे, सुपडेसे, ताडके पंखेसे, पत्रसे, शाखाके, शाखाके खंडसे हवा, लगाके जिससे वायुकायकी विराधना होती है, ऐसा आहार मुनि ग्रहन करे. ६

(२५०) ,, अति उष्ण—गरमागरम आहार पाणी मुनि ग्रहन करे.

भावार्थ—उसमे अग्निकायके जीव प्रदेश होते है. जीससे जीव हिंसा का पाप लगता है.

(२५१) ,, उसामणका पाणी, बरतन धोया हुवा पाणी, चावल धोया हुवा पाणी, बोर धोया हुवा पाणी, तिल० तुस० जव० भूसा० लोहादि गरम कर बुजाया हुवा पाणी, कांजीका पाणी, आम्र धोया हुवा पाणी, शुद्धोदक जो उक्त पदार्थों धोयोंको ज्यादा वखत नहीं हुवा है, जिसका रस नहीं बदला है, जिस

जीवोंको अबीतक शस्त्र, नहीं प्रणम्या है, जीव प्रदेशोंकी सत्ता नष्ट नहीं हुइ है, अर्थात् वह पाणी अचित्त नहीं हुवा है, ऐसा पाणी साधु ग्रहन करे. ३ *

(२५२) ,, कोइ साधु अपने शरीरको देख, दुनीयाको कहेकि— मेरेमें आचार्यका सर्व लक्षण है. अर्थात् मुझे आचार्यपद दो—ऐसा कहे. ३

भावार्थ—आत्मश्लाघा करनेसे अपनी कींमत कराना है.

(२५३) ,, रागदृष्टि कर गावे, वार्जित्र बजावे, नटोंकी माफिक नाचे· कूदे, अश्वकी माफिक हणहणाट करे, हस्तीकी माफिक गुलगुलाट करे, सिंहकी माफिक सिंहनाद करे, करावे ३

भावार्थ—मुनियोंको ऐसा उन्माद कार्य न करना, किन्तु शांतवृत्तिसे मोक्षमार्गका आराधन करना चाहिये.

(२५४) ,, भेरीका शब्द, पटहका शब्द, मुंहका शब्द, मादलका शब्द, नदीघोषका शब्द, झलरीका शब्द, वल्लरीका शब्द, डमरु, मट्टया, शंख, पेटा, गोलरी, और भी श्रोत्रेंद्रियको आकर्षित करनेकी अभिलाषा मात्र भी करे. ३

(२५५) ,, वीणाका शब्द, त्रिपंचीका शब्द, कूणाका, पापची वीणा, तारकी वीणा, तुंबीकी वीणा, सतारका शब्द, ढंकाका शब्द, और भी वीणा-तार आदिका शब्द, श्रोत्रेंद्रियको उन्मत्त बनानेवाले शब्द सुननेकी अभिलाषा मात्र करे. ३

(२५६) ,, ताल शब्द, कांसीतालके शब्द, हस्ततालादि,

* एक जातिका धोवण में दुसरी जातीका धोवण मीला देनेसे अगर विस्पर्श होतों त्रसजीवों कि उत्पती हो जाती है ढुंढक भाइयोंकों इसपर ख्याल करना चाहिये.

और भी किसी प्रकारके तालको यावत् श्रवण करनेकी अभिलाषा मात्र भी करे.

(२५७) ,, शंख शब्द, बांस वेणु, खरमुखी आदिके शब्द सुननेकी अभिलाषा करे. ३

(३५८) ,, केरा (गाहुओंका) खाइ यावत् तलाव आदिका वहांपर जोरसे निकलाता हुवा शब्द.

(२५९) "काच्छा गहन, अटवी, पर्वतादि विषम स्थानसे अनेक प्रकारके होते हुवे शब्द."

(२६०) "ग्राम, नगर, यावत् सन्निवेशके कोलाहल शब्द."

(२६१) ग्राममें अग्नि, यावत् सन्निवेशमें अग्नि आदिसे महान् शब्द.

(२६२) ग्रामको बद-नाश, यावत् सन्निवेशका बदका शब्द.

(२६३) अश्वादिका क्रीडा स्थानमें होता हुवा शब्द.

(२६४) चौरादिकी घातके स्थानमें होता हुवा शब्द.

(२६५) अश्व, गजादिके युद्धस्थानमें "

(२६६) राज्याभिषेकके स्थानमें, कथगोंके स्थान, पटहादिके स्थान, होते हुवे शब्द.

(२६७) "बालकोंके विनोद विलासके शब्द."

उपर लिखे सब स्थानोंमें श्रोत्रेंद्रियसे श्रवण कर, राग द्वेष उत्पन्न करनेवाले शब्द, मुनि सुने, अन्यको सुनावे, अन्य कोइ सुनताहो उसे अच्छा समझे.

भावार्थ—ऐसे शब्द श्रवण करनेसे राग द्वेषकी वृद्धि, प्रमा-

दकी प्रबलता, विषयविकारको उत्तेजन, स्वाध्याय-ध्यानकी व्याघात, इत्यादि अनेक दोषों उत्पन्न होते है

(२६८) जो कोइ साधु साध्वी, अनेक प्रकारके इस लोक संबंधी मनुष्य-मनुष्यणीका शब्द, परलोक संबंधी देवी, देवता, तिर्यंच, तिर्यंचणीके शब्द, देखे हुवे शब्द, विगर देखे हुवे शब्द, सुने हुवे शब्द, न सुने हुवे शब्द, यावत् ऐसे शब्द सुन उसके उपर राग, द्वेष, मूर्च्छित, गृद्ध, आसक्त हो, श्रोत्रेंद्रियका पोषण करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

उपर लिखे २६८ बोलोंसे एक भी बोल कोइ साधु साध्वी सेवन करेंगा, उसे लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवा उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र-सत्तरवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(१८) श्री निशिथसूत्र-अठारवा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' विगर कारण नौका (नावा) में बैठे, बैठावे, बैठतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—समुद्रकी स्हेल करनेको तथा कुतुहलके लीये नौकामें बैठे, उसे प्रायश्चित्त होता है.

(२) ,, साधु साध्वीयोंके निमित्त नौका मूल्य खरीद कर रखे, उस नौकापर चढे. ३

(३) एवं नौका उधारी लेवे, उसपर बैठे. ३

(४) सलटो पलटो करी हुइ नौकापर बैठे. ३

(५) निर्बलसे कोइ सबल जबरदस्तीसे ले, उस नौकापर

बैठे. ३ एवं दो मनुष्योंके विभागमें है, एककादिल न होनेवाली नौकापर चढे. ३ साधुके निमित्त सामने लाइ हुइ नौकापर चढे.३

(७) जलमें रही हुइ नौकाको खेंचके साधुके लीये स्थलमें लावे, उस नौकापर चढे. ३

(८) एवं स्थलमें रही नौकाको जलकी अंदर साधुके निमित्त लावे, उस नौकापर चढे. ३

(९) जिस नौकाकी अन्दर पाणी भरागया हो, उस पाणीको साधु उलचे (बाहार फेंके) ३

(१०) कादवमें खुची हुइ नौकाको कर्दमसे निकाले. ३

(११) किसी स्थानपर पडी हुइ नौकाको अपने लीये मगवाके उसपर चढे. ३

(१२) उर्ध्वगामिनी नौका पाणीके सामने जानेवाली, अधोगामिनी नौका, पाणीके पूरमें जानेवाली नौकापर चढे. ३

(१३) नौकाकी एक योजनकी गतिके टाइममें आदा योजन जानेवाली नौकापर बैठे.

(१४) रसी पकड नौकाको आप स्वयं चलावे.

(१५) न चलती हुइ नौकाको दंडाकर, वेत्तकर, रसीकर आप स्वयं चलावे. ३

(१६) नौकामें आते हुवे पाणीको पात्रासे, कमंडलसे उलच बाहार फेंके. ३

(१७) नौकाके छिद्रसे आते हुवे पाणीको हाथ, पग और कोइ भी प्रकारका उपकरण करके रोके. ३

भावार्थ—प्रथम तो जहांतक रहस्ता हो, वहांतक नौकामें

साधुवोंको बैठनाही नहीं चाहिये. अगर बैठना हो तो जल्दीसे पार हो, ऐसी नौकामें बैठे, नदीका दुसरा तट दृष्टीगोचर होता हो, ऐसी नौकामें बैठे. बेठती वखत मुनि सागारी अनशन कर नौकामें बैठे. जैसे नौकामें बैठनेके पहला भी गृहस्थोंकी दाक्षिण्यतासे गृहस्थोंका काम न करे, इसी माफिक ही नौकामें बैठनेके बाद भी गृहस्थका कार्य न करे. जैसी मुनिकी दृष्टि नौकावासी जीवोंपर है, वैसीही पाणीके जीवोंपर है. मुनि सबजीवोंका हित चाहाते है. वहांपर गृहस्थका कार्य, साधु दाक्षिणतासे न करे यह अपेक्षा है. कारण मुनि उस समय अनशन किया हुवा अपना जीनाभी नही इच्छता है.

(१८) ,, साधु नौकामें, दातार नौकामें.

(१९) साधु नौकामें दातार पाणीमें.

(२०) साधु पाणीमें, दातार नौकामें.

(२१) साधु पाणीमें, दातार पाणीमें.

(२२) साधु तथा दातार दोनों नौकामें.

(२३) साधु नौकामें दातार कर्दममें.

(२४) साधु कर्दममें, दातार नौकामें.

(२५) साधु तथा दातार दोनों कर्दममें. नौका और जलके साथ चतुर्भंगी—२६ २७-२८

(२९) नौका और स्थलके साथ चतुर्भंगी समझना. ३० ३१ ३२ ३३ जल और कर्दमसे चतुर्भंगी. ३४ ३५ ३६ ३७ जल और स्थलके साथ चतुर्भंगी. ३८ ३९ ४० ४१ कर्दम और स्थलके साथ चतुर्भंगी. ४२ ४३ ४४ ४५. उक्त १८ वा सूत्रसे ४५ वा सूत्र तक दातार आहार पाणी देवे तो साधुवोंको लेना नहीं कल्पै.

यद्यपि स्थलमें साधु और स्थलमें दातार हाती कल्पै; परंतु नौ-कामें बैठते समय साधु स्थलमें आहार पाणी चुकाके वस्त्र, पात्रकी एकही पेट (गांठ) कर लेते है. वास्ते उस समय आहार पाणी लेना नहीं कल्पै. भावना पूर्ववत्. यहां पन्थीलोग कीतनीक कुयुक्तियों लगाते है वह सब मिथ्या है. साधु परम दयावन्त होते है. सब जीवोंपर अनुकंपा है.

(४६) ,, मूल्य लाया हुवा वस्त्र ग्रहन करे. ३

(४७) एवं उधारा लाया हुवा वस्त्र.

(४८) सलट पलट कीया हुवा वस्त्र.

(४९) निर्बलसे सबल जबरदस्तीसे दिलावे, दो विभागमें एकका दिल न होनेपर भी दुसरा देवे, और सामने लाके देवे ऐसा वस्त्र ग्रहन करे. ३

भावार्थ—मूल्यादिका वस्त्र लेना मुनिको नहीं कल्पै.

(५०) ,, आचार्यादिके लीये अधिक वस्त्र ग्रहन कीया हो वह आचार्यको विगर आमंत्रण करके अपने मनमाने साधुको देवे. ३

(५१) ,, लघु साधु साध्वी, स्थविर (वृद्ध) साधु साध्वी जिसका हाथ, पग, कान, नाक आदि शरीरका अवयव छेदा हुवा नहीं, बेमार भी नहीं है, अर्थात् सामर्थ्य होनेपर भी उसको प्रमाणसे[१] अधिक वस्त्र देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे.

(५२) एवं जिसके हाथ, पांव, नाक, कानादि छेदा हुवा हो, उसे अधिक वस्त्र न देवे, न दिलावे, न देतेको अच्छा समझे.

---

१ तीन वस्त्रका परिमाण है. एक वस्त्र २४ हाथका होता है. साध्वींके च्यार (४) वस्त्रका परिमाण है.

भावार्थ—बैमारमुनिके रक्तादिसे वस्त्र अशुचि हो, वास्ते अधिक देना बतलाया है.

(५३) ,, वस्त्र जीर्ण है, धारण करने योग्य नहीं है, स्वल्पकाल चलने योग्य है, ऐसा वस्त्र ग्रहन करे. ३

(५४) नया वस्त्र, धारण करने योग्य, दीर्घकाल चलने योग्य है, ऐसा वस्त्र न धारे. ३ भावना पात्र उद्देशाकी माफिक.

(५५) ,, वर्णवन्त वस्त्र ग्रहन कर, विवर्ण करे. ३

(५६) विवर्णका सुवर्ण करे. ३

(५७) नया वस्त्र ग्रहन कर उसे तैल, घृत, मक्खन, चरबी लगावे. ३

(५८) एवं लोद्रव, कोकण. अबीरादि द्रव्य लगावे. ३

(५९) शीतल पाणी, गरम पाणीसे एकवार, वारवार धोवे. ३

(६०-६१-६२) नया वस्त्र ग्रहन कर बहुत दिन चलेगा इस अभिप्रायसे तैलादि, लोद्रवादि, द्रव्य लगावे, शीतल पाणी गरम पाणीसे धोवे. ३

(६३) नया सुगंधि वस्त्र प्राप्त कर उसे दुर्गन्धी करे.

(६४) दुर्गन्धि वस्त्र प्राप्त कर उसे सुगन्धि करे.

(६५) सुगंधि वस्त्र ग्रहन कर; उसे तैलादि.

(६६) लोद्रवादि लगावे.

(६७) शीतल पाणी, गरम पाणीसे धोवे. एवं तीन सूत्र दुर्गंधि वस्त्र प्राप्त कर.

(६८-६९-७०) एवं छे सूत्र बहुत दिनापेक्षा भी कहना.

(७६) सूत्र हुवे.

(७७) „ अन्तरारहित पृथ्वी (सचित्त) ऐसे स्थानमें वस्त्रको आताप देवे. ३

(७८) एवं सचित्त रजपर वस्त्रको आताप देवे.

(७९) कचे पाणीसे स्निग्ध पृथ्वीपर वस्त्रको आताप देवे.३

(८०) सचित्त शिला, कांकरा, कोलडीये जीवोंकाझाला, काष्टसंगृहीत जीव, इंडा, बीजादि जीव व्याप्त भूमिपर वस्त्रको आताप देवे. ३

(८१) घरके उंबरेपर, देहलीपर.

(८२) भितपर छोटे खदीयापर यावत् आच्छादित भूमिपर वस्त्रको आताप देवे. ३

(८३) मांचा, माला, प्रासाद, शिखर, हवेली, निसरणी, आदि उर्ध्वस्थानपर वस्त्रको आताप देवे.

भावार्थ—ऐसे स्थानोंपर वस्त्रको आताप देनेमें देते लेते स्वयं आप गिर पडे, वस्त्र वायुके मारा गिर पडे, उसे आत्मघात, संयमघात, परजीवघात-इत्यादि दोषोंका संभव है.

(८४) „ वस्त्रकीअन्दर पूर्व पृथ्वीकाय बन्धी हुइथी, उसको निकाल कर देवे. ३ उस वस्त्रको ग्रहन करे. ३

(८५) एवं अप्काय कचा जलसे भींजा हुवा तथा पाणीके संघटेसे.

(८६) एवं तेउकाय संघटेसे.

(८७) एवं वनस्पतिकायसे.

(८८) एवं औषधि, धान्य, बीजादि.

(८९) एवं त्रस प्राणी-जीवोंसहित तथा गमनागमन करवायके.

भावार्थ—साधुको कपडे निमित्त पृथ्व्यादि किसी जीवोंको तकलीफ होती हो, ऐसा वस्त्र लेना साधुवोंको नहीं कल्पै.

(९०) ,, साधुवोंके पूर्व गृहस्थावास संबंधी न्यातीले हो, अन्यन्यातीले हो, श्रावक हो, अश्रावक हो, वह लोग ग्राममें तथा ग्रामान्तरमें साधुके नामसे याचना—जैसे महाराजको वस्त्र चाहिये, महाराजको वस्त्र चाहिये, आपके वहां हो तो दीजीये—इत्यादि याचना कर देवे, वैसा वस्त्र साधु लेवे. ३

भावार्थ—साधुको वस्त्रकी जरुरत हो तो आप स्वयं याचना करे, परन्तु गृहस्थोंका याचा हुवा नहीं लेवे.

(९१) ,, न्यातीलादि परिषदकी अन्दरसे उठके साधुके निमित्त वस्त्रकी याचना करे, वह वस्त्र साधु ग्रहन करे. ३

भावार्थ—किसी कपडेवालोंका देनेका भाव नहीं हो, परन्तु एक अच्छा आदमीकी याचनासे उसे शरमींदा होके भी देना पडता है. वास्ते साधुको स्वयंही याचना करनी चाहिये.

(९२) ,, साधु वस्त्रकी निश्राय ऋतुबद्ध (मासकल्प) ठेरे. ३

(९३) एवं वस्त्रके लीये चातुर्मास करे. ३

भावार्थ—मुनि, वस्त्रकी याचना करनेपर गृहस्थ कहे कि—हे मुनि ! तुम अबी यहांपर मासकल्प ठेरें, तथा चातुर्मास करें, हम आपको वस्त्र देंगे, और वस्त्र देशान्तरसे मंगवा देंगे, ऐसा वचन सुन, मुनि मासकल्प तथा चातुर्मास ठेरे. अगर ठेरना होतो अपने कल्प तथा परउपकारके लीये ठेरना चाहिये. परन्तु कपडेकी खुशमंदीके मातेत होके नहीं ठेरे, ऐसा निःस्पृही वीतरागका धर्म है.

उपर लिखे ९३ बोलोंसे कोइ साधु साध्वी एक बोल भी सेवन करे, करावे करतेको अच्छा समझेगा, उसको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवा उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र—अठारवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

(१९) श्री निशिथसूत्र उन्नीसवा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' बहु मूल्य वस्तु-वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण तथा औषधि आदि, कोइ गृहस्थ बहु मूल्यवाला वस्तुका मूल्य स्वयं लावे, अन्यके पास मूल्य मंगवाके तथा अन्य साधुके निमित्त मूल्य लाते हुवेको अच्छा समझे. वह वस्तु बहु मूल्यवाली मुनि ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—बहु मूल्यवाली वस्तु ग्रहन करनेसे ममत्वभाव बढे, चौरादिका भय रहे, इत्यादि.

(२) एवं बहु मूल्यवाली वस्तु उधारी लाके देवे, उसे मुनि ग्रहन करे. ३

(३) सलटा पलटाके देवे, उसे मुनि ग्रहन करे. ३

(४) निर्बलसे जबरदस्ती सबल दिलावे, उसे ग्रहन करे. ३

(५) दो भागीदारोंकी वस्तु, एकका दिल देनेका न होनेपर भी दुसरा देवे, उसे मुनि ग्रहन करे.

(६) बहु मूल्य वस्तु सामने लाके देवे, उसे ग्रहन करे. ३ भावना पूर्ववत्.

(७) ,, अगर कोइ बेमार साधुके लीये बहु मूल्य औष-

धिकी खास आवश्यकता होनेपर तीन दात्त (मात्रा) से अधिक ग्रहन करे. ३

(८) ,, बहु मूल्य वस्तु कोइ विशेष कारनसे (औषधादि) ग्रहन कर ग्रामानुग्राम विहार करे. ३

भावार्थ—चौरादिका भय, ममत्वभाव बढे तस्करादि मार पीट करे, गम जानेसे आर्त्तध्यान खडा होता है. इत्यादि.

(९) ,, बहु मूल्य वस्तुका रुप परावर्त्तन कर गृहस्थ देवे, जैसे कस्तूरी अंबरादिकी गोलीयों बना दे. गाल दे, ऐसेको ग्रहन करे. ३

भावार्थ—जहांतक बने वहांतक मुनियोंको स्वल्प मूल्यका वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण, औषधिसे काम लेना चाहिये. उपलक्षणसे पुस्तक, पाना आदि स्वल्प मूल्यवालेसे ही काम चलाना चाहिये.

(१०) ,, स्याम, प्रातःकाल, मध्यान्ह, और आदिरात्रि, यह च्यारों टाइममें एक मुहूर्त्त (४८ मिनीट) अस्वाध्यायका काल है. इस च्यारों कालमें स्वाध्याय (सूत्रोंका पठन, पाठन) करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—इस च्यारों टाइममें तिर्यग्लोक निवासी देव फिरते है. देवतावोंकी भाषा मागधी है. अगर उस भाषामें तुटी हो तो देव कोपायमान हो, कबी नुकशान करे.

(११) ,, दिनकी प्रथम पोरसी, चरम पोरसी, रात्रिकी प्रथम पोरसी, चरम पोरसी, इसमे अस्वाध्यायका काल निकालके शेष च्यारों पोरसीमें साधु साध्वीयों स्वाध्याय न करे. न करावे, न करतेको अच्छा समझे.

(१२) ,, अस्वाध्यायके समय किसी विशेषकारणसे तीन पृच्छना (प्रश्न) से अधिक पूछे. ३

भावार्थ –अधिक पूछना हो तो स्वाध्यायके कालमें पूछना चाहिये.

(१३) एवं दृष्टिवाद--अंगकी सात पृच्छना (प्रश्न) से अधिक पूछे. ३

(१४) ,, च्यार महान् महोत्सवकी अन्दर स्वाध्याय करे. ३ यथा—इंद्र मदोत्सव, चैत शुक्ल १५ का, स्कन्ध महोत्सव, आषाढ शुक्ल १५ का. यक्ष महोत्सव, भाद्रपद शुक्ल १५का, भूतमहोत्सव कार्तिक शुक्ल १५ का. इस च्यार दिनोंमें मूल सूत्रोंका पठन पाठन करना साधुवोंको नहीं कल्पै. *

(१५) ,, च्यार महा प्रतिपदा—वैशाख कृष्ण १, श्रावण कृष्ण १, आश्विन कृष्ण १, मागशर कृष्ण १. इस च्यार दिनोंमें मूल सूत्रोंका पठन पाठन करना नहीं कल्पै.

(१६) ,, स्वाध्याय पोरसीमें स्वाध्याय न करे. ३

(१७) स्वाध्यायका च्यार काल है. उसमें स्वाध्याय न करे. ३

भावार्थ—स्वाध्याय—' सव्व दुक्खविमुक्खाणं ' मुनिको स्वाध्याय ध्यानमें ही मग्न रहना चाहिये. चित्तवृति निर्मल रहै. प्रमादका नाश कर्मोंका क्षय और सद्गतिकि प्राप्तीका मौख्य कारण स्वाध्यायही है.

---

* श्री स्थानांगजी सूत्र—चतुर्थ स्थाने—आश्विन शुक्ल १५ को यक्ष महोत्सव कहा हैं. उस अपेक्षा कार्तिककृष्ण प्रतिपदा महा पडिवा होती हैं. इस वास्ते दोनों आगमोंको बहुमान देते हुवे दोनों पूर्णिमा, दोनों प्रतिपदाको अस्वाध्याय रखना चाहिये तत्त्व केवलीगम्य.

(१८) ,, जहांपर अस्वाध्याययोग्य पदार्थ टटी, पैसाब, हाड, मांस, रौद्र, पंचेंद्रियका कलेवरादि ३४ अस्वाध्यायसे कोइ भी अस्वाध्याय हो, वहांपर स्वाध्याय करे, करावे, भावना पूर्ववत्.

(१९) ,, अपने अस्वाध्याय टटी, पैसाब, रौद्रादि शरीर-अशुचि हो, साध्वी ऋतुधर्ममें हो, गड, गुम्बडके रसी चीकती हो-इत्यादि अपने अस्वाध्याय होते स्वाध्याय करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

(२०) ,, हठेले समोसरणकी वाचना न दी हो, और उपरके समोसरणकी वाचना देवे, अर्थात् जिसको आचारांगसूत्र न पढाया हो, उसे सूयगडांगसूत्रको वाचना देवे. ३ सूयगडांगजी सूत्रकी वाचना दी, उसे स्थानांगसूत्रको वाचना देवे. ३ एवं यावत् क्रमसर सूत्रकी वाचना देना कहा है, उसको उत्क्रमशः वाचना देवे, देनेकी दुसरेको आज्ञा देवे, कन्य कोइ उत्क्रमशः आगम वाचना देते हुवेको अच्छा समझे. वह आचार्योपाध्याय खुद प्रायश्चित्तके भागी होते है.

भावार्थ—जैन सिद्धांतकी संकलना शैली इसी माफिक है कि-वह आगम क्रमशः वाचनासे ही सम्यक् प्रकारसे ज्ञानकी प्राप्ति होती है.

(२१) ,, नौ ब्रह्मचर्यका अध्ययन (आचारांगसूत्र प्रथम श्रुतस्कन्ध) की वाचना न दे के उपरके सूत्रोंकी वाचना देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—जीवादि पदार्थ तथा मुनिमार्ग, उच्च कोटिका वैराग्यसे संपूरण भरा हुवा ब्रह्मचर्यका नौ अध्ययन है, वास्ते मोक्षमार्गमें स्थिर स्थोभ करानेके लीये मुनियोंको प्रथम आचा-

रांगसूत्र ही पढना चाहिये, अगर ऐसा न पढावे, उन्होंके लीगे यह प्रायश्चित्त बतलाया हुवा है.

(२२) ,, 'अप्राप्त' वाचना लेनेको योग्य नहीं हुवा है. द्रव्यसे बालभावसे मुक्त न हुवा हो, अर्थात् काखमें रोम (बाल) न आया हो, भावसे आगम रहस्य समझनेकी योग्यता न हो, धैर्य, गांभीर्य, न हो, विचारशक्ति न हो, ऐसे अप्राप्तको आगमोंको वाचना देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे.

(२३) ,, 'प्राप्त' को आगमोंको वाचना न देवे, न दिलावे, न देतेको अच्छा समझे. द्रव्यसे बालभावसे मुक्त हुवा हो, काखमें रोम आगये हो, भावसे सूत्रार्थ लेनेकी, ग्रहन करनेकी, तत्त्व विचार करनेकी, रहस्य समझनेकी योग्यता हो, धैर्य, गांभीर्य, दीर्घदर्शिता हो, ऐसे प्राप्तको आगमोंकी वाचना न देवे. ३

भावार्थ—अयोग्यको आगमज्ञान देना, वह बडा भारी नुकशानका कारण होता है. वास्ते ज्ञानदाता आचार्योपाध्यायजी महाराजको प्रथमसे पात्र कुपात्रकी परीक्षा करके ही जिनवाणी रुप अमृत देना चाहिये. तां के भविष्यमें स्वपरात्माका कल्याण करे.

(२४) अति बाल्यावस्थावाला मुनिको आगम वाचना देवे. ३

(२५) बाल्यावस्थासे मुक्त हुवाको आगभ वाचना न देवे.३ भावना २२–२३ सूत्रसे देखो.

(२६) ,, एक आचार्यके पास विनयधर्मसंयुक्त दाय शिष्यों पढते है. उसमें एकको अच्छा चित्त लगाके ज्ञान-ध्यान शिखावे, सूत्रार्थकी वाचना देवे [रागके कारणसे], दुसरेको न शि-

खावे, न सूत्रार्थकी वाचना देवे [द्वेषके कारणसे] तो वह आचार्य प्रायश्चित्तका भागी होता है. भावना पूर्ववत्.

(२७) ,, आचार्योपाध्यायके वाचना दीये विगर अपनेही मनसे सूत्रार्थ, वांचे, वंचावे, वांचतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—जैन सिद्धांत अति गंभीर शैलीवाले, अनेक रहस्यसे भरे हुवे, कितनेक शब्द तो खास गुरु गमताकी अपेक्षा रखनेवाले है, वास्ते गुरुगमतासे ही सूत्र वांचनेकी आज्ञा है. गुरुगमता विगर सूत्र वांचनेसे अनेक प्रकारकी शंकाओं उत्पन्न होती है. यावत् धर्मश्रद्धासे पतित हो जाते है.

(२८) ,, अन्यतीर्थी, और अन्य तीर्थीयोंके गृहस्थोंको सूत्रार्थकी वाचना देवे, दिलावे, देतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—उन्ह लोगोंकी प्रथमसेही मिथ्यात्वकी वासना हृदयमें जमी हुइ है. उसको सम्यक् ज्ञानही मिथ्या हो परिणमता है. कारण—वाचना देनेवाले पर तो उसका विश्वासही नहीं. विनय, भक्तिहीनको वाचना न देवे. कारण नन्दीसूत्रमे कहा है कि सम्यसूत्र भी मिथ्यात्वीयोंकों मिथ्यारूपमे परिणमते है.

(२९) ,, अन्यतीर्थी, अन्यतीर्थीयोंके गृहस्थोंसे सूत्रार्थकी वाचना ग्रहन करे, करावे, करतेको अच्छा समझे.

भावार्थ—अन्यतीर्थी ब्राह्मणादि जैनसिद्धान्तोंके रहस्यका जानकार न होनेसे वह यथावत् नहीं समझा सके, न यथार्थ अर्थ भी कर शके. वास्ते ऐसे अज्ञातोंसे वाचना लेना मना है. इतनाही नही किन्तु उन्होंका परिचय करनाही बीलकुल मना है. आजकाल कीतनीक निर्नायक तरूण साध्वीयों स्वच्छन्दतासे अज्ञ ब्राह्मणों पासे पढति है. जीस्का नतीजा प्रत्यक्षमें अनुभव कर रही है.

(३०) ,, पासत्थावोंको सूत्रार्थकी वाचना देवे. ३

(३१) उन्होसे वाचना लेवे. ३

(३२--३३) एवं उसन्नावोंको वाचना देवे, लेवे.

(३४--३५) एवं कुशीलीयोंके दो सूत्र.

(३६-३७) एवं दो सूत्र, नित्यपिंड भोगवनेवालोंका तथा नित्य एक स्थान निवास करनेवालोंका, उसे वाचना देवे—लेवे.

(३८- ३९) एवं संसक्ताको वाचना देवे तथा लेवे.

भावार्थ—पासत्थावोंको वाचना देनेसे उन्होंके साथ परिचय बढे, उन्होंका कुछ असर, अपने शिष्य समुदायमें भी हो तथा लोक व्यवहार अशुद्ध होनेसे शंका होगाकि-इस दोनों मंडलका आचार--व्यवहार सदृश होगा. तथा पासत्थावोंसे वाचना लेनेमें वहही दोष है. और उसका विनय, भक्ति, वन्दन, नमस्कार भी करना पडे. इत्यादि, वास्ते ऐसा हीनाचारी पासत्थावोंके पास, न तो वाचना लेना, और न ऐसेको वाचना देना.

उपर लिखे ३९ बोलोसे एक भी बोल कोइ साधु साध्वी सेवन करेगा, उसको लघु चातुर्मासिक प्रायश्चित्त होगा. प्रायश्चित्त विधि देखो वीसवा उद्देशामें.

इति श्री निशिथसूत्र—उन्नीसवा उद्देशाका संक्षिप्तसार.

---

(२०) श्री निशिथसूत्र—वीसवा उद्देशा.

(१) 'जो कोइ साधु साध्वी' एक मासिक प्रायश्चित्त स्थानक (पहला उद्देशासे पांचवा उद्देशातकके बोल) सेवन कर माया

रहित-सरलतासे आलोचना करे, उसे एक मासिक प्रायश्चित्त दीया जाता है. और

(२) मायासंयुक्त आलोचना करनेपर उसे दोय मासिक प्रायश्चित्त देते है. कारण-एक मास मूल दोष सेवन कीया उसका. और एक मास जो आलोचना करते माया-कपट सेवन कीया, उसकी आलोचना, एवं दो मास.

(३) इसी माफिक दोय मास दोषस्थानक सेवन कर मायारहित आलोचना करनेसे दोय मासका प्रायश्चित्त.

(४) मायासंयुक्त करनेसे तीन मासका प्रायश्चित्त भावना पूर्ववत्.

(५) तीन मासवालोंको मायारहितसे तीन मास.

(६) मायासंयुक्तको च्यार मास.

(७) च्यार मासवालोंको मायारहितसे च्यार मास.

(८) मायासंयुक्तको पांच मास.

(९) पांच मास-मायारहितको पांच मास.

(१०) मायारहितको छे मास. छे माससे अधिक प्रायश्चित्त नहीं है. कारण-आजके साधु साध्वी, वीरप्रभुके शासनमें विचरते है, और वीरप्रभु उत्कृष्टसे उत्कृष्ट छे मासकी तपश्चर्या करी है. अगर छे माससे अधिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो, उसको फिरसे दुसरी दफे दीक्षा ग्रहनका प्रायश्चित्त होता है.

(११) ,, बहुतवार मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवन करे. जसे पृथ्वीकी विराधना हुइ, साथमें अप्कायकी विराधना एकवार तथा वारवार भी विराधना हुइ, वह एक साथमें आलोच-

ना करी, उसे बहुतवार मासिक कहते है. अगर मायारहित निष्कपट भावसे आलोचना करी हो, तो उसे मासिक प्रायश्चित्त देवे.

(१२) मायासंयुक्त आलोचना करनेसे दोमासिक प्रायश्चित्त होता है. भावना पूर्ववत्.

(१३) एवं बहुतसे दोमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे मायारहितवालोंको दोमासिक आलोचना.

(१४) मायासहितको तीन मासिक आलोचना. यावत् बहुतसे पांच मासिक, मायारहित आलोचनासे पांच मास, मायासहित आलोचना करनेसे छे मासका प्रायश्चित्त होता है. सूत्र २० हुवे. भावना प्रथम सूत्रकी माफिक समझना.

(२१) ,, मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, च्यार मासिक, पांच मासिक, और भी किसी प्रकारके प्रायश्चित्त स्थानोंको सेवन कर मायारहित आलोचना करनेसे मूल सेवा हो, उतनाही प्रायश्चित्त होता है. जैसे एक मासिक यावत् पांच मासिक.

(२२) अगर माया-कपटसे संयुक्त आलोचना करे, उसे मूल प्रायश्चित्तसे एक मास अधिक प्रायश्चित्त होता है. यावत् मायारहित हो, चाहे मायासहित हो, परन्तु छे माससे अधिक प्रायश्चित्त नहीं है. अधिक प्रायश्चित्त हो, तो पहलेकी दीक्षा छेदके नवी दीक्षाका प्रायश्चित्त होता है. एवं दो सूत्र बहुवचनापेक्षा भी समझना. २३-२४ सूत्र हुवे.

(२५) ,, च्यार मासिक, साधिक चातुर्मासिक, पंच मासिक, साधिक पंच मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायारहित आलोचना करे, उसे मूल प्रायश्चित्त देवे.

(२६) मायासंयुक्त आलोचना करनेसे पांच मास, साधिक

पांच मास, छे मास, छे मास, इससे उपर मायासहित, चाहे मायारहित हो, प्रायश्चित्त नहीं है. भावना पूर्ववत्, एवं दो सूत्र बहुवचनापेक्षा. २७-२८ सूत्र हुवे.

(२९) ,, चतुर्मासिक, साधिक चतुर्मासिक, पंच मासिक, साधिक पंचमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करे, मायारहित तथा मायासहित. उस साधुको उपरवत् प्रायश्चित्त देके किसी बेमार तथा वृद्ध मुनियोंकी वैयावच्च करने निमित्त स्थापन करे. अगर प्रायश्चित्त सेवन कीया, उसे संघ जानता हो तो संघके सन्मुख प्रायश्चित्त देना चाहिये, जिससे संघको प्रतीत रहे, साधुवोंको क्षोभ रहे, दुसरी दफे कोइ भी साधु, ऐसा अकृत्य कार्य न करे, इत्यादि. अगर दोष सेवनको कोइ भी न जाने, तो उसे अन्दर ही आलोचना देना. उसका दोष जो प्रगट करते जितना प्रायश्चित्त, दोष सेवन करनेवालोंको आता है, उतना ही गुप्त दोषको प्रगट करनेवालोंको होता है. कारण एसा करनेसे शासनहीलना मुनियोंपर अभाव दोष सेवनमें निःशंकता आदि दोषका संभव है. आलोचना करनेवालोंका च्यार भांगाः—

(१) आचार्यमहाराजका शिष्य, एकसे अधिक दोष सेवन कर आलोचना करते समय क्रमसर पहले दोषकी पहले आलोचना करे.

(२) एवं पहेले सेवन कीया दोषकी विस्मृति होनेसे पीछे आलोचना करे.

(३) पीछे सेवन कीया दोषकी पहले आलोचना करे.

(४) पीछे सेवन कीया दोषकी पीछे आलोचना करे,

आलोचनाके परिणामापेक्षा और भी चौभंगी कहते हैं—

(१) आलोचना करनेके पहला शिष्यका परिणाम था कि

—अपने कल्याणके लीये विशुद्ध भावसे आलोचना करना, और आचार्य पास आके विशुद्ध भावसे ही आलोचना करी.

(२) आलोचना विशुद्ध भावसे करनेका विचार कीयाथा, फिर अधिक प्रायश्चित्त आनेसे, मान, पूजाकी हानिके ख्यालसे मायासंयुक्त आलोचना करे.

(३) पहले मायासंयुक्त आलोचना करनेका विचार कीया था, परन्तु मायाका फल संसारवृद्धिका हेतु जान निष्कपट भावसे आलोचना करे.

(४) भवाभिनन्दी-पहला विचार भी अशुद्ध और पीछेसे आलोचना भी कपटसंयुक्त करे कारण कर्मोंकी विचित्र गती है. यह आठ भांगा सर्व स्थान समझना. भव्यात्मा मुनि, अपने कीये हुवे कर्म (पापस्थान)को सम्यक् प्रकारसे समझके निर्मल चित्तसे आलोचना कर आचार्यादि शास्त्रापेक्षा प्रायश्चित्त देवे, उसे अपने आत्माकी शास्त्रसे तपश्चर्या कर प्रायश्चित्तको पूर्ण करे.

(३०) एवं बहुवचनापेक्षा भी समझना.

(३१) ,, चतुर्मासिक साधिक चतुर्मासिक, पंच मासिक साधिक पंचमासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर पूर्वोक्त आठ भांगोंसे आलोचना करे, उस मुनिको यथावत् प्रायश्चित्त तपमें स्थापन करे, उस तपमें वर्त्तते हुवेको अन्य दोष लग जावे, तो उसकी आलोचना दे उसी चल्लु तपमें वृद्धि कर देना अगर तप करते समय वह साधु असमर्थ हो तो अन्य साधु, उन्होंके वैयावच्च में सहायता निमित्त रखे, उसे तप पूर्ण कराना आचार्यका कर्तव्य है.

(३२) एवं बहुवचनापेक्षा भी समझना

भावार्थ—चल्लु तपमें दोषोंकी आलोचना कर तप लेवे ता स्वल्प तपश्चर्या करनेसे प्रायश्चित्त उतर जावे, और पारणा करके तप करनेसे बहुत तप करना पडे. इस हेतुसे साथ हीमें लगेतार तप करवाय देना अच्छा है. तपकी विधि अनेक सूत्रमें है.

(३३) जो मुनि, मायारहित तथा मायासहित आलोचना करी, उसको आचार्यने छ मासिक तप प्रायश्चित्त दीया है, उसी तपका अन्दर वर्त्तते मुनि, ओर दोय मासिक प्रायश्चित्त आवे, ऐसा दोषस्थानको सेवन कीया, और उस स्थानकी आलोचना अगर मायारहितकी हो, तो उस तपके साथ वीश रात्रिका तप सामेल कर देना. कारण—पहला तप करते उस मुनिका शरीर क्षीण हो गया है. अगर मायासंयुक्त आलोचना करी हो तो दो मास और वीश रात्रि पहलेके (छेमासीक तप) तपके साथ मिला देना चाहिये. परन्तु उस तपसी साधुको पीछेकी आलोचनाका हेतु, कारण, अर्थ ठीक संतोषकारी वचनोंसे समझा देना चाहिये हे मुनि ! जो इस तपके साथ तप करेंगे, तो दो मासकी जगाह वीश रात्रिमें प्रायश्चित्त उतर जावेंगा, अगर यहां न करेंगे, तो तपस्याका पारणा करके भी तेरेको छे मासका (मायासंयुक्त तो तीन मासका) तप करना होगा. इस वखत तप अधिक करेंगे तो यह हमारा साधु, तुमारी वैयावच्च विगेरहसे सहायता करेंगा, इत्यादि. वह साधु इस बातको स्वीकार कर उस तपको चाहे आदिमें, चाहे मध्यमें, चाहे अन्तमें कर देवे. जितना ज्यादा परिश्रम हो, उसे मुनि कर्मनिर्जराका हेतु समझे.

(३४) एवं पंच मासिक प्रायश्चित्त विशुद्ध करते बीचमें दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करे, उसकी विधि ३३ वां सूत्र माफिक समझना.

(३५) एवं चातुर्मासिक.

(३६) एवं तीन मासिक.

(३७) एवं दोय मासिक.

(३८) एक मासिक. भावना पूर्ववत् समझना.

(३९) जो मुनि छे मासी यावत् एक मासी तप करते हुवे अन्तरामें दो मासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर मायासंयुक्त आलोचना करी, जिससे दोय मास, वीश अहोरात्रिका प्रायश्चित्त, आचार्यने दीया, उस तपको पहलेके तपके अन्तमें प्रारंभ कीया है. उस तपमें वर्त्तते हुवे मुनिको और भी दोय मासिक प्रायश्चित्त स्थानका दोष लगजावे, उसे आचार्य पास आलोचना मायारहित करना चाहिये. तब आचार्य उसे वीश दिनका तप, उसे पूर्व तपश्चर्याके साथ बढा देवे, और उसका कारण, हेतु, अर्थ आदि पूर्वोक्त माफिक समझावे. मूल तपके सिवाय तीन मास दश दिन का तप हुवा.

(४०) ,, तीन मास दश रात्रिका तप करते अंतरे और भी दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे वीश रात्रिका तप प्रायश्चित्त देनेसे च्यार मासका तप करे. भावना पूर्ववत्.

(४१) ,, च्यार मासका तप करते अन्तरेमें दोमासी प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे पूर्ववत् वीश रात्रिका प्रायश्चित्त पूर्व तपमें मिला देवे, तब च्यार मास वीश रात्रि होती है.

(४२) ,, च्यार मास वीश रात्रिका तप करते अंतरे दो मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे और वीश रात्रि तप उसके साथ मिला देनेसे पांच मास दश रात्रि होती है.

(४३) ,, पांच मास दश रात्रिका तप करते अंतरे दो मासिक प्रायश्चित्त सेवन करनेसे वीश रात्रिका तप उसके साथ मिला देनेसे पूर्ण छे मास होता है, इसके आगे तप प्रायश्चित्त नहीं है. फिर छेद या नवी दीक्षा ही दी जाती है. भावना पूर्ववत्.

(४४) ,, छे मासी प्रायश्चित्त तप करते हुवे मुनि, अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थानको सेवे, उसकी आलोचना करनेपर आचार्य उसे पूर्वतपके साथ पन्दर दिनोंका तप अधिक करावे.

(४५) एवं पांच मासिक तप करते.

(४६) एवं च्यार मासिक तप करते.

(४७) तीन मासिक तप करते.

(४८) दो मासिक तप करते,

(४९) एवं एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कीया हो, तो आदा मास सबके साथ मिला देना, भावना पूर्ववत्.

(५०) ,, छे मासिक यावत् एक मासिक तप करते अन्तरे एक मासिक और प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर माया संयुक्त आलोचना करे, उसे साधुको आचार्यने दोड (१॥) मासिक तप दीया है, वह साधु पूर्व तपको पूर्ण कर, उसके अन्तमें दोड (१॥) मासिक तप कर रहा है. उसमें और मासिक प्रायश्चित्त स्थानसे बी माया रहित आलोचना करे, उसे पन्दर दिनकी आलोचना दे के पूर्व दोड मासके साथ मिला देना. एवं दो मासका तप करे.

(५१) ,, दो मासिक तप करते और मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर आलोचना करनेसे, पन्दरादिनकी आलोचना दे पूर्व दो मासके साथ मिलाके अढाइ मासका तप करे.

(५२) ,, अढाइ मासवालाको मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेसे पन्द्रा दिनका तप देके पूर्वके साथ मिलाके तीन मास कर दे.

(५३) ,, एवं तीन मासवालाके साढा तीन मास.

(५४) साढा तीन मासवालाके च्यार मास.

(५५) च्यार मासवालाके साढा च्यार मास.

(५६) साढे च्यार मासवालाके पांच मास.

(५७) पांच मास वालाके साढा पांच मास.

(५८) साढा पांच मास वालाके छे मास. भावना पूर्ववत् समझना.

(५९) ,, दो मासिक प्रायश्चित्त तप करते अन्तरे एक मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे पन्द्रादिनकी आलोचना दे के पूर्व दो मासके साथ मिला देनेसे अढाइ मास.

(६०) अढाइ मासका तप करते अन्तरे दो मास प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे वीश रात्रिका तप दे के पूर्व अढाइ मास साथ मिलानेसे तीन मास और पांच दिन होता है.

(६१) तीन मास पांच दिनका तप करते अंतरे एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेसे पन्द्रा दिनोंका तप, उस तीन मास पांच रात्रिके साथ मिलानेसे तीन मास वीश अहोरात्रि होती है.

(६२) तीन मास वीश अहोरात्रिका तप करते अन्तरेमें दो मासिक प्रा० स्थान सेवन करने वालेको वीश अहोरात्रिकी आलोचना देके पूर्वका तपके साथ मिला देनेसे ३-२०-२० च्यार मास दश दिन होते है.

(६३) च्यार मास दश दिनका तप करते अन्तरेमें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करने वालेको पन्दरा दिनकी आलोचना पूर्व तपके साथ मिला देनेसे ४-१०-१५ च्यार मास पंचवीश अहोरात्री होती है.

(६४) च्यार मास पंचवीश अहोरात्रिका तप करते अन्तरमें दो मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको वीश रात्रिकी आलोचना, पूर्वतपके साथ मिला देनेसे पंच मास और पंदरा अहोरात्रि होती है.

(६५) पांच मास पंदरा रात्रिका तप करते अन्तरामें एक मासिक प्रा० स्थान सेवन करनेवालेको पन्दरा अहोरात्रिकी आलोचना, पूर्वतपके साथ सामेल कर देनेसे छे मासिक तप होता है. इस्के आगे किसी प्रकारका प्रायश्चित्त नहीं है. अगर तप करते प्रायश्चित्तका स्थान सेवन करते है, उसकी आलोचना देनेवाले आचार्यादि, उस दुर्बल शरीरवाला तपस्वी मुनिको मधुरतासे उस आलोचनाका कारण, हेतु, अर्थ बतलावे कि तुमारा प्रायश्चित्त स्थान तो एक मासिक, दो मासिकका है, परन्तु पेस्तरसे तुमारी तपश्चर्या चल रही है. जिसके जरिये तुमारा शरीरकी स्थिति निर्बल है. लगेतार तप करनेमें जोर भी ज्यादा पडता है. इस वास्ते इस हेतु-कारणसे यह आलोचना दी जाती है. कृत पापका तप करना महा निर्जराका हेतु है. अगर तुमारा उत्थानादि मंद हो तो मेरा साधु तुमारी वैयावच्च करेंगा तु शान्तिसे तप कर अपना प्रायश्चित्त पूर्ण करो. इत्यादि. २०

आलोचना सुननेकी तथा प्रायश्चित्त देनेकी विधि अन्य स्थानोंसे यहांपर लिखी जाती है.

आलोचना सुननेवाले.

(१) अतिशय ज्ञानी (केवली आदि) जो भूत, भविष्य, वर्तमान—त्रिकालदर्शी हो, उन्होंके पास निष्कपट भावसे आलोचना करते समय अगर कोइ प्रायश्चित्त स्थान, विस्मृतिसे आलोचना करना रह गया हो, उसे वह ज्ञानी कह देवे कि—हे भद्र! अमुक दोषकी तुमने आलोचना नहीं करी है. अगर कोइ माया —कपट कर किसी स्थानकी आलोचना नहीं करी हो, तो उसे वह ज्ञानी आलोचना न देवे, और किसी छद्मस्थ आचार्यके पास आलोचना करनेका कह देवे.

(२) छद्मस्थ आचार्य आलोचना सुननेवाले कितने गुणोंके धारक होते है ? यथा—

(१) पंचाचारको अखंड पालनेवाला हो, सत्तरा प्रकारसे संयम, पांच समिति, तीन गुप्ति, दश प्रकारका यतिधर्मके धारक, गीतार्थ, बहुश्रुत, दीर्घदर्शी-इत्यादि कारण-आप निर्दोष हो, वहही दुसरोंको निर्दोष बना सके, उसकाही प्रभाव दुसरे पर पड सके.

(२) धारणावन्त—द्रव्य, क्षेत्र, काल भावके जानकार, गुरुकुल वासको सेवन कर अनेक प्रकारसे धारणा करी हो, स्याद्वादका रहस्य, गुरुगमतासे धारण कीया हो.

(३) पांच व्यवहारका जानकार हो—आगमव्यवहार, सूत्र व्यवहार, आज्ञा व्यवहार, धारणा व्यवहार, जीत व्यवहार (देखो व्यवहार सूत्र उद्देशा १० वां) किस समय किस व्यवहारसे काम लीया जावे, या-प्रवृत्ति की जावे उसका जानकार अवश्य होना चाहिये.

(४) कितनेक ऐसे जीव भी हाते है कि—लज्जाके मारे शुद्ध आलोचना नहीं कर सके; परन्तु आलोचना सुनने वालोंमें

यह भी गुण अवश्य होना चाहिये कि—मधुरता पूर्वक आलोचक साधुकी लज्जा दूर करनेको स्थानांग-आदि सूत्रोंका पाठ सुनाके हृदय निर्मल बना देवे. जैसे—हे भद्र! इस लोककी लज्जा परभवमें विराधक कर देती है, रुपा और लक्षमणा साध्वीका दृष्टान्त सुनावे.

(५) शुद्ध करने योग्य होवे, आप स्वयं भद्रक भाव—अपक्षपातसे शुद्ध आलोचना करवाके, अर्थात् आलोचना करनेवालोंका गुण बतावे, आठ कारणोंसे जीव शुद्ध आलोचना करे—इत्यादि.

(६) मर्म प्रकाश नहीं करे. धैर्य, गांभीर्य, हृदयमें हो, किसी प्रकारकी आलोचना कोइभी करी हो, परन्तु कारण होने परभी किसीका मर्म नहीं प्रकाशे.

(७) निर्वाह करने योग्य हो. आलोचना अधिक आती है, और शरीरका सामर्थ्य, इतना तप करनेका न हो, उसके लीये भी निर्वाह करनेको स्वाध्याय, ध्यान, वन्दन, वैयावच्च-आदि अनेक प्रकारसे प्रायश्चित्तका खंड खंड कर उसको शुद्ध कर सके.

(८) आलोचना न करनेका दोष, अनर्थ, भविष्यमें विराधकपणा, संसारवृद्धिका हेतु, तथा आठ कारणोंसे जीव आलोचना न करनेसे उत्पन्न होता दुःख यावत् संसार भ्रमण करे. ऐसा बतलावे.

(९-१०) प्रिय धर्मी और दृढ धर्मी हो, धर्म शासनपर पूर्ण राग, हाड हाड किमीजी, रग रग, नशों और रोमरोममें शासन व्याप्त हो, अर्थात् यह दोषित साधु आलोचना न करेगा, तो दुसरा भी दोष लगनेसे पीछा न हटेगा. ऐसी खराब प्रवृत्ति होनेसे भविष्यमें शासनको बडा भारी धोका पहुंचेगा. इत्यादि हिताहितका विचारवाला हो.

(श्री स्थानांगजी सूत्र—दशवे स्थाने)

उपर लिखे दश गुणोंको धारण करनेवाले आलोचना सुनने योग्य होते है. वह प्रथम आलोचना सुने, दुसरी बखत और कहे—हे वत्स ! मैं पहला ठीक तरहसे नहीं सुनी, [१]अब दुसरी दफे सुनावे. तब दुसरी दफे सुने. जब कुछ संशय हो तो, कहेकि-हे भद्र ! मुझे कुछ प्रमाद आ रहाथा, वास्ते तीसरी दफे और सुनावें, तीन दफे सुननेसे एक सदृश हो, तो उसे निष्कपट शुद्ध आलोचना समझे. अगर तीन दफेमें कुछ फारफेर हो, तो उसे माया संयुक्त आलोचना समझना. (व्यवहारसूत्र.)

मुनि अपने चारित्रमें दोष किसवास्ते लगाते है ? चारित्र मोहनीयकर्मका प्रबल उदय होनेसे जीव अपने व्रतमें दोष लगाते है. यथा—

(१) 'कन्दर्पसे'—मोहनीय कर्मके उदयसे उन्माददशा प्राप्त हो, हास्यविनोद, विषय विकार—आदि अनेक कारणोंसे दोष लगाते है.

(२) 'प्रमाद' मद, विषय, कषाय, निद्रा और विकथा—इस पांच कारणोंसे प्रेरित मुनि दोष लगाते है. जैसे पूंजन, प्रतिलेखन, पिंड विशुद्धिमें प्रमाद करे.

(३) 'अज्ञात' अज्ञानतासे तथा अनुपयोगसे, हलन, चलनादि अयतना करनेसे—

(४) 'आतुरता' हरेक कार्य आतुरतासे करनेमें संयमव्रतोंको बाधा पहुचती है,

(५) 'आपत्तदशा' शरीरव्याधि, तथा अरण्यादिमें आपदा आनेसे दोष लगावे.

---

१ शिष्यकी परिक्षा निमित्तदोष लगता है देखो उत्पातीकसूत्र.

(६) 'शंका' यह पूंजन प्रतिलेखन करी होगा या नही करी होगा इत्यादि कार्यमे शंका होना.

(७) 'सहसात्कारे' बलात्कारसे, किसी कार्य करनेकी इच्छा न होनेपर भी वह कार्य करनाही पडे.

(८) 'भय' सात प्रकारका भयके मारे अधीरपनासे—

(९) 'द्वेषदशा' क्रोध मोहनीय उदय, अमनोज्ञ कार्यमें द्वेषभाव उत्पन्न होनेसे दोष लगता है.

(१०) शिष्यादिकी परीक्षा (आलोचना) श्रवण करनेके निमित्त दुसरी तीसरी वार कहना पडता है, कि मैंने पूर्ण नहीं सुनाथा, और सुनावें. (स्थानांगसूत्र.)

दोष लग जानेपर भी मुनियोंको शुद्ध भावसे आलोचना करना बडाही कठिन है. आलोचना करते करते भी दोष लगा देते है. यथा—

(१) कम्पता कम्पता आलोचना करे. अर्थात् आचार्यादिका भय लावेकि—मुझे लोग क्या कहेंगे? अर्थात् अस्थिर चित्तसे आलोचना करे.

(२) आलोचना करनेके पहला गुरुसे पूछे कि—हे स्वामिन्! अगर कोइ साधु, अमुक दोष सेवे, उसका क्या प्रायश्चित्त होता है? शिष्यका अभिप्राय यह कि—अगर स्वल्प प्रायश्चित्त होगा, तो आलोचना कर लेंगे, नहिं तो नहीं करेंगे.

(३) किसीने देखा हो, ऐसे दोषकी आलोचना करे, ओर न देखा हो, उसकी आलोचना नहीं करे. (कौन देखा है?)

(४) बडे बडे दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु सुक्ष्म दोषोंकी आलोचना न करे.

(५) सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना करे, परन्तु स्थूल दोषोंको आलोचना न करे.

(६) बडे जोर जोरसे शब्द करते आलोचना करे. जिससे बहुत लोक सुने, एकत्र हो जावे.

(७) बिलकुल धीमे स्वरसे बोले. जिसमें आलोचना सुननेवालोंको भी पुरा शब्द सुनाया जाय नहीं.

(८) एक प्रायश्चित्त स्थान, बहुतसे गीतार्थोंके पास आलोचना करे. इरादा यहकि—कोनसा गीतार्थ, कितना कितना प्रायश्चित्त देता है.

(९) प्रायश्चित्त देनेमें अज्ञात (आचारांग, निशिथका अज्ञात) के समीप आलोचना करे. कारण वह क्या प्रायश्चित्त दे सके ?

(१०) स्वयं आलोचना करनेवाला खुद ही उस प्रायश्चित्त को सेवन कीया हो, उसके पास आलोचना करे. कारण—खुद प्रायश्चित्त कर दोषित है, वह दुसरोंको क्या शुद्ध कर सकेंगा ? उन्हसे सच बात कबी कही न जायगी.

(स्थानांगसूत्र.)

आलोचना कोन करता है ? जिसके चारित्र मोहनीय कर्मका क्षयोपशम हुवा हो, भवान्तरमें आराधक पदकी अभिलाषा रखता हो, वह भव्यात्मा आलोचना कर अपनी आत्माको पवित्र बना सके. यथा—

(१) जातिवान्.

(२) कुलवान्. इस वास्ते शास्त्रकारोंने दीक्षा देते समय ही प्रथम जाति, कुल, उत्तम होनेकी आवश्यकता बतलाइ है.

जाति-कुल उत्तम हागा, वह मुनि आत्मकल्याणके लीये आलोचना करता कबी पीछा न हटेंगा.

(३) विनयवान्—आलोचना करनेमें विनयकी खास आवश्यकता है. क्योंकि-आत्मकल्याणमें विनय मुख्य साधन है.

(४) ज्ञानवान्—आलोचना करनेसे शायद इस लोकमें मान-पूजा, प्रतिष्ठामें कबी हानि भी हो, तो ज्ञानवंत, उसे अपना सुहृदयमें कबी स्थान न देंगा. कारण-ऐसी मिथ्या मान-पूजा, इस जीवने अनन्तीवार कराइ है. तदपि आराधकपद नहीं मिला है. आराधकपद, निर्मल चित्तसे आलोचना करनेसे ही मिल सके, इत्यादि.

(५) दर्शनवान्—जिसकी अटल श्रद्धा, वीतरागके धर्मपर है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेंगा. उसकी ही आलोचना प्रमाण गिनी जाती है, कि-जिसका दर्शन निर्मल है.

(६) चारित्रवान्—जिसको पूर्णतासे चारित्र पालनेकी अभिरुचि है, वह ही लगे हुवे दोषोंकी आलोचना करेंगा.

(७) अमायी—जिसका हृदय निष्कपटी, सरल, स्वभाव होगा, वह ही मायारहित आलोचना करेंगा.

(८) जितेंद्रिय—जो इन्द्रियविषयको अपने आधीन बना लीया हो, वह ही कर्मोके सन्मुख मोरचा लगाने, तपरुप अस्त्र लेके खडा होगा, अर्थात् आलोचना ले, तप वह ही कर सकेंगा, कि जिन्होंने इन्द्रियोंको जीती हो.

(९) उपशमभावी—जिन्होंका कषाय उपशान्त हो रहा है. न उसे क्रोध सताता है, न मानहानिमें मान सताता है, न माया न लोभ सताता है, वह ही शुद्ध भावसे आलोचना करेंगा.

(१० प्रायश्चित्त ग्रहन कर, पश्चात्ताप न करे, वह आलोचना करनेके योग्य होते है.

(स्थानांगसूत्र.)

प्रायश्चित्त कितने प्रकारके है ? प्रायश्चित्त दश प्रकारके है. कारण—एक ही दोषको सेवन करनेवालोंको अभिप्राय अलग अलग होते है, तदनुसार उसे प्रायश्चित्त भी भिन्न भिन्न होना चाहिये. यथा—

(१) आलोचना—एक ऐसा अशक्त परिहार दोष होता है कि-जिसको गुरु सन्मुख आलोचना करनेसे ही पापसे निवृत्ति हो जाती है.

(२) प्रतिक्रमण—आलोचना श्रवण कर गुरु महाराज कहे कि-आज तो तुमने यह कार्य कीया है, किन्तु आइंदासे ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये. इसपर शिष्य कहे-तहत्त-अब मैं ऐसा कार्यसे निवृत्त होता हुं. अकृत्य कार्यसे पीछा हटता हुं.

(३) उभया—आलोचना और प्रतिक्रमण दोनों करे. भावना पूर्ववत्.

(४) विवेग—आलोचना श्रवण कर ऐसा प्रायश्चित्त दीया जाय कि-दुसरी दफे ऐसा कार्य न करे. कुछ वस्तुका त्याग कराना तथा परिठन कार्य कराना.

(५) कायोत्सर्ग—दश, वीश, लोगस्सका काउसग्ग तथा खमासणादि दिलाना.

(६) तप—मासिक तप यावत् छे मासिक तप, जो निशिथसूत्रके २० उद्देशोंमें बतलाया गया है.

(७) छेद—जो मूल दीक्षा लीथी, उसमें एक मास, यावत्

छे मास तकका छेद कीया जावे, अर्थात् इतना मासपर्यायसे कम कर दीया जाय. जैसे एक मुनि, दीक्षा ग्रहनके बादमें दुसरा मुनिने तीन मास पीछे दीक्षा लीथी, उस बखत पीछेसे दीक्षा लेनेवाला मुनि, पहले दीक्षितको वन्दन करे. अब वह पहला दीक्षित मुनि, किसी प्रकारका दोष सेवन करनेसे उसे चातुर्मासिक छेद प्रायश्चित्त आया है. जिससे उसका दीक्षापर्याय च्यार मास कम कर दीया. फिर वह तीन मास पीछेसे दीक्षा लीथी, उसको वह पूर्वदीक्षित मुनि वन्दना करे.

(८) मूल—चाहे कितना ही वर्षोंकी दीक्षा क्यों न हो, परन्तु आठवा प्रायश्चित्त स्थान सेवन करनेसे उस मुनिकी मूल दीक्षाको छेदके उस दिन फिरसे दीक्षा दी जाती है. वह मुनि, सर्व मुनियोंसे दीक्षापर्यायमें लघु माना जावेगा.

(९) अनुठ्ठया—

(१०) पाडूचिया—यह दोय प्रायश्चित्त सेवन करनेवालोंको पुनः गृहस्थलिंग धारण करवायके दीक्षा दी जाती है. इसकी विधि शास्त्रोंमें विस्तारसे बतलाइ है, परन्तु वह इस कालमें विच्छेद माना जाता है. (स्थानांगसूत्र.)

साधुवोंको अगर कोइ दोष लग जावे तो उसी बखत आलोचना करलेना चाहिये. विगर आलोचना किया गृहस्थोंके वहां गौचरी न जाना, विहारभूमि न जाना, ग्रामानुग्राम विहार नहीं करना. कारण-आयुष्यका विश्वास नहीं है. अगर विराधिकपणेमें आयुष्य बन्ध जावे, तो भविष्यमें बडा भारी नुकशान होता है. अगर किसी साधुवोंके आपसमें कषायादि हुवा हो, उस समय लघु साधु खमावे नहीं तो वृद्ध साधुवोंको वहां जाके खमाना. लघु साधु

चाहे उठे, न उठे, आदर-सत्कार दे, न भी दे, वन्दन करे, न भी करे, खमावे, न भी खमावे, तो भी आराधिक पदके अभिलाषी मुनिको वहां जाके भी खमतखामणा करना. (बृहत्कल्पसूत्र.)

आलोचना किसके पास करना ? अपना आचार्योपाध्याय, गीतार्थ, बहुश्रुत, उक्त दश (१०) गुणोंके धारकके पास आलोचना करना. अगर उन्होंका योग न हो तो उक्त १० गुणोंके धारक संभोगी साधुवोंके पास आलाचना करे. उन्होंका योग न हो तो अन्य संभोगी साधुवोंके पास आलोचना करे. उन्होंका योग न हो तो रुप साधु (रजोहरण, मुखवस्त्रिकाका ही धारक है) गीतार्थ होनेसे उसके पास भी आलोचना करना. उन्होंके अभावमें पच्छकाडा श्रावक (दीक्षासे गिरा हुवा, परन्तु है गीतार्थ), उन्होंके अभावमें सुविहित आचार्यसे प्रतिष्ठा करी हुइ जिनप्रतिमाके पास जाके शुद्ध हृदयसे आलोचना करे, उन्होंके अभावमें ग्राम यावत् राजधानीके बाहार, अर्थात् एकान्त जंगलमें जाके सिद्ध भगवानकी साक्षीसे आलोचना करे. (व्यवहारसूत्र.)

मुनि, गौचरी आदि गये हुवेको कोइ दोष लग जावे, वह साधु, निशिथसूत्रका जानकार होनेसे वहांपर ही प्रायश्चित्त ग्रहन कर लेवे, और आचार्यपर आधार रखे कि - मैं इतना प्रायश्चित्त लीया है, फिर आचार्य महाराज इसमें न्यूनाधिक करेंगा, वह मुझे प्रमाण है. ऐसा कर उपाश्रय आते बखत रहस्तेमें काल कर जावे तो वह मुनि आराधिक है,जिसका २४ भांगा है. भावार्थ— कोइ योग न हो तो स्वयं शास्त्राधारसे आलोचना कर प्रायश्चित्त ले लेनेसे भी आराधिक हो सक्ते है. (भगवतीसूत्र)

निशिथसूत्रके १९ उद्देशाओंमे च्यार प्रकारके प्रायश्चित्त बतलाये है.

(१) लघुमासिक.

(२) गुरु मासिक.

(३) लघु चातुर्मासिक.

(४) गुरु चातुर्मासिक. तथा इसी सूत्रके वीसवां उद्देशामें—मासिक, दो मासिक, तीन मासिक, च्यार मासिक, पांच मासिक और छे मासिक. इस प्रायश्चित्तोंमे प्रत्येक प्रायश्चित्तके तीन तीन भेद होते है—

(१) प्रत्याख्यान प्रायश्चित.

(२) तपप्रायश्चित्त.

(३) छेद प्रायश्चित्त. इस तीनों प्रकारके प्रायश्चित्तोंका भी पुनः तीन तीन भेद होते है. (१) जघन्य, (२) मध्यम, (३) उत्कृष्ट.

जैसे (१) प्रत्याख्यान प्रायश्चित्त, जघन्यमें एकासना, मध्यमें विगइ (नीवी), उत्कृष्टमें आंबिलके प्रत्याख्यानका प्रायश्चित्त दीया जाता है. एवं तप और छेद.

किसी मुनिने मासिक प्रायश्चित्त स्थान सेवन कर, उस दोषकी आलोचना किसी गीतार्थ, बहुश्रुत आचार्य आदिके समीप करी है. अब उस साधुकी आलोचना श्रवण करती वखत वचार करे कि—इसने यह प्रायश्चित्त स्थान किस अभिप्रायसे सेवन कीया है ? क्या राग, द्वेष, विषय, कषाय, स्वार्थ, इन्द्रिय वश, कुतूहल प्रकृति-स्वभावसे ? धर्मरक्षण निमित्त ? शासनसेवा निमित्त ? गुरुभक्ति निमित्त ? शिष्यकों पठन पाठनके वास्ते ? अपने ज्ञानाभ्यास वास्ते ? आपदा आनेसे ? रोगादि विशेष कारणसे ? अरण्य उल्लंघन करनेसे ? किसी देशमें अज्ञातको उप-

देश निमित्त ? इत्यादि कारणोंसे दोष सेवन कर आलोचना क्या माया संयुक्त है ? माया रहित है ? लोक देखावु है ? अन्तःकरणसे है ? इत्यादि सबका विचार, आलोचना श्रवण करते बखत करके यथा प्रायश्चित्तके योग्य हो, उसे इतनाही प्रायश्चित्त देना चाहिये. प्रायश्चित्त देते समय उसका कारण हेतु, अर्थ भी समझा देना. जैसे कहेकि—हे शिष्य ! इस कारणसे, इस हेतुसे, इस आगमके प्रमाणसे तुमको यह प्रायश्चित्त दीया जाता है.

(व्यवहारसूत्र.)

अगर प्रायश्चित्त देनेवाला आचार्य आदि राग द्वेषके वश हो, न्यूनाधिक प्रायश्चित्त देवे तो, देनेवाला भी प्रायश्चित्तका भागी होता है, और शिष्यको स्वीकार भी न करना चाहिये तथा शास्त्राधारसे जो प्रायश्चित्त देनेपर भी वह प्रायश्चित्तीया साधु, उसे स्वीकार न करे तो, उसे गच्छमें नहीं रखना चाहिये. कारण—एक अविनय करनेवालेको देख और भी अविनीत बनके गच्छमर्यादाका लोप करता जावेगा. (व्यवहारसूत्र.)

शरीरबल, संहनन, मनकी मजबुती—आदि अच्छा होनेसे पहले जमानेमें मासिक तपके ३० उपवास, चातुर्मासिकके १२० उपवास, छे मासीके १८० उपवास दीये जाते थे, आज बल, संहनन, मजबुती इतनी नहीं है; वास्ते उसके बदल प्रायश्चित्त दातावोंने ' जीतकल्प ' सूत्रका अभ्यास करना चाहिये, गुरुगमतासे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावका जानकार होना चाहिये. तांके सर्व साधु साध्वीयोंका निर्वाह करते हुवे, शासनका धोरी बनके शासन चलावे. (जीतकल्पसूत्र.)

निशिथसूत्रके लेखक—धर्मधुरंधर, पुरुष प्रधान प्रबल प्रता

पी, परम संवेग रंगमें रंगे हुवे, अखिलाचारी, ज्ञान, दर्शन, चारित्र संयुक्त, पांच समिति समिता, तीन गुप्ति गुप्ता, सत्तरा प्रकारका संयम, बारह भेद तप, दश प्रकारके यतिधर्मका धारक, चरण, करण प्रतिपालक, जिन्हों महा पुरुषोंकी कीर्त्तिकि ध्वनि, गगन- मंडलमें गर्जना कर रही थी, जिन्होंके स्याद्वादके सिंहनादसे वादी रुप गज—हस्ती पलायमान होते थे, जिन्होंका सम्यक् ज्ञानरुप सूर्य, भूमंडलके अज्ञानरुप अन्धकारका नाश कर भव्य जीवोंके हृदय—कमलमें उद्योत कर रहा था, जिन्होंकी अमृत- मय देशनारुप सुधारससे आकर्षित हुवे चतुर्विध संघरुप भ्रम- रोंके सुस्वरसे नीकलते हुवे उज्वल यशरुप गुंजार शब्दका ध्वनि, तीन लोकमें व्याप्त हो रहा थी, ऐसे श्री वैशाखागणि आचार्य महाराजने स्व-पर आत्मावोंके कल्याण निमित्त. इस महा प्रभा वक लघु निशिथसूत्रकों लिखके अपने शिष्यों, परशिष्योंपर बहुत उपकार कीया है. इतनाही नहि बल्के वर्त्तमान और भविष्यमें होनेवाले साधु साध्वीयों पर भी बडा भारी उपकार कीया है.

इति श्री निशिथसूत्र — वीशवा उद्देशाका संक्षिप्त सार.

इति श्री लघु निशिथसूत्र—समाप्त.

इति श्री शीघ्रबोध भाग २२ वां

समाप्त.

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पु० नं० ६७-६८-६९

ॐ

शीघ्रबोध भाग २३-२४-२५ वां.

संग्राहक-

मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी

मुद्रक—
मूलचन्द किसनदास कापड़िया
'जैनविजय' प्रि० प्रेस-खपाटिया चकला, सूरत।

श्रीरत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पुष्प नं० ६७-६८-६९.

श्री सयंप्रभसूरीसद्गुरुभ्यो नमः

अथश्री

शीघ्रबोध भाग २३-२४-२५

संग्राहक-

श्रीमदुपकेश (कमला) गच्छीय मुनि
श्री ज्ञानसुन्दरजी (गयवरचन्दजी)

द्रव्य सहायक-

श्रीसंघ-फलोधी-सुपनोंकि आवादानीसे

प्रबन्धकर्ता-

शाहा मेघराजजी मोणोयत-मु० फलोधी।

प्रथमावृत्ति १०००] [वीर सं० २४४८.

विक्रम सं० १९७९.

प्रकाशक-
मेघराज मुणोत-फलोधी (मारवाड)

प्रकाशक-
मूलचन्द किसनदास कापड़िया
'जैनविजय' प्रि० प्रेस-खपाटिया चकला सूरत।

विषयानुक्रमणिका ।

(१) शीघ्रबोध भाग २१ वां

नं०	सूत्र	शतक	उद्देशो	विषय	पृष्ट
(१)	श्री भगवतीजी	२४	२४	(१) गमाधिकार	१
(२)	,,	,,	,,	(२) ,,	२१

(२) शीघ्रबोध भाग २४ वां

(१)	श्री भगवतीजी सूत्र	२१-८०	वनास्पति	१
(२)	,,	२२-६०	,,	७
(३)	,,	२३-५०	,,	९
(४)	,,	२५- ४	कालाधिकार	१०
(५)	,,	२५- ४	अल्पा बहुत्व	१२
(६)	,,	२५- ७	संयति	१६
(७)	,,	२५- ८	नरकादि	१७
(८)	,,	३१-२८	खुलक युम्मा	१९
(९)	,,	३२-२८	,,	३१
(१०)	,,	३३-१२४	एकेन्द्रिय शतक	३५
(११)	,,	३४-१२४	श्रेणी शतक	३६
(१२)	,,	३५-१३२	एकेन्द्रि महायुम्मा	४४
(१३)	,,	३६-१३२	बेन्द्रिय ,,	५०
(१४)	,,	३७-१३२	तेन्द्रिय ,,	५२
(१५)	,,	३८-१३२	चौरिंन्द्रिय ,,	५३
(१६)	,,	३९-१३२	असंज्ञीपांचे०,,	५४

(१७)	,,	४०-२३१	संज्ञी पांचे०,,	५१
(१८)	,,	४१-१९६	रासीयुम्मा	६१
(१९)	,,	समाप्ती		६६

(३) शीघ्रबोध भाग २५ वां।

(१)	श्री भगवतीजी सूत्र	१-१	चलमाणे	१
(२)	,,	१-१	पैतालीस द्वार	५
(३)	,,	१-१	ज्ञानादि प्रश्न	१२
[४)	,,	१-४	आस्तित्व	१७
(५)	,,	१-४	वीर्याधिकार	१९
(६)	,,	१-६	सूर्य उदय	२२
(७)	,,	१-७	सर्वसे सर्व	२५
(८)	,,	१-७	गति	२८
(९)	,,	७-१	आहारधिकार	३२
(१०)	,,	७-१	अकर्मीको गति	३६
(११)	,,	७-२	प्रत्याख्यानाधिकार	४०
(१२)	,,	७-६	आयुष्य कर्म	५६
(१३)	,,	७-७	कामभोग	५९

ॐ

श्री देवगुप्तसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथश्री

शीघ्र बोध भाग २१ वां

कल्याणपाद पारामं श्रुत गङ्ग हिमाचलम् ।
विश्व त्रये शितारं च तं वन्दे श्रीज्ञातनन्दनम् ॥१॥

थोकड़ा नम्बर १

सूत्रश्री भगवतीजी शतक २४ वां

(गमाधिकार)

वर्तमान अंग अपेक्षा भगवतीसूत्र महात्ववाला माना जाता है इसी माफीक भगवती सूत्रके इगतालीस शतकमें चौवीसवा गमानामका शतक महात्ववाला है। इस चौवीसवा शतकका अधिकार सामान्य बुद्धिवालोंके लिये बडा ही दुर्गम्य है, तद्यपि इस कठिन अधिकारकों थोकड़ारूपमें सरल और इतना सुगमतासे लिखेगे कि पाठकगण स्वल्प परिश्रमद्वारा इस गंभिर रहस्यवाला संबन्धकों सुख पूर्वक समझके अपनी आतमाका कल्याण कर शके। इस गमाधिकारके मौख्य आठ द्वार बतलाया जावेगा। यथा—

(१) गमाद्वार (२) ऋद्धिद्वार (३) स्थानद्वार (४) जीवद्वार (५) अगतिस्थानद्वार (६) भवद्वार (७) गमासंख्याद्वार (८) नाणान्ताद्वार ।

आठद्वारोंका विवरण ।

(१) **गमाद्वारा**=एक ही गति तथा जातिके अन्दर भवापेक्षा तथा कालापेक्ष गमनागमन करते है उसे गमा कहते है जिस्का नौ भेद है । जेसे मनुष्य, रत्नप्रभा, नरकके अंदर, गमनागमन करे तों भवापेक्षा जघन्य दोयभव उत्कृष्ट आठ भव करे और कालापेक्षा नव गमा होता है यथाः–

(१) " ओघसे ओघ " ओघ कहते है । समुच्चयकों जिसमें जघन्य और उत्कृष्ट दोनों समावेश हो शकते है, भवापेक्ष जघन्य दोयभव (एक मनुष्यका दुसरा नरकका) कालापेक्षा प्रत्यक मास और दश हजार वर्ष और उत्कृष्ट आठ भव करते है कालापेक्षा च्यार कोड पूर्व और च्यार सागरोपम, यह प्रथम गमा हूवा ।

(२) " ओघसे जघन्य " मनुष्यका जघन्य उत्कृष्ठ काल और नरकका जघन्य काल जेसे दो भव करे तों जघन्य प्रत्यक मास और दश हजार वर्ष उत्कृष्ट आठ भव करे तों च्यारकोड पूर्व वर्ष और चालीस हजार वर्ष यह दुसरा गमा ।

(३) " ओघसे उत्कृष्ठ " जघन्य दो भव करे तों प्रत्यक मास और एक सागरोपम उत्कृष्ट च्यारकोड पूर्व और च्यार सागरोपम यह तीसरा गमा हुवा ।

(४) " जघन्यसे ओघ " जघन्य दो भव करे तों प्रत्यक मास और दश हजार वर्ष उत्कृष्ट आठ भव करे तों च्यार प्रत्यक मास और च्यार सागरोपम यह चोथा गमा ।

(५) " जघन्यसे जघन्य " ज० दो भव० प्रत्यकमास और दश हजार वर्ष उ० च्यार प्रत्यक मास और चालीस हजार

वर्ष यह पांचवा गमा हुवा ।

(६) " जघन्यसे उत्कृष्ट " ज० दो भव० प्रत्यक मास और एक सागरोपम उत्कृष्ट आठ भव करे तो च्यार प्रत्यक मास और च्यार सागरोपम यह छठा गमा हुवा ।

(७) " उत्कृष्टसे ओघ " उ० दो भव० कोडपूर्व और दश हजार वर्ष उ० च्यार कोड पूर्व च्यार सागरोपम यह सातवा गमा हुवा ।

(८) " उत्कृष्टसे जघन्य " ज० दो भव० पूर्वकोड और दश हजार उ० च्यार कोड पूर्व और चालीस हजार वर्ष यह आठवा गमा हुवा ।

(९) " उत्कृष्टसे उत्कृष्ट " ज० दोभव० कोड पूर्व और एक सागरोपम० उ० च्यार पूर्वकोड और च्यार सागरोपम यह नौवा गमा हुवा ।

कमसे कम प्रत्यक मासका और ज्यार पूर्वकोडवाला मनुष्य रत्नप्रभा नरकमे जा सक्ता है वह नरकमे जघन्य दश हजार वर्ष उ० एक सागरोपम आयुष्य पाता है तथा मनुष्य और रत्नप्रभा नरकके लगेतार भव करें तो जघन्य दोय भव उत्कृष्ट आठ भव, जिस्मे च्यार मनुष्यका और च्यार नारकीका इसका नव गमा होता है । कालमान उपर नवगमामें लिखा है । इसी माफीक सर्व स्थानपर समझना ।

(२) **ऋद्धिद्वार**–जेसे यहासे मनुष्य मरके नरक जाता है [illegible] २० द्वार बतलाया जाता है यथा ।

(१) उत्पात=जीव नरकादि गतिमें उत्पन्न होता है वह। कहासे जाता है जेसे रत्नप्रभा नरकमे जानेवाला, मनुष्य तीर्यंच हैं.

(२) परिमाण–एक समयमें कितने जीव. जा–के उत्पन्न होताहै

(३) संहनन–कितने संघयण वाला जाके ,,
(४) अवगहाना–कितनि अवगहान वाला. ,,
(५) संस्थान=कितना संस्थानवाला. ,,
(६) लेश्या=कितनी लेश्यावाला ,,
(७) द्रष्टी=कितनी द्रीष्टी वाला ,,
(८) ज्ञान–कितने ज्ञानाज्ञान वाला ,,
(९) योग–कितने योगवाला जीव ,,
(१०) उपयोग–कितने उपयोगवाला ,,
(११) संज्ञा–कितने संज्ञावाला ,,
(१२) कषाय–कितनि कषायवाला ,,
(१३) इन्द्रिय–कितनि इन्द्रियवाला ,,
(१४) समुग्घातवा–कितनी समु० वाला ,,
(१५) वेदना–कितनी वेदनावाला ,,
(१६) वेद–कितनी वेदवाला ,,
(१७) स्थिति–कितनि स्थितिवाला ,,
(१८) अध्यवशाया–केसे अध्यशायवाला ,,
(१९) अनुबन्ध=कितना अनुबन्धवाला ,,
(२०) संमहो–कितना भव और काल लागे ,,

प्रत्यक जातिका जीव प्रत्यक गति जातिमें उत्पन्न होता है वह यह २० बोलोंकि ऋद्धि साथमें ले जाता है। इस विषयमें क्रमसे कम लघु दंडकका जानकार आवश्य होना चाहिये तांके प्रत्यक बोलपर पूर्वोक्त २० बोल स्वयं लगा शके।

(३) **स्थानद्वार**–प्रत्येक जातिमें जीव उत्पन्न होता है वह कितने स्थानसे आता है वह सब स्थान कितने है वह बतलाते है।

७ सात नरकके सात स्थान	१ व्यान्तर देवोंका एक स्थान
१० दश भुवनपतियोंके दश,,	१ ज्योतीषी देवोंका एक स्थान
५ पांच स्थावरके पांच स्थान	१२ बारह देवलोकोंका बारह स्थान
३ तीन वैकलेन्द्रियके तीन,,	१ नौग्रवैगका एक स्थान
१ तीर्यच पांचेन्द्रियके एक,,	१ च्यार अनुत्तर वैमानका एक,,
१ मनुष्यका एक स्थान ,,	१ सर्वार्थसिद्ध वैमानका एक,,

सर्व मीलके ४४ स्थान होता है।

(४) **जीवद्वार**–जीव अनन्ते है जिस्मे संसारी जीवोंके संक्षेपसे ५६३ भेद बतलाया है परन्तु यहापर सप्रयोग्य ४८ जीवोंको ग्रहन किया है यथा ४४ तीसरे द्वारमे जो स्थान बतलाये है इतनेही यहांपर जीव समझ लेना। सिवायः–

१ असंज्ञी तीर्यच पांचेन्द्रिय।	एवं ४८ जीव है।
१ असंज्ञी मनुष्य चौदास्थानकिया।	
१ तीर्यच युगलीया (अकर्म भूमि)	
१ मनुष्य युगलीया (अकर्म भूमि)	

(५) **आगतिके** स्थानद्वार–पूर्वोक्त ४४ स्थानमें आ–के

उत्पन्न होते है वह प्रत्येक स्थानके जीव कितने कितने स्थानसे आते है यथा—

१ रत्नप्रभा नरकमें संज्ञी मनुष्य, संज्ञी तीर्यंच, असंज्ञी तीर्यंच यह तीन स्थानसे आते है।

१२ शेष छे नरकमें संज्ञी मनुष्य, संज्ञी तीर्यंच यह दोय स्थानसे आके उत्पन्न होते हैं।

५५ दश भुवनपति एक व्यान्तर एवं ११ स्थानमें संज्ञी मनुष्य, संज्ञी तीर्यंच, असंज्ञी तीर्यंच. मनुष्य युगलीया, तीर्यंच युगलीया एवं पांच पांच स्थानसे आके उत्पन्न होते है।

७८ पृथ्वी पाणी वनास्पति एवं तीन स्थानमें चौवीस दंडक और असंज्ञी मनुष्य असंज्ञी तीर्यंच एवं छवीस स्थानोसे आते है। यद्यपि चौवीस दंडकके बाहार संसारी जीव नही है परन्तु प्रथम सप्रयोजन मनुष्य तीर्यंचके दंडकमें संज्ञी जीवोंकों गृहन कर यह असंज्ञीकों अलग गीना है।

६० तेउ वायु तीन वैकलेन्द्रि एवं पांच स्थानमें पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय संज्ञी मनुष्य, तीर्यंच, असंज्ञी मनुष्य, तीर्यंच, एवं बारह बारह स्थानोंसे आके उत्पन्न होता हैं ५-१२=६०

३९ तीर्यंच पांचेन्द्रियमें. सातनरक. दशभुवनपति, व्यन्तर जोतिषी. आठदेवलोक. पांचस्थावर, तीनवैकलेन्द्रिय. संज्ञीमनुष्य. तीर्यंच असंज्ञी मनुष्य. तीर्यंच एवं ३९ स्थानसे आ-के उत्पन्न होता है।

४३ मनुष्यमें छे नारकी, दश भुवनपति, एक व्यन्तर, जोतीषी, बारहादेवलोक, एकनौग्रीवैग, एकच्यारानुत्तरवैमान, एक

सर्वार्थ सिद्ध वैमान, पृथ्वी पाणी वनास्पति तीन वैकलेन्द्रिय संज्ञी मनुष्य, तीर्यंच, असंज्ञी मनुष्य, तीर्यंच एवं ४३ स्थानोंसे आके उत्पन्न होता है।

१२ जोतीषी. सौधर्म. इशान एवं तीन स्थानोंमें. संज्ञी मनुष्य. तीर्यंच. मनुष्य युगलीया, तीर्यंच युगलीया. एवं चार चार स्थानसे आते है।

१२ तीजा देवलोकसे आठ वा देवलोक तकके छे स्थानमें संज्ञी मनुष्य संज्ञो तीर्थंच एवं दो दो स्थानसे आते है।

७ च्यार देवलोक (९-१०-११-१२ वां) एक नौग्रीवैगका, एक च्यारानुत्तर वैमानका, एकसर्वार्थसिद्ध वैमानका एवं ७ स्थानमें एक संज्ञी मनुष्यका ही आयके उत्पन्न होता है।

एवं सर्व मीलाके ३११ स्थान हुवे इति।

(६) **भवद्वार**—कोनसा जीव कितने स्थानमें जाते है वह वहांसे कितनि स्थिति वाला जाते है वहांपर कितनि स्थिति पाते है तथा जाने अपेक्षा और आने अपेक्षा कितने कितने भव करते है।

(१) असंज्ञी तीर्थच पांचेंद्रिय मरके वैक्रय शरीर धारक बारह स्थान, पेहली नरक, दश भुवनपति, व्यंतरमें जाते है। यहांसे जघन्य अन्तर मुहूर्त, उत्कृष्ट कोड पूर्व वाला जाता है वहांपर जघन्य (१००००) वर्ष उ० पल्योपमके असंख्यातमें भाग कि स्थितिमें जाते है, भव जघन्य तथा उत्कृष्ट दोय भव करते है, यहांसे असंज्ञी मरके जाता है वह एक भव, वहांपर भी एक भव करते है। उक्त १२ स्थानवाला पीच्छा असंज्ञी तीर्यच पांचेंद्रियमे

नहीं आता है, वास्ते दोय ही भव करता है। शेष नौ गमा और बीसद्वार ऋद्धिका पहला दुसरा द्वारसे स्वमति लगा लेना चाहिये।

(२) संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय मरके वैक्रय शरीर धारी २७ स्थानमें जावे-यथा सात नरक, दश भुवनपति, व्यंतर, ज्योतीषी पहलासे आठवा देवलोक तक, यहांसे जघन्य अंतर महुर्त उ० कोड पुर्व, वहांपर अपने अपने स्थानकि जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति पावे भवापेक्षा २१ स्थानमें जघन्य २ भव उ० ८ भवसो. दोयभव, एक यहांका एक वहांका, उत्कृष्टआठ च्यार यहांका च्यार वहांका, सातवी नरकमें जानेकि अपेक्षा छे गमामें (तीजो छटो नौमो वर्जके) ज० तीनभव उ० सात भव करे। अने कि अपेक्षा ज० दोय उ० छे भव करे और तीन गमा पेक्षा जानेमें ज० ३ भव उ० ५ भव, आनापेक्षा जघन्य दोय भव उ० च्यार भव करे। भावार्थः-

सतावी नरककि उत्कृष्ट स्थिति ३३ सागरोपमका भव करे तो दोय भवसे अधिक न करे। ओर जघन्य बावीस सागरोपमके भव करे तों तीन भवसे अधिक नही करे वास्ते ३-७+२-६+३ ५+२-४ भव कहा है।

(३) मनुष्य मरके, पहली नरक, दश भुवनपति व्यन्तर ज्योतीषी, सौधर्म, इशान देवलोक एवं १५ स्थानमें जावे, यहांसे जघन्य प्रत्यक मास और उत्कृष्ट कोड पुर्व कि स्थितिवाला जावे वहांपर अपने अपने स्थान कि जघन्योत्कृष्ट स्थिति पावे। भव जघन्य दोय उत्कृष्ट आठ करे।

(४) मनुष्य मरके शार्करप्रभादि छे नरक, तीसरासे बारहवा देवलोकतक दश देवलोक, एक नौग्रीवेग, एक च्यारानुत्तर वैमान. एक सर्वार्थसिद्ध वैमान एवं १९ स्थानमें जावे वहांसे स्थिति जघन्य प्रत्यक वर्ष कि उ० कोड पूर्व कि,वहांपर जघन्योत्कृष्ट अपने अपने स्थान माफीक समझना। भवापेक्षा पांच नरक(२–३–४–५–६ ठी) और छे देवलोक (३–४–५–६–७–८ वां)में ज० २ भव उ० आठ भव करे। सातवी नरकका जघन्योत्कृष्ट दोय भव कारण सातवी नरकसे निकलके मनुष्य नही होवे। च्यार देवलोक (९–१०–११–१२ वां) और नौग्रीवेगमें ज० तीन भव उ० सातभव, च्यारानुत्तरवैमानमें ज० तीन भव उ० पांच भव सर्वार्थसिद्ध वैमानमें जाने अपेक्षा तीन भव आने अपेक्षा दो भव करे।

(५) दश भुवनपति, व्यन्तर, ज्योतीषि, सौधर्म इशान देवलोकके देवता मरके, पृथ्वी पाणी वनस्पतिमें जावे, यहांसे स्थिति ज० उ० अपने २ स्थानसे समझना। वहां पर भी अपने अपने स्थान माफीक भवापेक्षा ज० दोय भव उत्कृष्टभि दोय भव करे। कारण पृथ्व्यादिसे निकलके देवता नही होते हैं।

(६) मनुष्य युगल और तीर्यंच युगल मरके, दशभुवनपति, व्यन्तर, ज्योतीषी, सौधर्म, इशान, एवं १४ स्थानमें उत्पन्न होते है, वहांसे स्थिति जघन्य साधिक कोड पूर्व उ० तीन पल्योपम, वहांपर ज० दशहजार वर्ष उ० असुर कुमारमें तीन पल्योपम, नागादि नव कुमारमें देशोनी दोयपलोपम, व्यन्तरमें एक पल्योपम ज्योतीषीमें जावे तों यहासे ज० पल्योपमके आठमा भाग उ०

तीन पल्योपम, वहांपर ज० पल्योपमके आठमे भाग, उ० एक पल्योपम लक्षवर्ष साधिक, सौधर्म देवलोकमें जावे तो यहांसे ज० एक पल्योपम और इशान देव लोकमें साधिक एक पल्योपम उ० तीन पल्योपमवाला जावे वहां पर भी ज० उ० इसी माफीक स्थिति पावे। भवापेक्षा जघन्योत्कृष्ट दोय भव करे। भावार्थ युगलीया कि जीतनी स्थिति हो उससे अधिक स्थिति देवलोकमें नहीं मीलती है और देवतोंसे पीच्छा युगलीया नहीं होते है वास्ते दोय भव करते है।

(७) पांच स्थावर मरके पांच स्थावरमें जावे स्थिति यहांसे तथा वहांपर अपने अपने स्थान माफीक पावे। भव च्यार स्थावरमें जावे तो ज० दोय भव। उ० असंख्याते भव करे। काल ज० दोय अन्तर महुर्त उ० असंख्यत काल। पांच स्थावर वनास्पतिमें जावे तो ज० दोय भव।

उ० अनन्ते भव करे। काल ज० दोय अन्तर महुर्त उ० अनन्तो काल लागे। एवं आने अपेक्षा भी समझना।

(८) पांच स्थावर मरके तीन वैकलेन्द्रियमें जावे तो भव ज० दोय भव उ० संख्याते भव करे। काल ज० दोय अन्तर महुर्त उ० संख्यातो काल लागे। स्थिति यहांसे तथा वहांपर स्व स्व स्थानकि समझना। एवं आने अपेक्षा।

(९) पांच स्थावर मरके तीर्यंच पांचेन्द्रिय तथा मनुष्यमें जावे। स्थिति स्व स्व स्थान प्रमाणे। भव ज० दोय उ० आठ भव करे। एवं आने अपेक्षा। काल ज० दोय अन्तर महुर्त उ० दोनों स्थानकि उत्कृष्ट स्थितिसे भिन्न भिन्न उपयोगसे कहना।

(१०) तीन वैकलेन्द्रिय मरके पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्यमें जावे । स्थिति वहांकि तथा वहांकि स्व स्व स्थान माफीक । भव च्यार स्थावरमें । असंख्याते तीन वैकलेन्द्रियमें संख्याते । वनास्पतिमें अनन्ते । तीर्यंच पांचेन्द्रिय तथा मनुष्यमें आठ भव और जघन्य सब स्थान पर दोय भव समझना । काल स्वस्व स्थानकि जघन्य उत्कृष्ट स्थिति प्रमाणे समझना ।

(११) तीर्यंच पांचेन्द्रिय मरके दश स्थान=पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंच पांचेन्द्रिय और मनुष्यमें जावे स्थिति पूर्ववत् भव ज० दोय उत्कृष्ट आठ भव करे काल पूर्ववत् निजोपयोगसे समझना ।

(१२) मनुष्य मरके, तीनस्थावर, तीनवैकलेन्द्रिय, तीर्यंच पांचेन्द्रिय, मनुष्य एवं आठ स्थानमे जावे । स्थिति पूर्ववत् भव ज० दोय उ० आठ भव करे ।

(१) मनुष्य मरके तेउकाय वायुकायमे जावे स्थिति पूर्ववत् भव ज० उ० दोय भव करे । कारण तेउ वायु मरके मनुष्य न होवे ।

नोट—ऊपर वैकलेन्द्रियमें उत्कृष्ट संख्यातेभव च्यार स्थावरमें असंख्याते और वनस्पतिमें अनन्ते भव जो कहा है वह पहला दुसरा चोथा पांचवा यह च्यार गमाकि अपेक्षा है शेष ३–६–७–८–९ इस पांच गमामें जघन्य दोय भव उ० आठ भव करते है ।

(७) **गमा संख्याद्वार**–प्रथम द्वारमें नौ गमा बतलावे है, कोनसा जीव मरके कितने स्थानमें जाते है, मृत्युस्थान और उत्पन्न स्थानमें कितने भवतक गमनागमन करते है उस्मे कितना काल लगता है, जिस्का अलग अलग कितना गमा होते है वह इस सातवा द्वारसे बतलाया जावेगा।

जघन्य दोय भव और उत्कृष्ट दोय भवके गमा ७७४। जघन्य उत्कृष्ट दोय भवके स्थान कितने है।

११ असंज्ञी तीर्यंच पहली नरक, दशभुवनपति, व्यन्तर इस ११ स्थान जाते है वहां जघन्योत्कृष्ट दोय भव करते है।

१८ मनुष्य युगल, दश भुवनपति व्यन्तर ज्योतीषी सौधर्म इशान देवतावोंमें जाते है वहां ज० उ० दोय भव करते है। इसी माफीक तीर्यंच युगलीया भी समझना दोनोंका अठावीस स्थान।

४२ दश भुवनपति, व्यन्तर, ज्योतीषी, सौधर्म, इशान यह चौद स्थानके जीव मरके पृथ्वी, पाणी, वनास्पतिमें जाते है वहां ज० उ० दोय भव करते हैं चौदाकों तीन गुणे करनेसे ४२ होता है।

३ मनुष्य मरके, तेउकाय, वायुकायमें जाते है वहां ज० उ० दोय भव करते है तथा मनुष्य सातवी नरकमें भी ज० उ० दोय भव करते है एवं तीन स्थान।

एवं ८५ स्थान हुवे। प्रत्यक स्थानके नौ नौ गमा करनेसे ७६५ तथा सर्वार्थसिद्ध वैमानसे आने अपेक्षा दोय भव करते है जिस्का तीन गमा कारण वहाँ स्थिति उत्कृष्ट होती है (७–८–९ गमा) और असंज्ञी मनुष्य मरके तेउ कायमें तथा

वायु कायमें जाते है वहां भी दोय भव करते है परन्तु असंज्ञी मनुष्यकि जघन्य स्थिति होनेसे गमा (४–५–६) तीन तीन ही होता है ७६५–३–६ सर्व मीलाके ७७४ गमा होता है ।

जघन्य दोयभव उत्कृष्ट आठ भवके गमा १६४१ होते है इसके स्थानोंका विवरण, यथाः–

२६ संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय मरके सतावीस स्थान जाते है जिस्मे एक सातवी नरक वर्जके शेष २६ स्थान ।

१५ मनुष्य मरके १५ स्थान जावे देखो छठा द्वारसे ।

११ मनुष्य मरके १९ स्थानमें जावे जिस्में २-३-४-५-६ ठो नरक तथा ३–४–५–६–७–८ वा देवलोक एवं ११ स्थान जावे ।

एवं ५२ स्थान जाने अपेक्षा और ५२ स्थान पीच्छा आने अपेक्षा सर्व १०४ स्थानमें ज० दोय भव उ० आठ भव करे प्रत्यक स्थानपर नौ नौ गमा होनेसे ९३६ गमा हूवे ।

पृथ्वीकाय मरके पृथ्वीकायमें जावे जिस्में पांच गमामें ज० दोय भव उ० आठ भव करते है एवं शेष च्यार स्थावर तीन वैकलेन्द्रियका पांच पांच गमा गीननेसे ४० गमा होते हैं। संज्ञी मनुष्य संज्ञी तीर्यंच असंज्ञी तीर्यंच मरके पृथ्वीकायमें जावे वहाँ ज० दोय उ० आठभव जिस्के नौ नौ गमा और असंज्ञी मनुष्य पृथ्वीकायमें जावे भव ज० दोय उ० आठ करे परन्तु जघन्य स्थिति होनेसे तीन गमा (४–५–६) होता है एवं ३० गमा तथा ४० पेहलाके एवं ७० गमा पृथ्वीकायके हुवे इसी माफीक

शेष च्यार स्थावर तीन वैकलेन्द्रियके गुननेसे ९६० गमा होता है परन्तु संज्ञो मनुष्य असंज्ञी मनुष्य मरके तेउ कायमें जावे जीसका ९-३ बारहा गमा ज० उ० दोयभवमें गीना गया है वास्ते तेउ कायका १२ वायुकायके १२ एवं २४ गमा यहां पर बाद करनेसे ९३६ गमा शेष रहते है।

पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय मरके तीर्यंच पांचेन्द्रियमें जावे जिस्के प्रत्यकके नौ नौ गमा होनेसे ७२ गमा हुवा। संज्ञी मनुष्य संज्ञी तीर्यंच, असंज्ञीतीर्यंच मरके तीर्यंच पांचेन्द्रियमें जावे जिस्का सात सात गमासे २१ तथा असंज्ञी मनुष्यके तीन मीलाके २४ गमा हुवा, पूर्वके ७२ मीलानेसे ९६ गया।

एवं मनुष्यके भी ९६ गमा होता है परन्तु तेउकाय वायु-काय मरके मनुष्यमें नहीं आवे वास्ते उन्होंका १८ गमा बाद करनेसे ७८ गमा होते है।

एवं ९३६-५३१-९६-७८ सर्व मिलके ११४६ गमों अन्दर जघन्य दोभव उत्कृष्ट आठ भव करते है।

जघन्य दोय भव उ० संख्याते असंख्याते अनन्ते भवके गमा २५१ होते है जिसके विवरण।

पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय मरके पृथ्वी कायमें जाते है तब १-२-४-५ वा इस च्यार गमामें वैकलेन्द्रियसे संख्याते च्यार स्थावरसे असंख्याते, बनास्पतिसे अनन्ते भव करते है आठों बोलसे ३२ गमा एक पृथ्वीकायके स्थानका होता है इसी माफक पांच स्थावर तीन वैकालेन्द्रिका भी लाके १५६ गमा हुवा।

ज० १ उ० ७ भवके गमा १०२। च्यार वैमान तथा सातवी नरक एवं ५ स्थानके नौ नौ गमा होनेसे ४५ और तीर्यंच सातवी नरक (२७ स्थानसे २६ पूर्व गीना) जावे उसका ६ गमा एवं ५१ जाने अपेक्षा और ५१ गमा भी आनेकि अपेक्षा एवं १०२ गमा हुवा।

ज० १ भव उ० १ भव तथा ज० २ भव उ० ४ भवके गमा १७ है यथा च्यारानुत्तर वैमान मे जानेका ९ गमा तीर्यंच सातवी नरक जानेका ३ एवं १२ तथा पीच्छा आनेका १२ एवं २४ और सर्वार्थसिद्ध वैमनका ३ गमा एवं सर्व १७ गमा हुवा।

सर्व ७७४-१६४६-२५६-१०२-१७ कुल २८०५ गमा हुवे। और ८४ गमा तुटते है जिसका विवरण इस मुजब है।

६० असंज्ञी मनुष्य पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंच पांचेन्द्रिय, और मनुष्य इस १० स्थानपर असंज्ञी मनुष्य कि जघन्य स्थियि होनेसे ४-५-६ यह तीन तीन गमा गीना जानेसे शेष छे छे गमा तुटा दश स्थानके ६० गमा होता है।

१२ सर्वार्थ सिद्ध वैमानके देवतोंकि उत्कृष्ट स्थिति होनेसे आते जातेके तीन तीन गमा गीना गया है वास्ते छे छे गमा तुटा एवं १२ गमा हुवा।

१२ ज्योतीषी सौधर्म इशान इस तीन स्थानमें मनुष्य युगलीया तथा तीर्यंच युगलीया आनेकि अपेक्षा सात सात गमा गीना गया है वास्ते दो दो गमा तुटनेसे तीन स्थानके ६ गमा मनुष्यका, छे गमा तीर्यंचका, एवं बारह गमा तुटा ६०-१२-१२

एवं कुल ८४ गमा तुटे वह पूर्वलोंके साथ मीला देनेसे सर्व मीलके २८०१-८४-२८८९ गमा हवे इति ।

२८८९, गमा हुवे है इसपर जो दुसरेद्वारमें ऋद्धिके बीसद्वार प्रत्यक बोलमें लगानेसे कीस कीस बोलमें तरतमता रहेती है उस्कों शास्त्रकारोंने ' नाणन्त कहा है ।

(८) **नाणन्ताद्वार**-सामान्य प्रकारे एक जीव मरके कीसी भी स्थानमें जाता है उसके नौ गमा होता है जब प्रथम गमा पर दुसरेद्वारके बीसद्वारोंकि ऋद्धि लगाई जाती है शेष आठ गमा रहेते है, तों प्रथम गमाकी ऋद्धिमें और शेष आठ गमामें क्या तरतम है वह इस नाणन्ता द्वारसे बतलावेगा ।

(१) असंज्ञी तीर्यंच मरके बारह स्थानमें जाता है जिसमें नाणन्ता पांच पांच है जघन्य गमा तीन नाणन्ता तीनतीन (१) आयुष्य अन्तर महुर्त (२) अनुबन्ध अन्तर महुर्त (३) अध्यवशाय अप्रसस्थ, उत्कृष्ट गमा तीन नाणन्ता दो दो (१) आयुष्य पूर्व कोडका (२) अनुबन्ध पूर्वकोडका एवं बारह स्थानमें पांच पांच नाणन्ता होनेसे सब ६० नाणन्ता हुवा ।

(२) संज्ञी तीर्यंच मरके २७ स्थानमें जाता है नाणन्ता दश दश है । जघन्य गमा तीन नाणन्ता आठ आठ (१) अवगाहाना ज० अंगुलके असंख्यातमें भाग उ० प्रत्यक धनुष्य (२) लेश्या नरकमें जानेवालोंमें तीन तथा देवलोंकमें जानेवालोमें च्यार तथा पांच (३) दृष्टी एक मिथ्यात्वकि (४) ज्ञानन ही किंतु अज्ञान दोय (५) योग एक कायाका (६) आयुष्य अन्तर महुर्तका

(७) अनुबन्ध अन्तरमहुर्तका, (८) अध्यवसाय नरकमें जानेवालोंका अप्रसस्थ, देवतोंमें जानेवालोंका प्रसस्थ, एवं ८। उत्कृष्ट गमा तीन नाणन्ता दो दो (१) आयुष्य पूर्वकोडका (२) अनुबन्ध भी पूर्वकोडका एवं २७ स्थानमें दश दश नाणन्ता होनेसे २७० परन्तु ६–७–८ वा देवलोकमें लेश्याका नाणन्ता नहीं होनेसे २७० से तीन बाद करनेसे २६७ नाणन्ता हुआ।

(३) मनुष्य मरके १५ स्थानमें जाता है। नाणन्ता आठ है, जघन्य गमा तीन नाणन्ता पांच पांच (१) अवगाहाना ज० अंगुलके असंख्यातमें भाग उ० प्रत्यक अंगुलकी (२) तीन ज्ञान तीन अज्ञान कि भजना (३) समुद्घात तीन प्रथम कि (४) आयुष्य प्रत्यक मासका (५) अनुबंध प्रत्यक मासका, उत्कृष्ट गमा तीन नाणन्ता तीन तीन (१) अवगाहाना पांचसो धनुष्यकि (२) आयुष्य कोड पूर्वका (३) अनुबंध कोड पूर्वका एवं १५ स्थानमें आठ आठ नाणन्ता होनेसे १२० नाणन्ता हुवा।

(४) मनुष्य मरके १९ स्थानोंमें जावे नाणन्ता छे छे। ज० गमा तीन नाणन्ता तीन तीन (१) अवगाहाना प्रत्यक हाथकि (२) आयुष्य प्रत्यक वर्षका (३) अनुबंध प्रत्यक वर्षका। उ० गमा तीन नाणन्ता तीन तीन (१) अवगाहाना पांचसो धनुष्य (२) आयुष्य कोड पूर्वका (३) अनुबन्ध कोड पूर्वका एवं १९ कों छे गुना करनेसे ११४ नाणन्ता हुवा।

(५) तीर्यंच युगलीया मरके १४ स्थानमें जावे, नाणन्ता पांच पांच ज० गमा तीन नाणन्ता तीन तीन (१) अवगाहाना

भुवनपति व्यन्तरमें जावे तो ज० प्रत्यक धनुष्य कि उ० हजार योजन साधिक। ज्योतीषीमें जावे तों ज० प्रत्यक धनुष्य उ० १८०० धनुष्य. सौधर्म ईशानमें जावे तों ज० प्रत्यक धनुष्य उ० दोयगाउ तथा दोयगाउ साधिक (२) आयुष्य भुवनपति व्यन्तरमें जावे तों कोडपूर्व साधिक जोतीषीमें पल्योपमके आठमे भाग. सोधर्म इशानमें जावे तों एक पल्योपम तथा एक पल्योपम साधिक उ० तीनपल्योपम। (३) अनुबन्ध आयुष्यकी माफिक। उ० गमातीन नाणन्ता दो दो (१) आयुष्य तीन पल्योपमका (१) अनुबन्ध भी तीन पल्योपमका एवं १४ स्थानकों पांचगुने करनेसे ७० नाणन्ता हुवा।

(६) मनुष्ययुगलीया १४ स्थान जावे नाणन्ता छे छे। ज० गमा तीन नाणान्ता तीन तीन (१) अवगाहाना भुवनपति व्यन्तरमें जावे तों पांच सो धनुष्य साधिक. ज्योतीषोमें जावेतों ९०० धनुष्य साधिक. सौधर्म देवलोक जावे तों एक गाउ. इशांन देवलोक जावे तो साधिक एक गाउ (२) आयुष्य भुवनपति व्यंतरमें जावे तो साधिक कोड़ पूर्व. ज्योतीषयोंमें जावे तो पल्योपमके आठवा भाग. सौधर्म देवलोकमें जावे तो एक पल्योपम. इशांनमें साधिक पल्योपम (३) अनुबन्ध आयुष्य कि माफिक। उत्कृष्ट गमा तोन नाणन्ता तीन तीन (१) अवगाहाना तीनगाउ (२) आयुष्य तीन पल्योपम (३) अनुबन्ध आयुष्यके माफीक एवं चौदस्थानसे छे गुना करनेसे ८४ नाणन्ता हुवा।

(७) दश भुवनपति. व्यन्तर. ज्योतीषी. सौधर्म. ईशान

देवलोक यह चौदा स्थानकेदेव मरके पृथ्वी पाणी वनास्पतिमें आवे. नाणन्ता च्यार च्यार । ज० गमातीन नाणन्ता दो दो (१) स्वस्थानका जघन्य आयुष्य (२) अनुबन्ध आयुष्य माफीक, उत्कृष्ट गमा तीन नाणन्ता दो दो (१) स्वस्थानका उ० आयुष्य (२) अनुबन्ध आयुष्य कि माफिक एवं चौदाकों च्यार गुने करनेसे ५६ पृथ्वी कायका ५६ अपकायका ५६ वनास्पति कायका सर्व १६८ नाणन्ता हुवा ।

(८) पृथ्वीकाय मरके पृथ्वी कायमें उत्पन्न होते हैं नाणन्ता छे छे ज० गमातीन नाणन्ता च्यार च्यार (१) लेश्या तीन (२) अन्तर महुर्तका आयुष्य (३) अनुबन्ध अन्तर महुर्तका (४) अध्यवसाय अप्रसस्थ, उ० गमातीन नाणन्ता दो दो (१) आयुष्य २२००० वर्ष (२) अनुबन्ध २२००० वर्ष, एवं अपकाय परन्तु आयुष्य उत्कृष्ट ७००० वर्ष एवं तेउकाय परन्तु लेश्याका नाणन्त वर्जके पांच नाणन्तां है उ० आयुष्यानुबन्ध तीनरात्रीका एवं वायुकाय परन्तु समुद्घातका नाणन्त अधिक होनेसे ६ नाणन्ता है उ० आयुष्यानुबन्ध ३००० वर्ष एवं वनास्पतिकाय परन्तु नाणन्ता सात है जिसमें ६ तो पृथ्वीवत् (७) अवगाहना उ० प्रत्यक अंगुलकी है सर्व ३० नाणन्ता हुवा । तीनवैकलेन्द्रिय और असंज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय मरके पृथ्वी कायमें जावे जिसका नाणन्ता नौ नौ है ज० गमातीन नाणन्त सात सात (१) अवगाहना अंगुलके असंख्यातमें भाग (२) दृष्ठो मिथ्यात्वकि (३) अज्ञानदोय (४) योगकायाको (५) आयुष्य अन्तर महुर्तका (६)

अनुबंध अंतर महुर्तका (७) अध्यवसाय अप्रसस्थ। उ० गमातीन नाणन्ता दो दो (१) आयुष्य स्वस्त्र स्थानका उत्कृष्ट [२) अनुबंध आयुष्य माफीक। १६ नाणन्ता हुवा। संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय मरके पृथ्वी कायमें आवे जिस्का नाणन्ता ११ ज० गमातीन नाणन्ता नौ है ७ पूर्ववत् (८) लेश्यातीन (९) समुग्घाततीन उ० गमामें दो नाणन्ता पूर्ववत् एवं ११। संज्ञी मनुष्य मरके पृथ्वी कायमें आवे जिस्का नाणन्ता १२ ज० गमातीन नाणन्त नौ तीर्यंचवत उ० गमातीन नेणन्ता तीन (१) अवगाहाना पांचसो धनुष्य (२) आयुष्य पूर्वकोड (३) अनुबन्ध पूर्वकोडका एवं १२। एवं सर्व ३०–२६–११–१२ कुल ८९ एवं शेष च्यार स्थावर तीन वैकलेन्द्रियके ८९–८९, गीननेसे ७१२ नाणान्ता हुवा।

(९) पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय असंज्ञी तीर्यंच संज्ञी तीर्यंच संज्ञी मनुष्य मरके तीर्यंच पांचेन्द्रियमें जावे जिसके ८९ नाणन्ता तो पृथ्वीवत् समझना और १७ स्थान वैक्रयका तीर्यंचमें आवे जिस्का नाणन्ता च्यार च्यार है ज० गमातीन नाणन्ता दो दो (१) स्व स्वस्थानकी ज० स्थिति (२) अनुबंध आयुष्य माफीक उ० गमातीन नाणन्ता दो दो (१) स्व स्वस्थानका उत्कृष्ट आयुष्य (२) अनुबंध आयुष्य माफीक एवं १०८ तथा ८९ पूर्वक सर्व १९७।

(१०) तीन स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय तीर्यंच पांचेन्द्रिय मनुष्य मरके मनुष्यमें जावे जिस्का ८९ नाणन्तासे तेउ वायुका ११ बाद करतों ७८ नाणन्ता रहा और वैक्रयके ३२ स्थानके

जीव मनुष्यमें आवे जिस्का नाणन्ता च्यार च्यार ज० गमा तीन नाणन्ता दो दो (१) स्वस्व स्थानका ज० आयुष्य (२) अनुबंध आयुष्य मादीक । उ० गमातीन नाणन्ता दो दो (१) स्वस्व स्थानका उ० आयुष्य (२) अनुबन्ध आयुष्य माफीक एवं ११८ तथा पूर्वका ७८ मीलानेसे २०१ नाणन्ताहुवा ।

सर्व ६०-२६७-१२०-११४-७०-८४-१६८-७१२ १९७-२०६ कुल १९९८ नाणन्ता हुवा । इति ।

यह आठ द्वारोंसे गमाका थोकडा भव्यात्मावोंके कंठस्थ करनेके लिये संक्षिप्तसे सार लिखा है इस्के अन्दर ऋद्धिका २० द्वार है वह लघु दंडकादिसे स्व उपयोगसे सर्व प्रयोगस्थान पर लगालेना उसका विस्तार थोकडा नम्बर २में लिखा जावेगा परन्तु पेस्तर यह थोकडा कंठस्थ करलेनेसे आगेका सबन्ध सुख पूर्वक समझमें आते जावेंगा वास्ते हमार निवेदन है कि द्रव्यानुयोग रसीक भाइयोंको एसे अपूर्व ज्ञानकों कंठस्थ कर अपना नर भवकों अवश्य पवित्र बनानां चाहिये । किमधिकम्

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सचम् ।

थोकड़ा नं० २

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २४ वां

(गमाधिकार)

इस महान् गंभिर रहस्यवाला गमाधिकार समझनेमें सौख्य साहित्यरूप लघु दंडक है वास्ते प्रथम पाठक वर्गकों लघुदंडक कण्ठस्थ करलेना चाहिये ।

इस थोकडामें मौख्य दोय बातों प्रथम ठीक ठीक समझलेना चाहिये (१) गमा जीसका नौ भेद है (२) ऋद्धि जिस्का वीस द्वार है ।

(१) गमा—गति, जाति, के अन्दर गमनागमन करना जिस्मे भव तथा कालकि मर्यादा बतानेवालेकों गमा कहते है । जेसे तीर्यंच पांचेन्द्रि रत्नप्रभा नरकमें जावे तों जघन्य दोयभव एक तीर्यंचकों, दुसरो नरककों यह दोय भवकर नरकसे निकलके मनुष्यमें जावे । उत्कृष्ट आठ भव—च्यार तीर्यंचका, च्यारनरकका फीरतों अन्य स्थान (मनुष्यमें)में जाना हीपडे कारण तीर्यंच और रत्नप्रभा नरकके आठ भवसे अधिक नहीं करे । कालकि अपेक्षा तीर्यंच पांचेन्द्रियका ज० अन्तर मुहुर्त । उ० पूर्वकोड तथा नरकका ज० दशहजार वर्ष । उ० एक सागरोपमकि स्थिति है जिस्के नौगमा होता है यथा ।

(१) 'ओघसे ओघ' ओघ कहते है समुचंयकों । जीस्मे जघन्य और उत्कृष्ट दोनों प्रकारका आयुष्य समावेस हो शक्ता है । जेसे ज० दोयभव अन्तर महूर्तसे कोड़ पूर्वका तीर्यंच रत्नप्रभा नरकमें उत्पन्न होते हैं, वहांपर दशहजार वर्षसे एक सागरोपम कि स्थिति प्राप्त करता है तथा आठभव करे तों च्यार अन्तर महुर्तसे च्यार कोड़ पूर्व तीर्यंचका काल और चालीसहजार वर्षसे च्यार सागरोपम नारकीका काल यह प्रथम 'ओघसे ओघ' गमाहुवा ।

(२) 'ओघसे जघन्य' तीर्यंचका जघन्य उत्कृष्ट काल और नारकीका स्वस्थान पर जघन्यकाल ।

(३) 'ओघसे उत्कृष्ट' तीर्यंचका ज० उ० काल और नारकीका उत्कृष्ट काल समझने।

(४) 'जघन्यसे ओघ' तीर्यंचकाजघन्य और नरकीका ओघकाल।

(५) 'जघन्यसे जघन्य' तीर्यंच और नारकी दोनोंका जघन्यकाल।

(६) 'जघन्यसे उत्कृष्ट' तीर्यंचका जघ० काल और नरकका उ० काल

(७) 'उत्कृष्टसे ओघ' तीर्यंचका उत्कृष्ट और नरकका ओघकाल।

(८) 'उ०से जघन्य' तीर्यंचका उत्कृष्ट और नरकका जघ० काल।

(९) 'उ०से उत्कृष्ट' तीर्यंच और नरक दोनोंका उत्कृष्टकाल।

(२) ऋद्धि=जिसका २० द्वार है। जो जीव परभव गमन करता है वह इस भवसे कोनसी कोनसी ऋद्धि साथमें लेके जाता है, जेसे तीर्यंच पांचेन्द्रिय रत्नप्रभा नरकमें जाता है तों कितनि ऋद्धि साथमें ले जाता है यथा—

(१) उत्पाद=तीर्यंच पांचेन्द्रियसे नरकमें उत्पन्न होता है।

(२) परिमाण=एक समयमें १-२-३ यावत् असंख्याते

(३) संघयण—छे वों संघयणवाला तीर्यंच नारकीमें उत्पन्न हो।

(४) अवगाहाना—जघन्य अंगुलके असं० भाग। उ० हजार जोजनवाला, तीर्यंच नरकमें उत्पन्न होता है।

(५) संस्थान—छे वों स्थानवाला।

(६) लेश्या—छेवों लेश्यावाला। (भवापेक्षा)

(७) ज्ञानाज्ञान—तीनज्ञान तथा तीनज्ञानकि भजना।

(८) द्रष्टी तीन-सम्पुरण भवापेक्षा होनेसे तीन द्रष्टी है।

(९) योग तीन-तीनों योगवाला।

(१०) उपयोग-दोय-साकार आनाकार।

(११) संज्ञा-संज्ञाच्यारवाला।

(१२) कषायच्यार-च्यारोंकषायवाला।

(१३) इन्द्रिय-पांच-पांचोइन्द्रियवाला।

(१४) समुद्घात-पांच समुद्घातवाला। क्रमःसर

(१५) वेदना-साता असाता दोनो वेदनावाला।

(१६) वेदतीन-तीनों वेदवाला।

(१७) अध्यवसाय-असंख्याते वह अप्रशस्थ।

(१८) आयुष्य-ज० अन्तर महुर्त। उ० कोडपूर्ववाला।

(१९) अनुबन्ध आयुष्य माफीक (कायस्थिति)

(२०) संभहो-कालादेशेण और भवादेशेण। भवापेक्षा ज० दोयभव उ० आठभव, कालापेक्षा नौ पहला लिख गया है।

इस गमानामाके चौवीशवां शतकका चौवीस उदेश है यथा सातों नरकका प्रथम उदेशा, दश भुवनपतियोंके दश उदेशा, पांच स्थावरोंका पांच उदेशा, तीन वैकलेन्द्रिका तीन उदेशा, तीर्यंच पांचेन्द्रिय, मनुष्य, व्यन्तरदेव, ज्योतीषीदेव, वैमानिकदेव, इन्ही पांचोका प्रत्यक पांच उदेशा एवं सर्व मीलके २४ उदेशा है।

(१) नरकका पहला उदेशा है जिस नरकका सात भेद है

यथा=रत्नप्रभा शार्करप्रभा वालुकाप्रभा पङ्कप्रभा धूमप्रभा तमप्रभा तमतमाप्रभा इस सातों नरकमें उत्पन्न होनेवाला जीव भिन्न भिन्न स्थानोंसे आते है वास्ते पेस्तर सबके आगति स्थान लिख देना उचित होगा क्युकि आगे बहुत सुगम हो जायगा ।

(१) रत्नप्रभा नरककि आगति पांच संज्ञी तीर्यंच[1] पांच असंज्ञी तीर्यंच, एक संख्याते वर्षका कर्मभूमि मनुष्य एवं ११ स्थानसे आ-के रत्नप्रभा नरकमें उत्पन्न होता है ।

(२) शार्कर प्रभाकि आगति पांच संज्ञी तीर्यंच और संख्याते वर्षका कर्मभूमि मनुष्य एवं छे स्थानसे आवे ।

(३) वालुकाप्रभाकि आगति पांच स्थानकि भुजपुर वर्जके ।

(४) पंकप्रभाकि आगति खेचर वर्जके च्यार स्थानकि ।

(५) धूमप्रभाकि आगति थलचर वर्जके तीनस्थानकि ।

(६) तमप्रभाकि आगति उरपुरी वर्जके दोय स्थानकि ।

(७) तमतमा प्रभाकि आगति दोयकि परन्तु स्त्रि नहीं आवे।

रत्न प्रभा नरककि ११ स्थानकि आगति है जिस्मे पांच असंज्ञी तीर्यंच आते है वह पूर्व २० द्वारसे कितनी कितनि ऋद्धि लेके आते है ।

(१) उत्पात=असंज्ञी तीर्यंचसे ।

(२) परिमाण-एक समयमें १-२-३ यावत् संख्याते ।

(३) संहनन=एक छेवटा संहननवाला तीर्यंच ।

---

१ जलचर स्थलचर खेचर उरपुरी भुजपुरी ।

(४) अवगाहाना जघन्य अंगुलके असंख्यातमें भाग उ० १००० जोजनवाला यद्यपि अंगुलके असंख्यातमें भागवाला नरकमें नहीं जाता है परन्तु यहांपर सर्व भवापेक्षा है कि तीर्थंचके भवमें इतनि आवगाहाना होती है एवं सर्वत्र समझना ।

(५) संस्थान=एक हुन्डकवाला ।

(६) लेश्या=कृष्ण निल कापोतवाला=रत्नप्रभामें जानेवालेके लेश्या एक कापोत होती है परन्तु यह भी पूर्ववत् सर्वभवापेक्षा है ।

(७) दृष्टी—एक मिथ्यात्व वाला ।

(८) ज्ञान—ज्ञान नहीं किन्तु दोय अज्ञान वाला ।

(९) योग—वचन और कायावाला ।

(१०) उपयोग—साकार और अनाकार ।

(११) संज्ञा—आहारादिक च्यारोंवाला ।

(१२) कषाय—क्रोध मान माया लोभ च्यारोवाला ।

(१३) इन्द्रिय—श्रोतेन्द्रिया दि पांचो इन्द्रियवालं ।

(१४) समुद्घात—वेदनी कषाय मरणन्तिक तीनों ।

(१५) वेदना—साता असाता दोनोंवाला ।

(१६) वेद—एक नपुंसक वेदवाला ।

(१७) स्थिति—ज० अन्तर महुर्त उ० पूर्वकोड वाला ।

(१८) अध्यवसाय—असंख्याते सो प्रसस्थ अप्रसस्थ ।

(१९) अनुबन्ध—ज० अन्तर महुर्त उ० पूर्व कोडका ।

(२०) संभहो—भवादेशेणं जघन्य दोयभव उ० दोयभव

कारण असंज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय नरक जाता है परन्तु नरकसे निकलके असंज्ञीं तीर्यंच पांचेन्द्रिय नहीं होता है। कालापेक्षा ज० दश हजार वर्ष अन्तर महुर्त अधिक उ० पल्योपमके असंख्यातमें भाग और कोड पूर्व अधिक इती २० द्वार।

असंज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय और रत्नप्रभा नरकके नौगमा।

(१) 'ओघसे ओघ' भवादेशेणं दोय भव, कालादेशेणं, दश हजार वर्ष अन्तर महुर्त अधिक। उ० कोड पूर्वाधिक पल्योपमके असंख्यात भाग। १।

(२) 'ओघसे जघन्य' अन्तर महुर्त दशहजार वर्ष। उ० कोडपूर्व दशहजार वर्ष।

(३) 'ओघसे उत्कृष्ट' अन्तर महुर्त पल्योपमके असंख्याते भाग, पूर्व कोड वर्ष और पल्यापमके असंख्यातमों भाग।

(४) 'जघन्यसे ओघ' अन्तर महुर्त दश हजार वर्ष। उ० अन्तर महुर्त और पल्योपमके असंख्यामें भाग।

(५) 'ज०से जघन्य' अन्तर महुर्त दशहजार वर्ष। अन्तर महुर्त और दशहजार वर्ष।

(६) ज०से उत्कृष्ट, अन्तर महुर्त पल्योपमके असंख्याते भाग। उ० अन्तर महुर्त पल्योपमके असंख्याते भाग।

(७) 'उत्कृष्टसे ओघ' कोड पूर्व दश हजार वर्ष, कोडपूर्व पल्योपमके असंख्याते भाग।

(८) 'उ०से जघन्य' कोडपूर्व दश हजार वर्ष, उ० कोडपूर्व और दशहजार वर्ष।

(९) 'उ०से उत्कृष्ट' कोडपूर्व, पल्योपमके असंख्याते भाग,

उ० कोडपूर्व और पल्यो० असं० भाग ।

पूर्व जो २० द्वार ऋद्धिके बतलाये गये है वह प्रत्यक गम्म पर लगा लेना इसके अन्दर जो तफावत है वह यहांपर बतला देते हैं ।

(१) ओघ गमा तीन १-२-३ समुच्चयवत् ।

(२) जघन्य गमा तीन ४-५-६ जिसमें नांणन्ता तीन ।

(१) स्थिति अन्तर महुर्त वाला जावे ।

(२) अध्यवसाय असंख्याते सो अप्रसस्थ ।

(३) अनुबन्ध ज० उ० अन्तर महुर्तका ।

(३) उत्कृष्ट गमा तीन ७-८-९ जिसमें नाणन्ता दोय ।

(१) स्थिति कोडपूर्व वाला जावे ।

(२) अनुबन्ध भी कोडपूर्वका ।

इति असंज्ञी तीर्यच पांचेन्द्रिय मरके रत्नप्रभामें जाते है शेष ६ नरकमें असंज्ञी नहीं जाते है ।

(२) संज्ञी तीर्यच पांचेन्द्रिय संख्याते वर्षवाले मरके सातों नरकमें जाशक्के है जिसमें रत्नप्रभामें उत्पन्न हुवे तो ज० दश हजार वर्ष उ० एक सागरोपम कि स्थिति पावे । जिस्की ऋद्धिका वीसद्वार ।

(१) उत्पात-संज्ञी तीर्यच पांचेन्द्रियसे ।

(२) परिमाण-एक समयमें १-२-३ यावत् असंख्याते ।

(३) संहनन-छे वों संहननवाला तीर्यच ।

(४) अवगाहाना–ज० अंगुलके असं० भाग उ० हजार योजनवाला ।

(५) संस्थान–छे वों संस्थानवाला ।

(६) लेश्या–छे वों वाला (७) दृष्टी तीनोवाला ।

(८) ज्ञान–तीनज्ञान तथा तीन अज्ञानकि भजना ।

(९) योग–तीनों (१०) उपयोग दोनों (११) संज्ञाच्यार ।

(१२) कषाय च्यारों (१३) इन्द्रिय पांचों (१४) समुद्घात पांचों (१५) वेदना–सातासाता (१६) वेद तीनों प्रकरके । (१७) स्थिति ज० अन्तर महुर्त उ० कोड पूर्ववाला । (१८) अध्यवसाय–असंख्याते, प्रसस्थ, अप्रसस्थ । (१९) अनुबन्ध–ज० अन्तर महुर्त उ० कोड पूर्व वर्षका । (२०) संभहो–भवापेक्षा ज० दोयभव उ० आठभव, काला पेक्षा ज० अन्तर महुर्त दश हजार वर्ष उ० च्यार कोड पूर्व और च्यार सागरोपम इतना कल तक तीर्यंच और रत्नप्रभा नरकमें गमनागमन करे जिस्का नौ गमा ।

(१) ओघसे ओघ–दश हजार वर्ष अन्तर महुर्त च्यार कोड पूर्व च्यार सागरोपम ।१।

(२) ओघसे जघन्य–अन्तर महुर्त दश हजार वर्ष च्यार कोड पूर्व और चालीस हजार वर्ष ।२।

(३) ओघसे उत्कृष्ट ' अन्तर महुर्त एक सागरोपम उ० च्यार कोड पूर्व और च्यार सागरोपम । ३ ।

(४) ज० से ओघ' अन्तर महुर्त दश हजार वर्ष उ० च्यार अन्तर महुर्त च्यार सागरोपम ।४।

(५) ज० से जघन्य' अन्तर महुर्त दश हजार वर्ष उ० च्यार अन्तर महुर्त और चालीस हजार वर्ष ।५।

(६) ज० से उत्कृष्ट' अंतर महुर्त, एक सागरोपम उ० च्यार अंतर महुर्त, च्यार सागरोपम । ६ ।

(७) उ० से ओघ' कोड पूर्व दश हजार वर्ष उ० च्यार कोड पूर्व च्यार सागरोपम ।

(८) उ० से जघन्य' कोड पूर्व दश हजार वर्ष, उ० च्यार कोड पूर्व और चालीस हजार वर्ष ।८।

(९) उ० से उत्कृष्ट, कोड पूर्व एक सागरोपम उ० च्यार कोड पूर्व और च्यार सागरोपम ।९।

नौ गमा है इसमें प्रत्यक गमापर ऋद्धिके वीस वीस द्वार लगा लेना जो तफावत है वह बतलाते है ।

(१) ओघ गमा तीन १-२-३ समुच्चयवत्

(२) जघन्य गमा तीन प्रत्यक गमा, आठ नाणन्ता ।

(१) अवगाहना उ० प्रत्यक धनुष्यकि ।

(२) लेश्या तीन, कृष्ण, निल, कापोत ।

(३) दृष्टी एक मिथ्यात्वकि (४) ज्ञाननहीं अज्ञान दोय

(५) समुद्घात, तीन, वेदनी, कषाय, मरणन्तिक ।

(६) स्थिति जघ० व उत्कृष्ट अन्तर महुर्तकि ।

(७) अध्यवसाय, असंख्याते, सों, अप्रसस्थ ।

(८) अनुबन्ध, जघन्य उत्कृष्ट अन्तर महुर्त ।

(३) उत्कृष्ट गमा तीन नाणन्ता दोय पावे ।

(१) स्थिति, ज० उ० कोडपूर्वका ।

(२) अनुबन्ध, ज० उ० पूर्वकोड ।

संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय जैसे रत्नप्रभा नरकमें उत्पन्न हुवे जिसकि ऋद्धि तथा नौगमा कहा है इसी माफीक शार्करप्रभामें भी समझना परंतु शार्करप्रभामें स्थिति जघन्य एक सागरोपम उ० तीन सागरोपमकि है वास्ते नौगमामें स्थिति उपयोगसे कहेना शेषाधिकार रत्नप्रभावत् समझना ।

भवापेक्षा ज० दोय उ० आठ भव, कालापेक्षा नौगमा ।

(१) ओघसे ओघ, अन्तर महुर्त एक सागरोपम । उ० च्यार कोडपूर्व १२ सागरो०

(२) ओघसे ज० अन्तर० एक सागरो० । उ० च्यार अन्तर० च्यार सागरो० ।

(३) ओघसे उ० अन्तर० एक सागरो० उ० च्यार कोडपूर्व १२ सागरो०

(४) ज० से ओघ. अन्तरमहुर्त एक सागरोपम उ० च्यार अन्तर बारहा सागरोपम ।

(५) ज०से जघन्य, अन्तर० एक सागरो० च्यार अन्तर० च्यार सागरो०

(६) ज०से उत्कृ० अन्तर० एक सागरो० च्यार कोडपूर्व १२ सागरो०

(७) उत्कृ० से ओघ० कोडपूर्व तीन सागरो० च्यार कोडपूर्व १२ सागरो०

(८) उ०से जघन्य० कोडपूर्व तीन सागरो० च्यार अन्तर० च्यार सागरो०

(९) उ०से उत्कृष्ट० कोडपूर्व एक सागरो० च्यार कोडपूर्व ११ सागरो०

इसी माफीक वालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा, भी समझना परंतु नौगमामें स्थिति जघ० उत्कृष्ट अपने अपने स्थानकी समझना तथा ऋद्धिमें संहनन द्वार पहली दुसरी नरकमें छेवों संहननवाला तीर्यंच जावे तीजी नरकमें छेवटो संहनन वर्जके पांच संहननवाला जावे एवं चोथी नरकमें किलका संहनन वर्जके च्यार संहननवाला जावे। पांचवी नरकमें अर्द्धनाराच वर्जके तीन संहननवाला जावे। छटीनरकमें नाराच वर्जके दोय संहननवाला जावे।

सज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय मरके सातवी नरकमें जावे वहापर स्थितिज० २२ सागरोपम उ० ३३ सागरोपमकि पावें, ऋद्धिके २० द्वार रत्न प्रभाकि माफीक परन्तु सहननद्वारमे एक बज्ररूषभ नाराचवाला तथा वेदद्वारमें एक स्त्रि वेद नहीं जावे। संभहो भवापेक्षा ज० ३ भव उ० ७ भव कालपेक्षा ज० २२ सागरोपम दोय अन्तर मुहुर्त० उ० ६६ सागरोपम च्यारकोड पूर्वाधिक। परंतु तीजें छटें नवमें गमामें ज० ३ भव उ० पांच भव करते है कारणकि २२ सागरोपमके लगते तीन भव कर सकते है परंतु ३३ सागरोपमके तीन भव लगता नहीं करे किंतु दोय भव कर सके। वास्ते ३-६-९ गमे ३-५ भव करे।

ओघसे ओघ० २२ सागरो० दोय अन्तर० उ० ६६ सा० च्यार कोडपूर्व,
ओघसे ज० २२ सा० दोय अन्तर०। उ० ६६ सा० च्यार अन्तर०
ओघसे उ० ३२ सा० दोय अन्तर० उ० ६६ सा० ३ कोडपूर्व
ज० ओघ० २२ सा० दोय अन्तर० उ० ६६ सा० च्यार को०
ज० ज० ,, ,, ,, च्यार अन्तर०
ज० उ० ,, ,, ,, तीन कोडपूर्व
उ० ओघ ३२ सा० दोय कोडपूर्व ,, च्यार कोडपूर्व
उ० ज० ,, ,, ,, च्यार अन्तर०
उ० उ० ,, ,, ,, तीन कोड पूर्व

नाणन्ता उ० गमाती न नाणन्ता दो दोय स्थिति ज० कोडपूर्व • अनुबन्ध आयुष्य कि माफीक ।

संज्ञी मनुष्य संख्याते वर्षवाले मरके रत्नप्रभा नरकमें जावे सो यहांसे जघन्य प्रत्यकमास उ० कोडपूर्व वहांपर ज० दश हजार वर्ष उ० एक सागरोपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। ऋद्धि जेसे ।

(१) उत्पात—संख्याते वर्षवाला संज्ञी मनुष्यसे ।
(२) परिमाण—एक समयमे १—२—३ उ० संख्याते ।
(३) संहनन=छे वों संहननवाला ।
(४) अवगाहाना ज० प्रत्यक अंगुल उ० ५०० धनुष्यवाला।
(५) ज्ञान—च्यार ज्ञान तीन अज्ञानकि भजना (भवापेक्षा)।
(६) समुद्घात, केवली समु० वर्जके छे समु० वाला ।
)७) स्थिति—ज० प्रत्यकमास उ० कोडपूर्व ।
(८) अनुबंध ज० प्रत्यकमास उ० कोडपूर्व ।

शेष सर्वद्वार संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय माफीक समझना। भवापेक्षा ज० दोय उ० आठ भव, कालापेक्षा ज० प्रत्यकमास दश हजार वर्ष उ० च्यार कोडपूर्व, च्यार सागरोपम तक गमना गमन करे जिस्के गमा नौ।

ओघसे ओघ'	प्रत्यक मास	दशहजार वर्ष	उ० च्यार कोडपूर्व च्यार सा०
ओघसे ज०'	,,	,,	उ० च्यार प्रत्य० ४०००० वर्ष
ओघसे उ०	,,	,,	उ० च्यार कोडपूर्व च्यार सा०
ज०से ओघ	,,	,,	उ० च्यार कोडपूर्व च्यार सा०
ज०से ज०	,,	,,	उ० ,, प्र०मा० ४००००वर्ष
ज०से उ०	,,	,,	उ० ,, कोडपुर्व च्यार सा०
उ० ओघ	एक कोड पूर्व	एक सा०	उ० च्यार कोड पू० च्या० सा०
उ० ज०	,,	,,	उ० च्यार अन्तर ४०००० वर्ष
उ० उ०	,,	,,	उ० ,, कोड पूर्व च्यार सागरो

प्रत्यक गमा पर २० द्वार कि ऋद्धि पूर्ववत् लगा लेना तफावत हे सो बतलाते हैं ओघ गमा तीन तो पूर्ववत ही है।

जघन्य गमातीन—४—५—६ नाणन्ता ५

(१) अवगाहाना ज० अंगुलके असंख्यातमें भाग उ० प्रत्यक अंगुलकि।

(२) ज्ञान—तिन ज्ञान तीन अज्ञान कि भजना।

(३) समुद्घात—पांच क्रम: सर

(४) स्थिति ज० उ० प्रत्यक मास कि

(५) अनुबन्ध—ज० उ० प्रत्यक मासको

उत्कृष्ट गमा तीन नाणन्ता पावे तीन तीन

(१) शरीर अवगाहाना ज० उ० ५०० धनुष्यकि

(२) आयुष्य ज० उ० कोड पूर्वका

(३) अनुबन्ध ज० उ० कोड पूर्वका

संज्ञी मनुष्य मरके शार्करप्रभा नरकमें उत्पन्न होता है। स्थिति यहांसे ज० प्रत्यक वर्ष और उत्कृष्ट कोड पूर्व वहां पर ज० एक सागरोपम उ० तीन सागरोपम ऋद्धिके २० द्वार रत्नप्रभाकि माफीक परन्तु यहांपर स्थिति ज० प्रत्यक वर्ष उ० कोड पूर्व एवं अनुबन्ध और शरीर अवगाहाना ज० प्रत्यक हाथ उ० पांचसो धनुष्य कि भव ज० दोय उ० आठ काल ज० प्रत्यक वर्ष और एक सागरोपम उ० च्यार कोड पूर्व और बारह सागरोपम इतना काल तक गमनागमन करे। नौगमा रत्नप्रभाकि माफीक परन्तु स्थिति शार्करप्रभासे केहना।

३ ओघ गमा तीन १–२–३ समुच्च वत्

३ जघन्य गमा तीन ४–५–६ नाणन्ता तीन तीन

(१) अवगाहाना ज० उ० प्रत्यक हाथकि

(२) स्थिति ज० उ० प्रत्यक वर्षकि

(३) अनुबन्ध आयुष्यकि माफीक प्रत्यक वर्षको

३ उत्कृष्ट गमा तीन नाणन्ता तीन तीन।

(१) शरीर अवगाहाना ज० उ० पांचसो धनुष्यकि

(२) आयुष्य ज० उ० कोड पूर्वको

(३) अनुबन्ध ज० उ० कोड पूर्वको

इस माफीक यावत् छठी तमप्रभा तक नौगमा और ऋद्धि २० द्वारसे कहना परन्तु स्थिति स्वस्वस्थानसे केहना, संहनन इस माफीक पहेली दुजी नरकमें, छे, तीजीमें पांच, चोथीमें च्यार, पांचमीमें तीन, छठीमें दोय, सातवी नरकमें एक वज्र-ऋषभ नाराच संहनन वाला जावे।

संज्ञी मनुष्य संख्याते वर्षवाला मरके सातवी नरकमें जावे यहांसे स्थिति ज० प्रत्यक वर्ष उ० कोड पूर्ववाला यहांपर ज० २२ सागरोपम उ० ३३ सागरोपम. ऋद्धिके २० द्वार शार्कर प्रभावत् परन्तु एक संहननवाला जावे किन्तु स्त्रि वेदवाला न जावे। भवापेक्षा ज० दोय उ० दोय भव करे कारण मनुष्य सातवी नरक जाते हैं किन्तु वहांसे मनुष्य नही हुवे, सातवी नरकसे निकलके तों एक तीर्यंच ही होता है। कालापेक्षा ज० प्रत्यक वर्ष और २२ सागरोपम उ० कोडपूर्व और तेतीस सागरोपम.

'ओघसे ओघ'	प्रत्यक वर्ष	२२ सा०	उ०	कोडपूर्व	३३ सा०
'ओघसे ज०'	,,	,,	उ०	,,	२२ सा०
'ओघसे उ०'	,,	,,	उ०	,,	३३ सा०
ज० ओघ	,,	,,	उ०	,,	३३ सा०
ज० ज०	,,	,,	उ०	प्र० वर्ष	२२ सा०
ज० उ०	,,	,,	उ०	कोडपूर्व	३३ सा०
उ० ओघ	कोडपूर्व	तेतीस सा०	उ०	,,	३३ सा०
उ० ज०	,,	,,	उ०	प्र० वर्ष	२२ सा०
उ० उ०	,,	,,	उ०	कोडपूर्व	३३ सा०

...के २० द्वारमें जो तफावत है से
... जीव गमा तीन १–२–३ समुच्चयवत्
... जघन्य गमा तीन ४–५–६ नाणन्ता तीन तीन

(१) अवगाहाना ज० उ० प्रत्यक हाथकि

(२) आयुष्य० ज० उ० प्रत्यक वर्षका

(३) अनुबन्ध ज० उ० प्रत्यक ,,

... उत्कृष्ट गमा तीन नाणन्ता तीन तीन

(१) अवगाहाना ज० उ० पांचसो धनुष्यकि

(२) आयुष्य ज० उ० कोडपूर्वका

(३) अनुबन्ध ज० उ० कोडपूर्वका ।

इति नारकिका प्रथम उद्देशो समाप्तम् ।

(२) असुरकुमार देवताका दुसरा उद्देशा ।

असुरकुमारके स्थानमें पांच संज्ञी तीर्यच, पांच असंज्ञी ...र्यच और एक मनुष्य एवं ११ स्थानोंके पर्याप्ता आते है ।

(१) असंज्ञी तीर्यच जेसे रत्नप्रभा नरकमें काहा है इसी ...माफीक नौगमा और ऋद्धिके २० द्वार यहांपर भी केहना परन्तु ...हां पर अध्यवसाय प्रसस्थ समझना ।

(२) संज्ञी तीर्यच पांचेन्द्रिय असुरकुमारमें उत्पन्न होते है ... दोय प्रकारके है ।

(१) संख्याते वर्षवाले (२) असंख्याते वर्षवाले । जिस्में ...प्रथम असंख्याते वर्षवाले संज्ञी तीर्यच पर्याप्ता असुर कुमारमें ज० ...दश हजार वर्ष उ० तीन पल्योपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है ...जिसपर ऋद्धिके २० द्वार ।

(१) उत्पात असंख्याते वर्षके तीर्यंच पांचेन्द्रिय पर्याप्ताके।
(२) परिमाण–एक समय १–२–३ यावत् संख्याते।
(३) संहनन–एक वज्र ऋषभ नाराचवाला।
(४) अवगाहना–ज० प्रत्यक धनुष्य, उ० छे गाउवाला।
(५) संस्थान–एक समचतुस्त्र संस्थानवाला।
(६) लेश्या–कृष्ण निलकापोत तेजसवाला।
(७) दृष्टी एक मिथ्यात्व (८) ज्ञान नहीं अज्ञानदोय।
(९) योग–तीनो योगवाला (१०) उपयोग दोनोवाला।
(११) संज्ञा=च्यारों संज्ञावाला (१२) कषाय चारोंवाला।
(१३) इन्द्रिय=पांचोवाला (१४) समुद्घात तीन वे. क. म.
(१५) वेदना–साताअसातावाला (१६) मरणदोनो
(१७) स्थिति=ज० साधिक पुर्वकोड उ० तीन पल्योपम।
(१८) अध्यवसाय=असंख्याते प्रसस्थ अप्रसस्थ दोनों।
(१९) अनुबन्ध आयुष्यकि माफिक।

(२०) संभहो=भवापेक्षा ज० उ० दोय भव करे कालापेक्षा ज० सधिक कोड पूर्व और दश हजार वर्ष उ० छे पल्योपम ३–३=१॥ गमा नौ।

ओघसे ओघ ? साधिककोडपूर्व १०००० वर्ष उ० ६ पल्यो०
ओघसे ज० „ „ उ० ३ पल्या १०००० वर्ष
ओघसे उ० „ „ उ० सधिककोड पूर्व ३ प०
ज० ओघ „ „ उ० साधिककोड पूर्व ३ पल्यो

ज० ज०	,,	,,	उ० साधि० को० १०००० वर्ष
ज० उ०	,,	,,	उ० ६ पल्योपम
उ० ओघ ६ पल्योपम			उ० सा० कां० ३ पल्योपम
उ० ज०	,,	,,	उ० साधि० १०००० वर्ष
उ० उ०	,,	,,	उ० ६ पल्यो०

नाणन्ता इस माफीक है।

(१) तीजे गमे ज० उ० तीन पल्योपकि स्थितिवाला जावे।

(२) चोथे गमे ज० उ० साधिक पूर्वकोड वाला जावे और अवगाहना ज० प्रत्यक धनुष्य उ० १००० धनुष्यवाला जावे एवं ५–६ ठे गम भी।

(३) सातवे गमें ज० उ० तीन पल्योंकि स्थितिवाला जावे इसी माफीक आठवे तथा नौवागमा समझना।

संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय संख्याते वर्षवाला मरके असुरकुमार देवतोंमें जावे तो नौगमा और ऋद्धिके २० द्वार जेसे संज्ञीतीर्यंच पांचेन्द्रिय संख्याते वर्षवाला रत्नप्रभा नरकमें उत्पन्न समय कही थी इसी माफीक समझना इतना विशेष है कि रत्नप्रभामें उ० स्थिति एक सागरोपमकि थी यहांपर उ० स्थिति एक सागरोपम साधिक केहना। गमा ४–५–६ लेश्या च्यार और अध्यवसाय प्रसस्थ समझना।

संज्ञी मनुष्य दोय प्रकारके है (१) संख्याते वर्षवाले (२) असंख्याते वर्षवाले जिस्में असंख्याते वर्षवाले मनुष्य (युगलीया) मरके असुर कुमारमें जाव तों वहांपर स्थिति ज० दशहजार वर्ष

उ० तीन पल्योपमकि पाते है। नौगमा और ऋद्धिके २० द्वार असंख्यात वर्षवाला तीर्यचकी माफीक समझना। इतना विशेष है कि प्रथमके गमा तीन जिस्में पहेला दुसरा गमामें अवगाहाना जघन्य साधिक पांचसो धनुष्य उ० तीन गाउ कि तथा तीसरे गमामें अवगाहाना जघन्य उत्कृष्ट तीन गाउकि है। अपने जघन्य कालके तीन गमा ४–५–६में अवगाहाना ज० उ० साधिक पांचसो धनुष्य है। और अपने उत्कृष्ट गमा तीन ७–८–९में अवगाहना ज० उ० तीन गाउकि है शेष पूर्ववत्।

संख्याते वर्षका संज्ञी मनुष्य असुर कुमारमें उत्पन्न हुवे तों जेसे संज्ञी संख्याते वर्षका मनुष्य, रत्नप्रभा नरकमें उत्पन्न हुवा था इसी माफीक नौगमा तथा २० द्वार ऋद्धिका समझना परन्तु गमामें उत्कृष्ट स्थिति असुरकुमारकि साधिक सागरोपमकी कहनी। शेषाधिकार रत्नप्रभावत्।

इति चौवीसवा शतकका दुसरा उद्देशा।

जेसे असुर कुमारका अधिकार कहा है इसी माफीक नागकुमार सुवर्ण कुमार, बिद्युतकुमार, अग्निकुमार, द्विपकुमार, दिशाकुमार, उदधीकुमार, वायुकुमार, स्तनत्कुमार, इस नौ जातिके देवतोंकों नौ निकाय भि कहते है।

विशेष इतना है कि इन्होंकि स्थिति ज० दश हजार वर्ष उत्कृष्टी देशोन दोय पल्योपमकि है वास्ते गमा कालमें इस स्थितिसे बोलाना।

नोट–युगलीया मनुष्य तथा तीर्यंच आपनि उत्कृष्टी स्थितिसे अधिक स्थिति देवतोंमें नहीं पाते है। वास्ते देवतावांके उत्कृष्ट

स्थितिमें जानेवाला अवगाहाना ज० देशोना दोयगाउ उ० तीन-गाउ और स्थिति ज० देशोना दोय पल्योपम उ० तीन पल्योपम समझना इति।

। इति चौवीसवा शतकका इग्यारा उद्देशा समाप्त हुवे।

(१२) पृथ्वीकायाका उद्देशा–पृथ्वीकायाके अन्दर पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय असंज्ञी तीर्यंच असंज्ञी मनुष्य. संज्ञी तीर्यंच, संज्ञी मनुष्य, दश भुवनपति व्यन्तर ज्योतीषी सौधर्म देवलोक इशान देवलोक एवं २६ स्थानसे आये हुवे जीव पृथ्वीकायमें उत्पन्न हो शक्के है वहां (पृथ्वीकायमें) स्थिति ज० अन्तर महुर्त उत्कृष्टी २२००० वर्षकि होती है। ऋद्धिका २० द्वार। पृथ्वीकाय मरके पृथ्वीकायमें उत्पन्न होते है जिस्की ऋद्धिके २० द्वार।

(१) उत्पात–पृथ्वीकायासे आके उत्पन्न होते है।
(२) परिमाण–एक समयमें १–२–३ यावत् असंख्याते।
(३) संहनन–एक छेवट संहनन लेके आता है।
(४) अवगाहाना–ज० उ० अंगुलके असं० भाग।
(५) संस्थान–एक हुन्डक (चन्द्राकार) वाला
(६) लेश्या–च्यार (भव संबन्धी) वाला
(७) दृष्टी–एक मिथ्यात्ववाला।
(८) ज्ञान–अज्ञान दोयवाला। ज्ञान नहीं होते है।
(९) योग–एक कायाका (१०) उपयोग दोनों. सा० अ०
(११) संज्ञा च्यारों (१२) कषाय च्यारों

(१३) इन्द्रिय एक स्पर्श. (१४) समुद्घात–तीन० वेदनि० कषाय० मरणन्तिक ।

(१५) वेदना–साता असाता (१६) वेद एक नपुंसकवाला

(१७) स्थिति ज० अन्तर महुर्त. उ० २२००० वर्षवाला

(१८) अध्यवसाय, असंख्याते, प्रसस्थ, अप्रसस्थ ।

(१९) अनुबन्ध–ज० अन्तर महुर्त. उ० २२०००वर्षवाला

(२०) संभहो–भवापेक्षा ज० दोयभव उ० असंख्याते भव। कालापेक्षा ज० दोय अन्तर महुर्त. उ० असंख्याते काल। इतना काल गमनागमन करे। और नौगमा निचे प्रमाणे ।

(१) ओघसे ओघ–भव ज० दोय उ० असंख्याता. काल ज० दोय अन्तर महुर्त. उ० असंख्याता काल ।

(२) ओघसे ज० ज० दोयभव उ० असंख्याते भव. काल ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० असंख्याते काल ।

(३) ओघसे उ० । भव ज० दोय उ० आठ भव करे. काल ज० अन्तरमहुर्त और २२००० वर्ष. उ० १७६००० वर्ष ।

(४) ज०से ओघ० पहेला गमा सादृश परन्तु लेश्या तीन स्थिति और अनुबन्ध अन्तरमहुर्त अध्यवसाय अप्रसस्थ ।

(५) ज०से जघन्य, चोथा गमाकी माफीक ।

(६) ज०से उत्कृष्ट–पांचमा गमा माफीक परन्तु भव ज० दोय. उ० आठ भव करे काल ज० अन्तर महुर्त और २२००० वर्ष उ० च्यार. अन्तर महुर्त उ० ८८००० वर्ष ।

(७) उ०से ओघ–तीजा गमा माफीक यहांपर स्थिति. ज० उ० २२००० वर्षकि ।

(८) उ०से जघन्य । ज० उ० अन्तरमहुर्तमें उपजे. भव ज० १ उ० ८ भव काल ज० २२००० वर्ष अन्तर महुर्त. उ० ८८००० वर्ष च्यार अन्तर महुर्त ।

(९) उ० से उत्कृष्ट=स्थिति ज० उ० २२००० वर्ष, भव० दोय उ० आठ करे काल ज० ४४००० वर्ष, उ० १७६००० वर्ष ।

इस नौ गमोंके अन्दर ३–६–७–८–९ इस पांच गमोंके अन्दर जघन्य दोयभव उ० आठ भव करे शेष १–२–४–५ इस च्यार गमोंमें जघन्य दोय भव उ० असंख्याते भव करे । काल ज० दोय अन्तर महुर्त उ० असंख्याते काल तक परिभ्रमन करे ।

अपकाय मरके पृथ्वीकायके अन्दर उत्पन्न होवे उस्काभि नौ गमा और ऋद्धिके २० द्वार पृथ्वीकायकि माफीक समझना परंतु संस्थान छेवटा पाणीके बुद बुदेके आकार तथा गमामें अपकायकि स्थिति उ० ७००० वर्षकि समझना ।

एवं तेउकाय परन्तु संस्थान सूचिकलाइका स्थिति उ० तीन अहोरात्रीकि एवं वायुकाय परन्तु संस्थान ध्वजा पताका और स्थिति उ० ३००० वर्ष वनास्पिति कायका अलापक अपकाय माफीक समझना परन्तु विशेष (१) संस्थान, नानाप्रकारका, (२) अवगाहाना १-२-३-७-८-९ इस छे गमामें ज० अंगुलके असंख्यातमें भाग उ० साधिक हजार जोजनकि और ४-५-६ इस तीन गमामें ज० उ० अंगुलके असंख्यातमें भाग अवगाहाना तथा स्थिति उ० दश हजार वर्षसे गमा लगा लेना ।

बेन्द्रिय मरके पृथ्वी कायमें उत्पन्न हुवे, तो ज० अन्तर महुर्तमें उत्कृष्टी २२००० वर्षोंकि स्थितिमें (१) उत्पात बेन्द्रियसे (२) परिमाण १-२-३ सं० असंख्याते (३) संहनन एक छेवट्टावाला (४) अवगाहान ज० अंगु० असं० भाग उ० बारह योजनवाला (५) संस्थान एक हुन्डक (६) लेश्या तीन (७) दृष्टी दोय० (८) ज्ञान=दोयज्ञान दोय अज्ञानकि नियमा (९) योग दोय (१०) उपयोग दोय (११) संज्ञा च्यार (१२) कषाय च्यार (१३) इन्द्रिय दोय (१४) समुद्घात तीन क्रमःसर (१५) स्थिति ज० अन्तर उ० बारहा वर्ष (१६) अध्यवसाय प्रसस्थाप्रसस्थ (१७) वेदना दोनों (१८) वेद एक नपुंसक (१९) अनुबन्ध स्थितिवत् (२०) संभ हों भवापेक्षा ज० दोय उ० संख्याते भव कालापेक्षा ज० दोय अन्तर महुर्त उ० संख्यातों काल तक परिभ्रमन करे, जिस्का गमा नौ। जिस्मे मध्यमके तीन गमा ४-५-६ में शरीर अवगाहाना ज० उ० अंगुलके असंख्यातमें भाग दृष्टी एक मिथ्यात्वकि ज्ञान नहीं किंतु दोय अज्ञान है। योग एक कायाका स्थिति ज० उ० अन्तर महुर्त अनुबन्ध ज० उ० अन्तर महुर्त अध्यवसाय अप्रसस्थ उत्कृष्ट गमातीन ७-८-९ परन्तु स्थिति तथा अनुबन्ध ज० उ० बारह वर्षका है तथा ३-६-७-८-९ इस पांच गमोंमें भव ज० दोय उ० आठ भव करे शेष १-२-४-५ इस च्यार गमोंमें ज० दोयभव उ० संख्याते भव करे काल० ज० दोय अंतर महुर्त उ० संख्यातों काल लागे गमा पृथ्वीकाल और बेन्द्रियकि स्थितिसे पूर्ववत् लगा देना।

बेइंद्रियकि माफीक तेन्द्रिय भी समझना परन्तु यहा अव-

गाहाना उत्कृष्ट तीन गाउकि और स्थिति अनुबन्ध उ० गुणपचास दिन शेष बेन्द्रिय माफीक २० द्वार ऋद्धिका तथा नौगमा लगा लेना।

चौरिंद्रिय भी बेन्द्रिय माफीक परन्तू अवगाहाना च्यारगाउ और स्थिति तथा अनुबन्ध उ० छे मासका है शेष पूर्ववत्।

एवं असंज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय भी समझना परन्तु शरीर अवगाहाना उत्कृष्ठ १००० जोजनकि इन्द्रिय पांच. स्थिति तथा अनुबन्ध उ० कोडपूर्वका भवापेक्षा ज० दोयभव उ० आठ भव० कालापेक्षा. ज० दोय अन्तरमहुर्त. उ० च्यार कोडपूर्व और ८८००० वर्ष अधिक शेष ऋद्धि तथा नौ गमा बेन्द्रिय माफीक समझना परन्तु गमामें स्थिति पृथ्वीकाय और असंज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय कि केहना।

संज्ञी तीर्थंच पांचेन्द्रिय संख्याते वर्ष वाला पृथ्वीकायमें उत्पन्न होवे तो० ज० अन्तरमहुर्त उ० कोडवर्षकि स्थितिवाला उत्पन्न होगा ऋद्धि.

(१) उत्पात-संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय संख्याते वर्षवालासे।

(२) परिमाण-ज० १-२-३ उ० संख्याते असंख्याते।

(३) संहनन-छे वों संहननवाला।

(४) अवगाहाना-ज० अंगुलके असंख्याते भागउ० १००० जोजनवाला।

(५) संस्थान-छे वौ (६) लेश्या छे वों (७) दृष्टि तीनों.

(८) ज्ञान—तीन ज्ञान तीन अज्ञानकि भननावाला ।

(९) योग तीन—(१०) उपयोग दोय (११) संज्ञा च्यार (१२) कषाय च्यार वाला ।

(१३) इन्द्रिय पाचोंवाला (१४) समुद्घात पांच प्रथमसे ।

(१५) वेदना—साता असाता दोनों (१६) वेद तीनोंवाला।

(१७) स्थिति० ज० अन्तर महुर्त उ० कोडपूर्व वाला।

(१८) अध्यवसाय—असंख्याते. प्रसस्थ. अप्रसस्थ.

(१९) अनुबन्ध ज० अन्तर महुर्त. उ० कोडपूर्व.

(२०) संभहो. भवापेक्षा. ज० दोय भव उ० आठ भव. कालापेक्षा० ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० च्यार कोडपूर्व और ८८००० वर्ष अधिक जिस्के नौगमा पूर्ववत लगा लेना जिस गमामें तफावत हे सो इस माफीक है ।

मध्यम गमा तीन ४—५—६ प्रत्यक गमामें नाणन्ता. नौ.नौ.

(१) अवगाहाना ज० उ० अंगुलके असंख्यातमें भाग ।

(२) लेश्या तीन (३) दृष्टि एक मिथ्यात्वकि

(४) ज्ञान नही अज्ञान दोय (५) योग एक कायाकों ।

(६) समुद्घात तीन प्रथमकि

(७) स्थिति ज० उ० अन्तर महुर्त (८) एवं अनुबन्ध

(९) अध्यवसाय. असंख्य. अप्रसस्थ ।

उत्कृष्ट गमा तीन ७—८—९ नाणन्ता दो दो । स्थिति० ज० उ० कोडपूर्वकि एवं अनुबन्ध । नौगमाका काल पृथ्वीकाय और तीर्यंच पांचेन्द्रियके स्थितिसे लगा लेना । शेषाधिकार सब पूर्ववत् समझना ।

असंज्ञी मनुष्य मरके पृथ्वीकायमें ज० अन्तर महुर्त उ० २२००० वर्षकि स्थितिमें उत्पन्न होता है. ऋद्धि स्वयं उपयोगसे केहना सुगम है । नौ गमोंके बदले यहांपर ४–५–६ तीन गमा केहना कारण असंज्ञी मनुष्य अपर्याप्ती अवस्थामें ही मृत्यु प्राप्त हो जाते है वास्ते अपना जघन्य कालसे तीन गमा होता है शेष छे गमा सून्य है ।

संज्ञी मनुष्य संख्यात वर्षवाला पृथ्वीकायमें ज० अन्तरमहुर्त उत्कृष्ट २२००० वर्षोंकि स्थितिमें उत्पन्न होता है. ऋद्धिके २० द्वार जेसे रत्नप्रभा नरकमें मनुष्य उत्पन्न समय कही थी इसी माफीक केहना तफावत गमामें है सो कहते है ।

(१) प्रथम दुसरा तीसरा गमाके नाणन्ता ।

(१) अवगाहना ज० अंगुलके असं० भाग उ० ५०० धनुष्य ।

(२) आयुष्य ज० अन्तर० उ० पूर्वकोडका ।

(३) अनुबन्ध आयुष्यकिमा फीक ।

(२) मध्यम गमा तीन ४–५–६ तीर्यंच पांचेन्द्रिय माफीक ।

(३) उत्कृष्ट गमा तीन ७–८–९ नाणन्ता तीन तीन ।

(१) अवगाहाना ज० उ० ५०० धनुष्यकि ।

(२) आयुष्य ज० उ० कोड पूर्वका ।

(३) अनुबंध आयुष्यकि माफीक ।

नौ गमाका काल मनुष्यकि ज० उ० स्थिति तथा पृथ्वी कायकि ज० उ० स्थितिसे लगालेना । रीति सब पूर्व लिखी हुई है ।

पृथ्वीकायके अन्दर च्यारो निकायके देवता उत्पन्न होते है यथा भुवनपतिदेव, व्यन्तरदेव, ज्योतीषीदेव, वैमानिकदेव, जिस्मे भुवनपतिदेव दश प्रकारके है यथा असुरकुमार यावतस्तनत कुमार।

असुर कुमारके देव पृथ्वी कायमें ज० अंतर महुर्त उ० २२००० वर्षोकि स्थितिमें उत्पन्न होते है, जिसकी ऋद्धि।

(१) उत्पात—असुरकुमार देवतावोंसे।

(२) परिमाण—ज० १-२-३ उ० संख्याते असंख्याते।

(३) संहनन—छे वों संहननसे असंहननी है।

(४) अवगाहाना भव धारणी ज० अंगुलके असंख्यातमें भाग उ० सात हाथ उत्तर वैक्रय करे तों ज० अंगुलके संख्यातमें भाग उ० सधिक लक्ष जोजनकि यह भव संबन्धी अपेक्षा है।

(५) संस्थान—भवधारणी समचतुस्र. उत० नानाप्रकारका।

(६) लेश्या च्यार (७) दृष्टी तीन (८) ज्ञान तीन अज्ञान तीन कि भजना (९) योगतीन (१०) उपयोग दोय (११) संज्ञाच्यार (१२) कषाय च्यार (१३) इन्द्रिय पांचों (१४) समुदघात पांचक्रमःसर (१५) वेदना दोनों (१६) वेद दोय. स्त्रिवेद, पुरुष वेद. (१७) स्थिति ज० १०००० वर्ष. उ० साधिक सागरोपम. (१८) अनुबन्ध स्थिति माफिक (१९) अध्यवसाय, असं० प्रसस्थ, अप्रसस्थ दोनों (२०) संमहो भवापेक्षा ज० दोय भव उ० दोय भव कारण देवता पृथ्वीकायमें उत्पन्न होते है परन्तु पृथ्वी कायसे पीछा देवता नहीं होते है वास्ते एक भव पृथ्वी कायका दुसरा देवतोंका कालापेक्षा ज० अन्तर महुर्त और दश हजार वर्ष उ० २२००० वर्ष और साधिक सागरोपम इतना काल तक गमनागमन करे० जिस्के गमा नौ।

गमा ९	जघन्य दोयभव	उत्कृष्ट दोयभव
ओघसे ओघ	१०००० वर्ष	साधिक सागरोपम
१	अन्तरमहुर्त	२२००० वर्ष
ओघसे जघन्य	१०००० वर्ष	साधिक सागरोपम
२	अन्तरमहुर्त	अन्तरमहुर्त
ओघसे उत्कृष्ट	१०००० वर्ष	साधिक सागरोपम
३	२२००० ,,	२२००० वर्ष
जघन्यसे ओघ	१०००० वर्ष	१०००० वर्ष
४	अन्तरमहुर्त	२२००० ,,
जघन्यसे जघन्य	१०००० वर्ष	१०००० वर्ष
५	अन्तरमहुर्त	अन्तरमहुर्त
जघन्यसे उत्कृष्ट	१०००० वर्ष	१०००० वर्ष
६	२२००० ,,	२२००० ,,
उत्कृष्टसे ओघ	साधिक सागरोपम	साधिक सागरो०
७	२२००० वर्ष	२२००० वर्ष
उत्कृष्टसे जघन्य	साधिक सागरो०	साधिक सागरो०
८	अन्तरमहुर्त	अन्तरमहुर्त
उत्कृष्टसे उत्कृष्ट	साधिक सागरो०	साधिक सागरो०
९	२२००० वर्ष	२२००० वर्ष

एवं नागादि नौ जातिके भुवनपतिका अलापक भि समझना परन्तु स्थिति अनुबन्ध तथा गमाके कालमें ज० दशहजार उ० देशोनी दोय पल्योपम समझना ।

एवं व्यन्तर देवतावोंका अलापक परन्तु स्थिति अनुबन्ध और गमाकाल सब स्थानमें, ज० दशहजार वर्ष उ० एक पल्योपय समझना।

इसी माफीक ज्योतीषी देवतावों भि समझना। परन्तु ज्योतीषीयोंके पांच भेद है जिन्होंकि स्थिति—

(१) चन्द्र देवोंकी ज० पावपल्योपम उ० एक पल्योपम और एक लक्ष वर्ष अधिक समझना।

(२) सूर्यदेवोंकी ज० पाव० उ० एक पल्यो० हजार वर्ष।

(३) ग्रहदेवोंकी ज० पाव० उ० एक पल्योपम।

(४) नक्षत्रदेवोंकी ज० पाव० उ० आदेपल्योपम।

(५) तारादेवोंकी ज० $\frac{1}{8}$ उ० $\frac{1}{4}$।

ज्योतीषीदेव चवके पृथ्वी कायमें ज० अन्तरमहुर्त उ० २२००० वर्षकि स्थितिमें उत्पन्न होते है जिसके ऋद्धिके २० द्वार असुर कुमारकि माफीक परन्तु—

(१) लेश्या एक तेजसलेश्यावाला।

(२) ज्ञान तीन तथा अज्ञान तीन कि नियमा।

(३) स्थिति जघन्य $\frac{1}{8}$ उ० एक पल्यो० लक्ष वर्ष।

(४) अनुबन्ध स्थितिकि माफीक।

(५) संभहों, ज० दोय भव उ० दोयभव, काल ज० पल्योपमके आठवे भाग और अन्तर महुर्त उ० एक पल्योपम उपर एक लक्ष बावीसहजार वर्ष आधिक। नौ गमा पूर्ववत् लगालेना परन्तु स्थिति ज्योतीषी देव और पृथ्वी कायकि समझना।

वैमानिकसे सुधर्म देवलोकके देवता चवके पृथ्वीकायमे ज० अन्तर महुर्त उ० २२००० वर्षो कि स्थितिमें उत्पन्न होते है। परन्तु स्थिति, अनुबन्ध तथा गमाका काल. ज० एक पल्योपम उत्तर दोय सागरोपमका समझना। इसी माफीक, ईशांन देवलोकके देवता चवके पृथ्वीकायमें उत्पन्न होते है परन्तु यह ज० एक पल्योपम साधिक उ० दोय सागरोपम साधिक समझना। शेष २० द्वार ऋद्धिका तथा नौ गमा पूर्ववत् लगालेना इति।

इति चौवीसवा शतकका बारहवा उदेशा।

(१३) अप कायका तेरहवा उदेशा—जेसे पृथ्वी कायका उदेशा कहाहै इसी माफीक अपकाय भी समझना परन्तु पृथ्वी कायकि स्थिति उ० २२००० वर्ष कि थी परन्तु यहा अपकायकि स्थिति ७००० वर्ष कि समझना गमाके कालमें ७००० वर्षसे गमा कहना शेष पृथ्वीवत् इति। २४–१३।

(१४) तेउकायका चौदवा उदेशा—अधिकार पृथ्वीकाय माफीक समझना परन्तु देवता चवके तेउकायमें उत्पन्न नही होते है और स्थिति तेउकायकि उ० तीन अहोरात्रीकी है. शेषाधिकार पृथ्वी कायवत् २४–१४

(१५) वायुकायका पन्दरवाउदेशा यह भी पृथ्वीकाय माफीक है परन्तु देवता नहीं आवे· स्थिति ३००० वर्ष किसे गमाका काल समझना शेष पृथ्वीकायवत् इति २४–१५

(१६) वनस्पति कायका शोलवा उदेशा—यह भी पृथ्वीकावत् इसमें देवता उत्पन्न होते है। स्थिति उ० १०००० वर्ष

कि है परन्तु १-२-४-५ इस च्यार गमावोंमें वनस्पतिके जीव अत्य समय अनन्ते जीव उत्पन्न होते है। इस च्यार गमोंकि अपेक्षा ज० दोयभव उ० अनन्तेभव० कालापेक्षा ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० अनन्तोकाल शेष पांचगमा पृथ्वी कायवत् समझना। इति २४-१६

(१७) बेन्द्रियका सतरवा उदेश-पांच स्थावर तीन वैकलेन्द्रिय संज्ञीतीर्यंच, असंज्ञी तीर्यंच, संज्ञी मनुष्य, असंज्ञी मनुष्य, एवं १२ स्थानके जीव मरके बेन्द्रियमें उत्पन्न होते है यहां (बेद्रिंयमें) स्थिति ज० अन्तर महुर्त उ० बारह वर्षकि पाते है आनेवालेके ऋद्धिके २० पूर्ववत् कहना पृथ्वी आदि १-२-४-५ इस च्यार गमामें ज० दोयभव० उ० संख्याते भव करते हैं काल० ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० संख्यातोंकाल लागे शेष पांच गमामें ज० दोयभव उ० आट भव करते है जिस्के गमाका काल बेन्द्रिय तथा इस्मे आनेवाले जीवोंके जघन्य उत्कृष्ट स्थितिसे पूर्ववत् लगा लेना। परन्तु तीर्यंच पांचेन्द्रिय० तथा मनुष्य नौ गमामें ज० दोयभव उत्कृष्ट आठ भव केरते है। शेष पृथ्वीवत् इति २४-१७

(१८) एवं तेन्द्रियका उदेशा० परन्तु स्थिति उ० ४९ अहोरात्रिसे गमा केहना शेष बेद्रिंयवत् इति २४-१८

(१९) एवं चोरिंद्रियका उदेशा० परन्तु स्थिति उ० छे माससे गमा केहना शेष बेन्द्रियवत् इति २४-१९

(२०) तीर्यंच पांचेंद्रियका उदेशा-सातनरक, दशभुवनपति,

व्यंतर, ज्योतीषी, सौधर्म देवलोंकसे यावत् आठवां सहस्र देवलोकके देवता, पांच स्थावर, तीन वैकलेन्द्रिय, तीर्यंच पांचेन्द्रिय स्थानके जीव मरके तीर्यंच पांचेद्रियमें ज० अन्तरमहुर्त और मनुष्य इतने उ० कोडपूर्वकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। जिस्में प्रथम रत्नप्रभा नरकेके नैरिया मरके तीर्यंच पांचेद्रियमें ज० अन्तरमहुर्त उ० कोडपूर्वकि स्थितिमें उत्पन्न होते है. जिस्की ऋद्धि इस माफीक है।

(१) उत्पात–रत्नप्रभा नरकसे।

(२) परिमाण–एक समयमे १–२–३ उ० संख्य असंख्य।

(३) संहनन–छे संहननसे असंहनन अनिष्ट पुद्गल।

(४) अवागहाना–भवधारणी ज० अंगु० असं० भाग० उ० ७॥ धनुष्य ६ अगुल० उत्तर वैक्रय ज० अंगु० संख्य० भाग० उ० १५॥ धनु० १२ अंगुल यह सर्व भवापेक्षा है।

(५) संस्थान० भवधारणी तथा उत्तरवैक्रय एकहुन्डक संस्थान।

(६) लेश्या एक कापोत (७) दृष्टी तीनों।

(८) ज्ञान, तीन ज्ञानकि नियमा तीन अज्ञानकि भजना।

(९) योग तीनों (१०) उपयोग दोनों (११) संज्ञाच्यारों।

(१२) कषाय च्यारों (१३) इन्द्रि पांचोवाला।

(१४) समुद्घात च्यार क्रमःसर।

(१५) वेदना साता असाता (१६) वेद एक नपुंसक।

(१७) स्थिति ज० १०००० वर्ष उ० एक सागरोपम।

(१८) अनुबन्ध स्थिति माफीक।

(१९) अध्यवसाय असंख्याते प्रसस्थ अप्रसस्थ।

(१०) संमझो–भवापेक्षा ज० दोय भव उ० आठ भव कालापेक्षा ज० दशहजार वर्ष अन्तरमहुर्त उ० च्यार सागरोपम च्यार क्रोड पुर्व अधिक इतना कालतक गमनागमन करते है जिस्का नौ गमा ।

(१) ओघसे ओघ० ज० दशहजार वर्ष अन्तर महुर्त उ० च्यार सागरोपम और च्यार कोडपूर्व अधिक ।

(२) ओघसे जघन्य, दश हजार० अन्तमहुर्त उ० च्यार सागरोपम च्यार अन्तरमहुर्त ।

(३) ओघसे उत्कृष्ट–दशहजार० कोडपूर्व उ० च्यार कोडपूर्व च्यार सागरोपम ।

(४) जघन्यसे ओघ० दश हजार अन्तरमहुर्त उ० चालीस हजार वर्ष और च्यार कोडपूर्व ।

(५) ज०से ज० दशहजार वर्ष अन्तरमहुर्त उ० चालीस हजार वर्ष और च्यार अन्तर महुर्त ।

(६) ज० से उत्कृष्ट, दशहजार वर्ष कोडपूर्व उ० चालीस हजार वर्ष और च्यार कोडपूर्व ।

(७) उ० से ओघ, एक सागरोपम अन्तरमहुर्त उ० च्यार सागरोपम और च्यार कोड पूर्व ।

(८) उ०से जघन्य, एक सागरोपम अन्तरमहुर्त उ० च्यार सागरोपम और च्यार अन्तर महुर्त ।

(९) उ० से उ०, एक सागरोपम एक कोडपूर्व उ० च्यार सागरोपम और च्यार कोडपूर्व ।

मध्यम गमा तीन ४–५–६ जिस्मे स्थिति तथा अनुबन्ध जघन्य उत्कृष्ट दश हजार वर्षका है।

उत्कृष्ट गमा तीन ७–८–९ जिस्मे स्थिति तथा अनुबन्ध जघन्य उत्कृष्ट एक सागरोपमका है।

एवं छटी नरक तक परन्तु अवगाहाना लेश्या स्थिति अनुबन्ध अपने अपने स्थानकि कहना गमा सब स्थानपर अपति २ स्थितिसे लगा लेना शेष रत्नप्रभा नरकवत समझना।

सातवी नरकके नैरिया मरके तीर्यंच पांचेन्द्रियमें ज० अंतर महुर्त उ० कोडपूर्व कि स्थितिमें उत्पन्न होते है जिस्के ऋद्धिके २० द्वार रत्नप्रभाकि माफीक परन्तु अवगाहाना भव धारिणी ज० अंगुलके असंख्याते भाग उ० ५०० धनुष्य उत्तर वैक्रय ज० अंगु० संख्यातमें भाग उ० १००० धनुष्य लेश्या एक कृष्ण स्थिति ज० २२ सागरो० उ० ३३ सागरोपमकि अनुबन्ध स्थिति माफीक। भवापेक्षा ज० दोय भव उ० ६ भव करे। कालापेक्षा ज० बावीस सागरोपम अन्तरमहुर्त अधिक उ० छासट (६६) सागरोपम तीन कोडपूर्व अधिक। यह प्रथमके ६ गमाकि अपेक्षा है और ७–८–९ इस तीन गमाकि अपेक्षा ज० दोय भव उ० च्यार भव करे कारण सातवी नरकके उ० दोय भवसे अधिक न करे। कालापेक्षा ज० तेतीस सागरोपम अन्तर महुर्त, उ० ६६ सागरोपम दोय कोडपूर्व अधिक नौ गमाका काल पूर्ववत् लगा लेना (सुगम है।)

पृथ्वीकाय मरके तीर्यंच पांचेन्द्रियमें ज० अन्तर महुर्त उ० कोडपूर्वकि स्थितिमें उत्पन्न होते है जिस्की ऋद्धिके २० द्वार।

(१) उत्पन्न–पृथ्वी कायासे ।

(२) परिमाण–एक समयमें १–२–३ संख्या० असंख्या ।

(३) संहनन–एक छेवटा संहननवाला ।

(४) अवगाहाना ज० उ० अंगुलके असंख्यातमें भाग ।

(५) संस्थान–एक हुन्डक (चन्द्राकार ।)

(६) लेश्या–च्यार–कृष्णा, निल, कापोत, तेजस लेश्या ।

(७) दृष्टि–एक मिथ्यात्व दृष्टीवाला ।

(८) ज्ञान–ज्ञान नही किन्तु अज्ञान दोयवाला ।

(९) योग–एक कायाका (१०) उपयोग दोनोंवाला ।

(११) संज्ञा–च्यारोवाला (१२) कषाय च्यारोवाला ।

(१३) इन्द्रिय एक स्पर्शेंद्रियवाला ।

(१४) समुद्घात तीन वेदनि, कषाय, मरणांतिक ।

(१५) वेदना, साता असाता, (१६) वेद एक नपुंसक

(१७) स्थिति ज० अन्तर महुर्त उ० २२००० वर्षवाला

(१८) अनुबंध स्थिति माफीक समझना

(१९) अध्यवसाय, असंख्याते, प्र० अप्रसस्थ.

(२०) संभ हो. भावादेशेणं ज० दोयभव उ० आठ भव करे । कालापेक्षा ज० दोयअन्तरमहूर्त, उ० च्यार कोडपुर्व और ८८००० वर्ष इतने काल तक गमनागमन करे । जिस्का गमा ९ पृथ्वीकायेके उदेशामें तीर्यंच पांचेद्रिंय उत्पन्न समय ९ गमा कह आये हैं उसी माफीक समझना। एवं अपकाय, तेउकाय, वायुकाय वनास्पतिकाय, बेद्रिंय, तेद्रिंय, चौरिन्द्रिय भी समझना ऋद्धिके

२० द्वार अपने अपने स्थानसे और नौ गमा अपने अपने कालसे लगा लेना, पृथिव्यादिके स्थानमें प्रथम तीर्यंच पांचेद्रिंय गमा था इसी माफीक यहा भि समझ लेना।

तीर्यंच पांचेद्रिंयका दंडक एक है परन्तु इस्में (१) संज्ञी तीर्यंच पांचेद्रिंय (२) असंज्ञी तीर्थंच पांचेद्रिंय, जिस्मे भि संज्ञी तीर्यंच पांचेद्रिंयका दोय भेद है (१) संख्याते वर्षवाले (कर्मभूमि) (२) असंख्याते वर्षवाले युगलीया। यहांपर वीसवादंडक समुच्चय तीर्यंच पांचेद्रिंयका चल रहा है जिस्मे च्यारों भेद समझ लेना, संज्ञी, असंज्ञी, कर्मभूमि, अकर्मभूमि.

असंज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय मरके तीर्यंच पांचेन्द्रियके दंडकमें ज० अन्तरमहुर्त उ० पल्योपमके असंख्यातमें भागकि स्थितिमें उत्पन्न होता है। ऋद्धिके २० द्वार जैसे पृथ्वीकायमें उत्पन्न समय कहा था इसी माफीक समझना। भवापेक्षा ज० दोय भव० उ० दोयभव० कालापेक्षा ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० पल्योपमके असंख्यातमें भाग और कोडपूर्व जिस्के गमा नौ इस मुजब।

(१) गमे भव ज० दोय० उ० २ काल ज० दोय अन्तरमहुर्त, उ० पल्यो० असं० भाग और कोडपूर्व.

(२) गमे—भव ज० दोय० उ० ८ काल ज० दोय अन्तर उ० च्यार कोडपूर्व और च्यार अंतरमहुर्त।

(३) गमे—परिमाणादि रत्नप्रभावत, भव ज० उ० २ काल ज० पल्यो० असं० भाग अन्तरमहुर्त, उ० पल्योपमके असंख्यातमें भाग और कोडपूर्व अधिक।

(४) गमें पृथ्वीवत्, भव ज० दोय उ० आठ काल ज० दोय अंतरमहुर्त उ० च्यार कोडपूर्व और च्यार अंतरमहुर्त।

(५) गमें चोथावत् काल उ० आठ अन्तरमहुर्त।

(६) गमें चोथावत् काल ज० कोडपूर्व अन्तरमहुर्त उ० च्यार कोडपूर्व च्यार अन्तरमहुर्त।

(७) गमें पृथ्वीवत् भव ज० उ० दोयभव काल ज० कोडपूर्व अन्तरमहुर्त उ० पल्योपमके असंख्यातमें भाग और कोडपूर्व।

(८) गमें पृथ्वीवत् भव ज० दोय उ० आठ, काल कोडपूर्व अन्तरमहुर्त उ० च्यार कोडपूर्व और च्यार अन्तरमहुर्त।

(९) गमें भव ज० उ० दोय काल ज० पल्योपमके असंख्याते भाग और कोडपूर्व एवं उत्कृष्ट। शेष ऋद्धि समुच्चयवत्।

संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय संख्याते वर्षवाला जो तीर्यंच पांचेन्द्रियमें ज० अन्तरमहुर्त उ० तीन पल्योपमकि स्थितिमें उत्पन्न होता है, कारण ज० स्थिति कर्मभूमिमें और उत्कृष्ट स्थिति युगलीयोंकि समझना। ऋद्धिके २० द्वार जेसे संख्याता वर्षवाला संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय रत्नप्रभा नरकमें उत्पन्न होते समय कही है इसी माफीक समझना। और नौ गमा इस माफीक।

(१) गमें भव ज० दोयभव उ० दोयभव काल ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० तीन पल्योपम और कोडपूर्व परन्तु अवगाहाना ज० अंगुलके असंख्यातमें भाग उ० १००० जोजनकि।

(२) दुजे गमें भव ज० दोय उ० आठ काल ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० च्यार कोडपूर्व और च्यार अन्तरमहुर्त।

(३) गमें ज० उ० तीन पल्योपमकि स्थितिमें उत्पन्न होवे परिमाण १-२-३ उ० संख्याते जीव उत्पन्न होते है। अवगाहाना पूर्ववत् भव ज० दोय उ० दोय भव करे काल ज० अन्तर महुर्त और तीन पल्योपम उ० तीन पल्योपम और कोडपूर्व ।

(४-५-६) इस तीन गमाकि ऋद्धि तीर्यच पांचेन्द्रिय जो पृथ्वीकायमें गया था उस माफीक भव ज० दोयभव उ० आठ भव करे काल चोथे गमें अन्तरमहुर्त कोडपूर्व उ० च्यार अन्तर महुर्त और च्यार कोडपूर्व, पांचवे गमें ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० आठ अन्तरमहुर्त, छटे गमें कोडपूर्व और अन्तरमहुर्त उ० च्यार कोडपूर्व और च्यार अन्तरमहुर्त ।

(७) सातवे गमें ज० उ० कोडपूर्ववाला जावे भव ज० उ० दोय करे काल ज० कोडपूर्व और अन्तरमहुर्त उ० तीन पल्योपम और कोडपूर्व ।

(८) गमें भव ज० दोय० उ० आठ भव काल ज० कोड पूर्व अन्तरमहुर्त उ० च्यार कोडपूर्व और च्यार अंतरमहुर्त ।

(९) गमें परिमाण स्थिति अनुबंध तीसरे गमेंकि माफीक भव ज० उ० दोयभव करे काल तीन पल्योपम और कोडपूर्व उ० तीन पल्योपम और कोडपूर्व। तथा असंख्याते वर्षके तीर्यच युगलीये होते है वास्ते वह मरके तीर्यचमें नहीं जाते है उन्होंकि गति केवल देवतोंकि ही है वास्ते यहा उत्पात नहीं है। इति ।

मनुष्य संज्ञी तथा असंज्ञी दोय प्रकारके होते है जिस्में असंज्ञी मनुष्य मरके तीर्यच पांचेन्द्रियमें ज० अंतरमहुर्त उ०

कोडपूर्वकि स्थितिमें उत्पन्न होता है ऋद्धिके २० द्वार पृथ्वीकायमें उत्पन्न समय कहा था इसी माफीक। भव तथा काल और गमा असंज्ञी तीर्यंचमें कहा इस माफीक समझना।

संज्ञी मनुष्य संख्याते वर्षके आयुष्यवाला (कर्मभूमि) मरके तीर्यंच पांचेंद्रियमें ज० अन्तरमहुर्त उ० कोडपूर्वकि स्थितिमें उत्पन्न होते है जिस्की ऋद्धि जेसे मनुष्य पृथ्वीकायमें उत्पन्न समय कही थी इसी माफीक समझना। भव् तथा काल नौ गमा द्वारा बतलाते है।

(१) गमें भव ज० उ० २ भव काल ज० दोय अंतरमहुर्त उ० तीन पल्योपम और कोडपूर्व।

(२) गमें भव ज० दोय उ० आठ भव काल ज० दोय अन्तरमहुर्त उ० च्यार कोडपूर्व और च्यार अन्तरमहुर्त।

(३) गमें भव ज० उ० दोय भव, काल ज० प्रत्यक मास और तीन पल्यो० उ० तीन पल्यो० और कोडपूर्व। परन्तु यहा ऋद्धिमें अवगाहाना ज० प्रत्यक अंगुल उ० पांचसो धनुष्य और स्थिति ज० प्रत्यक मास उ० कोडपूर्व कि समझना।

(४–५–६) गमें संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय साद्दश परन्तु परिमाण १–२–३ उ० संख्याते समझना।

(७) गमें० भव ज० उ० दोय, काल कोडपूर्व अन्तरमहुर्त उ० तीन पल्योपम प्रत्यक कोडपूर्वाधिक ऋद्धिमें अवगाहाना ज० उ० पांचसो धनुष्य स्थिति ज० उ० कोडपूर्व कि शेष प्रथम गमावत्

(८) गमें सातवावत् परंतु भव ज० २ उ० आठ भव काल ज० अंतरमहुर्त कोडपूर्व उ० च्यार कोडपूर्व च्यार अंतरमहुर्त।

(९) गमें, पूर्ववत् परंतु भव ज० उ० दोय काल ज० तीन पल्यो० कोडपूर्व एवं उत्कृष्ट भी समझना। असंख्याते वर्षका मनुष्य देवतोंमें जाते हैं। वास्ते यह नहीं काहा है।

दश भुवनपति अंतर ज्योतीषी सौ धर्म देवलोकसे यावत् सहस्रदेव लोक तकके देवता चवके तीर्यंच पांचेन्द्रियमें ज० अंतर महुर्त उ० कोडपूर्वकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। जीनोकि ऋद्धि जेसे असुर कुमारके देव पृथ्वीकायमें उत्पन्न समय कही थी इसी माफीक समझना, भव तथा काल नौ गमा द्वारे कहते है। भव नौ गमामें ज० दोय उ० आठ आल।

(१) गमें	१०००० वर्ष	अन्तर०	उ०	४ सागरों० सा०	४ कोड०
(२) गमें	,,	,,	,,	४० हजार वर्ष	४ अन्तर०
(३) गमें	,,	१ कोड०	,,	४ सा० सा०	४ कोड०
(४) गमें	,,	अन्तर०	,,	४० हजार०	४ कोड०
(५) गमें	,,	,,	,,	४० ,,	४ अंतर०
(६) गमें	,,	कोडपूर्व	,,	,, ,,	४ कोड०
(७) गमें	सा० सा०	अन्तर	,,	४ सा० सा०	४ कोड०
(८) गमें	,,	,,	,,	४ सा० सा०	४ अंतर०
(९) गमें	,,	कोडपूर्व	,,	४ सा० सा०	४ कोड०

यह असुरकुमार और तीर्यंचके नौ गमा कहा है इसी माफीक अपनी अपनि स्थितिमें तीर्यंच पांचेन्द्रियकि स्थितिसे गमा लगा लेना ऋद्धिमें अवगाहाना तथा लेश्या और स्थिति अनुबन्ध अपने अपने हो सो कहेना यह सब बुदंडकवालोंको सुगम है वास्ते नहीं लिखा है स्वउपयोग कहना इति २४–२०।

(२१) मनुष्यका उद्देशा—मनुष्यके दंडकमें संज्ञी, असंज्ञी, संख्याते वर्षवाले, असंख्याते वर्षवाले यह सब मनुष्यके दंडकमें हि गिने जाते है। छे नरक दश भुवनपति व्यन्तर, ज्योतीषी, बारह देवलोक, नौग्रीवैग० पांच अनुत्तरवैमान, तीन स्थावर, तीन वैकलेन्द्रिय, तीर्थंचपंचेंद्रिय और मनुष्य, इतने स्थानके जीव मरके, मनुष्यमें ज० अन्तरमहुर्त उ० तीन पल्योपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। "यथासंभव" जिस्मे।

रत्नप्रभा नरकसे मरके जीव मनुष्यमें ज० प्रत्यकमास उ० कोड पूर्व कि स्थितिमें उत्पन्न होते है। ऋद्धिके २० द्वार जेसे रत्नप्रभासे तीर्थंच पांचेन्द्रियमे उत्पन्न समय कही थी इसी माफोक समझना परन्तु यहा परिमाणमे १-२-३ उं० संख्याते उत्पन्न होते है क्युकि असंज्ञी मनुष्यमें तो नारकी उत्पन्न होवे नही और संज्ञी मनुष्यमें संख्यातेसे ज्यादे स्थान हे नही और गमामें मनुष्यका जघन्यकाल प्रत्यक मासका केहना कारण प्रत्यक माससे कम स्थितिमें उत्पन्न नही होते है। वास्ते गमा प्रत्यक माससे केहना। इसी माफीक शार्कर प्रभा—यावत् तमप्रभ भी समझना, परन्तु यहांसे आया हुवा जीव मनुष्य जघन्य स्थिति प्रत्यक वर्षसे कम नही पावेगा वास्ते गमामे मनुष्यकि ज० स्थिति प्रत्यक वर्ष कि कहना शेष ऋद्धिमें अवगाहाना लेश्या आयुष्य अनुबन्धादि स्व स्वस्थानसे स्वउपयोगसे कहना "सातवी नरकका अभाव"

पृथ्वीकाय मरके, मनुष्यमें ज० अन्तर महुर्त उ० कोडपूर्व कि स्थितिमें उत्पन्न होते है। जिस्के ऋद्धिके २० द्वारा और

नौ गमा पूर्व पृथ्वीकाय तीर्थंच पांचेन्द्रियमें उत्पन्न समय कहा था इसी माफीक कहना परन्तु तीसरे छटे नौमें गमामें परिमाण १-२-३ उ० संख्याते समझना और प्रथम गमे पृथ्वीकाय अपने जघन्य कालमें अध्यवसाय प्रसस्थ अप्रसस्थ दोनों होते है दुसरेगमे अप्रसस्थ तीसरे गमें प्रसस्थ शेष तीर्थंच पांचेन्द्रिय माफीक है एवं अपकाय वनास्पतिकाय बेन्द्रिय, तेन्द्रिय, चोरिन्द्रिय, असंज्ञी तीर्थंच पांचेन्द्रिय संज्ञी तीर्थंच पांचेन्द्रिय असंज्ञी मनुष्य संज्ञी मनुष्य यह सब जेसे तीर्थंच पांचेन्द्रियके दंडकमें उत्पन्न समय ऋद्धि तथा गमा कहा था इसी माफीक समझना परन्तु परिमाण स्थिति अनुबन्धादि अपने अपने स्थानसे कहना ।

असुर कुमारके देव चवके मनुष्यमें ज० प्रत्यक मास उ० कोडपूर्वकि स्थितिमें उत्पन्न होते है ऋद्धिके २० द्वार जेसे तीर्थंच पांचेन्द्रियमें उत्पन्न समय कहा था इसी माफक कहना परन्तु परिमाणमें १-२-३ उ० संख्याते कहना । और गमामें तीर्थंचका जहा जघन्य अन्तर महुर्तका, काल, कहा था वह यहां (मनुष्यमें) प्रत्यक मासका कालसे गमा कहना । एवं दश भुवनपति व्यन्तर ज्योतीषी सौधर्म इशांन देवलोक तक और तीजे देवलोकसे नौ ग्रीवैग तकके देव मनुष्यमें ज० प्रत्यक वर्ष और उ० कोडपूर्वमें उत्पन्न होते है ऋद्धिके २० द्वार स्वउपयोगसे कहना कारण लघु दंडक कण्ठस्थ करनेवालोंको बहुत ही सुगम है वास्ते यहा नहीं लिखा है नाणन्ते और गमा तथा भवके लिये प्रथम थोकडेमें विस्तारसे लिख आये है । इतना ध्यानमें रखना कि नौग्री वैगमें अवगाहाना तथा संस्थान एक भव धारणी है समुद्वात सज्ञा

के पांच है परन्तु वैक्रय और तेजस करते नहीं है। आठवा देवलोक तक ज० दोय भव उ० आंठ भव करते है। अणतु नौवा देवलोकके देव चवके मनुष्यमें ज० प्रत्यक वर्ष उ० कोडपूर्वकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। भव ज० दोय उ० छे। काल ज० अठारा सागरोपम प्रत्यक वर्ष उ० सतावन सागरोपम तीन कोडपूर्व इसी माफीक नौ गमा परन्तु ऋद्धि सब देवलोकके स्थानसे कहना इसी माफोक दशवा, इग्यारवा, बारहवा देवलोक और नौ ग्रीवैगम भी कहना स्थिति गमा स्वपयोगसे लगा लेना। ऋद्धिके २० द्वार प्रत्यक स्थानपर कहना चाहिये।

विजय वैमानके देव मनुष्यमें ज० प्रत्यक वर्ष उ० पूर्वकोड स्थितिमें उत्पन्न होते है। परन्तु अवगाहाना एक हाथ दृष्टीएक सम्यगदष्टी, ज्ञानतीन, स्थिति ज० ३१ सागरोंपम, उ० ३३ सागरोपम शेष ऋद्धि पूर्ववत् भव ज० दोय उ० च्यार भव, काल ज० ३१ सागरोंपम प्रत्यक वर्ष उ० ६६ सागरोपम, दोय कोडपूर्व अधिक इसी माफोक शेष आठ गमा भी समझना। एवं विजयंत, जयन्त, अपराजित वैमान भी समझना। तथा सर्वार्थसिद्धि वैमानवाले देव ज० दोयभव, उ० भि दोयभव करते है यह गमा ७-८-९ तीन होगा काल

(७) गमें काल तेतीस सागरोपम प्रत्यक वर्ष

(८) गमें काल ,, ,, ,,

(९) गमें काल ,, ,, कोडपूर्व

शेष छे गमा तुट जाते है कारण सर्वार्थसिद्ध वैमानमे ज० उ० तेतीस सागरोपम कि ही स्थिति है। इति २४-२१।

(२२) वाणमित्र (व्यन्तर) देवतों का उद्देशा-संज्ञो तीर्यंच असज्ञी तीर्यंच संज्ञो मनुष्य तथा मनुष्य तीर्यंच युगलीया मरके व्यन्तर देवतावोंमें ज० दश हजार वर्ष उ० एक पल्योपमकि स्थितिमें उत्पन्न होता है इसकि २० द्वारकि ऋद्धि तथा नौ गमा नगकुमारकि माफीक समझना तथा युगलीया उत्कृष्ट स्थितिवाला भी व्यन्तर देवोंमें जावेगा तों एक पल्योपमकि स्थिति पावेगा अधिक स्थितिका अभाव है। इति २४—२२

(२३) ज्योतीषी देवोंका उद्देशा-संज्ञा तीर्यंच संज्ञो मनुष्य और मनुष्य तीर्यंच युगलीये मरके ज्योतीषी देवतोंमें ज० पल्योपमके आठ वे भाग उ० एक पल्योपम एक लक्ष वर्षकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। विवरण—

असंख्यात वर्षके संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रिय, मरके ज्योतीषी देवतावोंमें उत्पन्न होते है परंतु अपनि स्थिति ज० पल्योपमके आठ वे भाग उत्कृष्ट तीन पल्योपमवाले वहां ज्योतीषीयोंमें ज० $\frac{1}{8}$ उ० एक पल्यों० लक्ष वर्ष अधिक। शेष ऋद्धि असुरकुमारकि माफीक एव ज० उ० दोय भव करे जिसके नौ गमा।

(१) गमें पल्यो० $\frac{1}{8}$ उ० च्यार पल्यो० लक्ष वर्ष।

(२) गमें ,, $\frac{1}{8}$ उ० तीनपल्यो० $\frac{1}{8}$ अधिक।

(३) गमें दोय पल्यो० दो लक्ष वर्ष उ० ४ प० लक्ष वर्ष।

(४) गमें, ज० उ० पावपल्यो० परन्तु अवगाहाना ज० प्रत्येक धनुष्य उ० १८०० धनुष्य साधिक।

(५-६) यह दोय गमा तुट जाते है=शुन्य है। कारण

जघन्य साधिक कोडपूर्वकि स्थिति युगलीयोंकि होती है परन्तु ज्योतीषीयोंमें इस स्थितिका स्थान नहीं है ।

(७) गमें ३ पल्यो० $\frac{1}{8}$ उ० च्यार पल्यो० लक्ष वर्ष ।

(८) गमें ३ पल्यो० $\frac{1}{8}$ उ० तीनपल्यो $\frac{1}{8}$ साधिक ।

(९) गमें ४ पल्यो० लक्ष वर्ष एवं उत्कृष्ट ।

संख्याते वर्षायुवाला तीर्यंच पांचेन्द्रिय ज्योतीषी देवोंमें उत्पन्न होते है । वह असुरकुमारकि माफीक ऋद्धि और नौगमा समझना ।

असंख्याते वर्षवाले संज्ञी मनुष्य मरके ज्योतीषो देवोंमें उत्पन्न होते है वह असंख्याते वर्षवाले संज्ञो तीर्यंचकि माफीक समझना । इतना विशेष है कि १–२–३ इस तीन गमामें अवगाहाना ज० नौ सो धनुष्य साधिक उ० तीन गाउकि ४. इस गमामें अवगाहाना ज० उ० साधिक नौसो धनुष्य तथा ७–८–९ इस तीन गमामें अवगाहाना ज० उ० तीन गाउकि है शेष पूर्ववत् ।

संख्याते वर्षके संज्ञो मनुष्य ज्योतीषीयोंमे उत्पन्न होते है जिस्के ऋद्धि तथा नौगमा, जेसे मनुष्य असुरकुमारमे उत्पन्न हुवा था परन्तु यहा पर स्थिति मनुष्य और ज्योतीषो देवोंसे गमा कहना शेष पूर्ववत् इति २४–२३ ।

(२४) वैमानिक देवतावोंका उद्देशा–बारह देवलोक, नौग्रीवेग, पांचानुत्तर वैमान यह सब वैमानिकमें गीने जाते है । प्रथम सौधर्म देवलोकके अन्दर संज्ञो तीर्यंच संख्यात वर्ष वाले असंख्यात वर्षवाले संज्ञो मनुष्य संख्याते वर्षवाले उत्पन्न होते है । यह सर्व ज्योतीषीयोंके माफीक समझना, परन्तु असंख्याते वर्षवाले तीर्यंच

पंचेन्द्रिय मरके सौधर्म देवलोकमें ज० एक पल्योपम उ० तीन पल्योपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। वह समदृष्टी, मिथ्या दृष्टी, दोनों प्रकारके और दोय ज्ञान दोय अज्ञानवाले, स्थिति ज० एक पल्योपम उ० तीन पल्योपम एवं अनुबन्ध भी समझना। शेष ज्योतीषीयोंके माफीक. भव ज० उ० दोय करे काल ज० दोय पल्योपम उ० छे पल्योपम। नौ गमा।

(१) गमें ज० दोय पल्यो० उ० छे पल्योपम
(२) गमें ज० ,, उ० च्यार पल्योपम
(३) गमें ज० चार पल्योपम उ० छे पल्योपम
(४) गमें ज० दोय पल्योप० उ० दोय पल्योपम अवगाहना
(५) गमें ज० ,, ,, } ज० प्रत्यक मनुष्य उ० दोय गाउ की।
(६) गमें ज० ,, उ० चार पल्योपम
(७) गमें ज० छे पल्यो उ० छे पल्यो०
(८) गमें ज० च्यार पल्यो० उ० च्यार पल्यो०
(९) गमें ज० छे पल्यो० उ० छे पल्यो०

संख्याते वर्षवाले संज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रियका अलावा असुरकुमारके माफीक परन्तु मध्यमके ४–५–६ तीन गमामें दृष्टी दोय, ज्ञान दोय, अज्ञान दोय केहना। यह नौ गमा सौधर्म देवलोक और तीर्यंच पांचेन्द्रियकि स्थितिसे लगाना।

असंख्याते वर्षवाला मनुष्य जो सौधर्म देवलोकमे उत्पन्न होता है वह सब असंख्याते वर्षके तीर्यंचके माफीक सात गमा समझना परन्तु पहले, दुसरे गमामें अवगाहना ज० एक गाउ उ०

तीन गाउ तथा तीसरे गमें ज० उ० तीन गाउकि चोथे गमे ज० उ० एक गाउ । पीछले ७–८–९ तीन गमामें ज० उ० तीन गाउ कि आवगाहान शेष पूर्ववत् ।

संख्याते वर्षवाला संज्ञी मनुष्य सौधर्म देवलोकमें ज० एक पल्योपम उ० दोयसागरोपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। शेष ऋद्धि और नौगमा असुरकुमारकि माफीक समझना परन्तु यहांपर गमा सौधर्म देवलोक और मनुष्यकि स्थितिसे बोलना ।

इशांन देवलोकमें पूर्वकि माफीक कर्मभूमि अकर्मभूमि, तीर्यच पांचेन्द्रि तथा मनुष्य उत्पन्न होते है वह सब सौधर्मवत् समझना परन्तु यहांपर स्थिति ज० एक पल्योपम साधिक होनेसे युगलीयोंसे आनेवालोंकि स्थिति साधिकपल्योपम, अवगाहाना साधिक एक गाउ तथा चोथा गमामे वहां दोयगाउ अवगाहाना थि० वह यहांपर साधिक दोयगाउ कहना शेष सौधर्मवत् । गमामें इशान देवलोककि स्थिति ज० एक पल्योपम साधिक. उ० दोय सागरोपम साधिक कहना ।

सनत्कुमार देवलोकके अन्दर संख्याते वर्षवाला संज्ञी तीर्यच पांचेन्द्रिय ज० दोय सागरोपम उ० सात सागरोपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है जिस्की ऋद्धिके २० द्वार असुरकुमारवत् परन्तु अपने जघन्य कालके ४–५–६ गमामें लेश्या पांच समझना शेष सौधर्मवत् । भव ज० २ उ० ९ काल तीर्यच और सनत्कुमार देवलोकसे स्वउपयोग लगा लेना ।

संख्यात वर्षका संज्ञी मनुष्य सनत्कुमार देवलोकमें उत्पन्न होते है वह शार्करप्रमा नरकवत् समझना परन्तु गमामें स्थिति मनु-

ष्य तथा सनत्कुमार देवलोककी कहना । यथा—

(१) गमें	प्रत्यक वर्ष,	दोयसागरो०	उ०	च्यार	कोडपूर्व	२८	सागरो०
(२) गमें	,,	,,	उ०	४	प्रत्यवर्ष	आठ	सा०
(३) गमें	,,	,,	उ०	४	कोडपूर्व	२८	सा०
(४) गमें	,,	,,	उ०	४	पु०	२८	सा०
(५) गमें	,,	,,	उ०	४	प्रत्य०	८	सा०
(६) गमें	,,	,,	उ०	४	कोड०	२८	सा०
(७) गमें	कोडपूर्व	सातसागरो०	उ०	४	प्र०	२८	सा०
(८) गमें	,,	,,	उ०	४	प्र०	८	सा०
(९) गमें	,,	,,	उ०	४	कोड०	२८	सा०

एवं महेद्रदेवलोक, ब्रह्मदेवलोक, लांतकदेवलोक, महाशुक्रदेवलोक, सहस्त्रारदेवलोक परन्तु गमामें स्थिति अपने अपने देवलोककि जघन्य उत्कृष्टसे गमा बोलना। विशेष है कि लांतकदेवलोकमें संज्ञी तीर्यच पांचेद्रिय अपनि ज० स्थितिकालमें लेश्या छवों कहना मनुष्य तथा तीर्यंच संहनन पांचवे छटे देवलोकमें पांचसंहननवाला जावे छेवटा वर्जके । सातवा आठवा देवलोकमें च्यार संहननवाला जावे कीलीका संहनन वर्जके ।

अणत् नौवा देवलोक,=संख्याते वर्षवाला संज्ञी मनुष्य मरके नौवा देवलोकमें ज० अठारा सागरोपम उ० उगणीस सागरोपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है ऋद्धि पूर्ववत् परन्तु संहनन तीन प्रथमके. भव ज० तीन भव उ० सात भव करे काल ज० अठारा सागरोपम दोय प्रत्यक वर्ष उ० सतावन सागरोपम च्यार कोडपूर्व

अधिक। एवं शेष आठ गमा भी लगा लेना. यावत् बारहवां देवलोक तक परन्तु स्थिति स्व स्व स्थानसे कहना, गमा नौ, भव ज० तीन भव उ० सात भव। बारहवा दे० और मनुष्य।

(१) गमें ज०	प्रत्येक वर्ष २१ सागरो०	उ०	६६	सा०	४	कोड
(२) गमें ज०	,, ,,	उ०	६६	सा०	४	प्रत्येवर्ष
(३) गमें ज०	,, ,,	उ०	६६	सा०	४	कोड०
(४) गमें ज०	,, ,,	उ०	,,			,,
(५) गमें ज०	,, ,,	उ०	६६	सा०	४	प्रत्ये०
(६) गमें ज०	,, ,,	उ०	६६	सा०	४	कोड०
(७) गमें ज०	कोडपूर्व २२ सा०	उ०	,,			,,
(८) गमें ज०	,, ,,	उ०	६६	सा०	४	प्रत्ये०
(९) गमें ज०	,, ,,	उ०	६६	सा०	४	कोड०

एवं नौग्रीवैग परन्तु प्रथमके दो संहननवाला आवे। गमा नौग्रीवैगकि स्थितिसे लगा लेना।

विजयवैमानमें संख्याते वर्षवाला संज्ञी मनुष्य उत्पन्न होते है वह ज० ३१ सागरोपम उ० ३३ सागरोपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। ऋद्धि पूर्ववत् परन्तु संहनन एक प्रथमवाला, दृष्टी एक सम्यगदृष्टी, ज्ञानी ज्ञानवाला शेष पूर्ववत्। भव ज० ३ उ० ५ भव गमा नौ।

(१) गमें	प्रत्येवर्ष ३१ सा०	उ०	६६	सा०	३	कोडपूर्व
(२) गमें	,, ,,	उ०	६२	सा०	३	प्रत्ये०
(३) गमें	,, ,,	उ०	६६	सा०	३	कोड०
(४) गमें	,, ,,	उ०	६६	,,		,,

(५) गमें	,,	,,	उ० ११	सा० ३	प्रत्ये०
(६) गमें	,,	,,	उ० ११	सा० ३	कोड०
(७) गमें	कोडपुर्व	३३ सा०	उ० ११	सा० ३	कोड०
(८) गमें	,,	,,	उ० ११	सा० ३	प्रत्ये०
(९) गमें	,,	,,	उ० ६६	सा० ३	कोडपूर्व

एवं विजयन्त, जयन्त, अपराजित,

सर्वार्थ सिद्ध वैमानके अंदर संख्याते वर्षवाला संज्ञी मनुष्योत्पन्न होते है वह ज० उ० तेतीस सागरोपमकि स्थितिमें उत्पन्न होते है। ऋद्धि स्व उपयोगसे समझना। गमा ३ तीजा छटा नौवा।

(१) तीजे गमे भव तीन करे काल ज० ३३ सागरोपम दोय प्रत्यक वर्ष अधिक उ० ३३ सा० २ कोडपूर्व०।

(२) छठे गमें भव तीन—काल ३३ सा० दोय प्रत्येक वर्ष उ० ३३ सा० दोय प्रत्येक वर्ष अधिक।

(३) नौवा गमें भव तीन काल ज० उ० ३३ सागरोपम दोय कोडपूर्वाधिक।

अवगाहाना तीजे छठे गमें ज० प्रत्येक हाथकि नौवां गमें ज० उ० पांचसो धनुष्यकि। स्थिति ज० उ० कोडपूर्वकि इति २४—२४

इस गमा शतकमें बहुतसे स्थानपर पूर्वकि भोलामण देते हुवे गमा नहीं लिखा है इस्का कारण प्रथम तों हमारा इरादाही कण्ठस्थ करानेका है अगर सरूयातसे कंठस्थ करेंगे उन्होंके लिये सक्के सब गमा कण्ठस्थ ही हो जायगा।

ऋद्धिके बाराभे यह विषय बहुत सुगम है जोकि लघु दंडकके जाननेवाला सहजमें ही समझ शक्ता है ।

गमा और ऋद्धिके लिये हमने प्रथम थोकडाही अलग बना दीया है अगर पेस्तर वह थोकडा पढ लिया जायगा तो फीर बहुत सुगम हो जायगा ।

पाठक वर्गको इस बातको खास ध्यानमें रखनि चाहिये कि स्वल्प ही ज्ञान क्यों न हो, परन्तु कण्ठस्थ किया हुवा हो वह इतना तो उपयोगी होजाता है कि भिन्न भिन्न विषयमें पूर्ण मदद-कार बनके विषयको पूर्ण तौर ध्यानमें जमा देते है ।

इस शीघ्र बोधके सब भागमें हमारा प्रथम हेतु ज्ञानाभ्यासी-योंको कण्ठस्थ करानेका है और इसी हेतुसे हम विस्तार नहीं करते हुवे संक्षिप्तसे ही सार सार समझा देते है । आसा है कि इस हमारे इरादेको पूर्ण कर पाठक अपनि आत्माका कल्याण आवश्य करेगा । किमधिकम् ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सचम् ।

इति शीघ्रबोध भाग २३ वां समाप्त ।

श्री कक्कसूरीश्वरसद्गुरुभ्योनमः

अथश्री

शीघ्रबोध भाग २४वां.

थोकडा नं० १

सूत्र श्री भागवतीजी शतक २१ वां

(वर्ग आठ)

इस इकवीसवां शतकके आठ वर्ग और प्रत्येक वर्गके दश दश उदेशा होनेसे ८० उदेशा है। आठ वर्गके नाम।

(१) शाली=गहु जब ज्वारादिका वर्ग
(२) कलमुग=चीणा मठरादिका ,,
(३) अलसी=कसुंबादिका ,,
(४) वांस=वेत लता आदिका ,,
(५) इक्षु=सेलडी जातिका ,,
(६) डाम=तृणजातिका ,,
(७) अक्कोहरा=एक जातिके वृक्षमें दुसरि जातिका-[वृक्ष उत्पन्न होना
(८) तुलसी=आदि वेलीयोंका वर्ग

प्रथम शाली आदिके वर्गका मूलादि दश उदेशा है जिस्मे पहला उदेशापर बत्तीसद्वार उतारेगा यथा—

(१) उत्पाद द्वार—शालीके मूलमें कितने स्थानसे जीव आय के उत्पन्न होते है ? तीर्यंचके ४६ भेद जेसे तीर्यंचके ४८ भेद

मानेगये है जिस्मे वनास्पतिके ६ भेद माना है यहां पर सूक्षम बादरके पर्याप्ता अपर्याप्त एवं च्यार माना है वास्ते ४६ स्थाना और मनुष्यके तीन भेद है कर्मभूमि मनुष्यका पर्याप्ता अपर्याप्त और समुत्सम एवं ४९ स्थानका जीव मरके शालीके मूलमे आसक्ते है।

(१) परिमाण द्वार—एक समयमें कितने जीव उत्पन्न होसक्ते है। एक दोय तीन यावत संख्याते असंख्याते।

(३) अपहरन द्वार—एक समय उत्कृष्ट असंख्याते जीव उत्पन्न होते है उस जीवोंको प्रत्यक समय एकेक जीव निकाला जावेतो कितना काल लागे? उस्को असंख्याती सर्पिणी उत्सर्पिणी जीतना काल लागे।

(४) अवगाहना द्वार—ज० अंगुलके असंख्यातमे भाग० उत्कृष्ट प्रत्येक धनुष्यकि होती है।

(५) बन्धद्वार—ज्ञानावर्णिय कर्म बन्धक (१) किसी समय एक जीव उत्पन्न कि अपेक्षा एक जीव मीलता है (२) कीसी समय बहुत जीव उत्पन्न समय बहुत जीव मीलता है एवं शेष सात कर्मोका दोय दोय भांगा समझना परन्तु आयुष्य कर्मके आठ भांगा होता है यथा (१) आयुष्य कर्मका बन्धक एक (२) अबन्धक एक (३) बन्धक बहुत (४) अबन्धक बहुत (५) बन्धक एक, अबन्धक एक (६) बन्धक एक अबन्धक बहुत (७) बन्धक बहुत अबन्धक एक (८) बन्धक बहुत अबन्धक भी बहुत।

(६) वेदेद्वार—ज्ञानावर्णिय कर्म वेदनावाला एक तथा घणा और साता असाता वेदनिय कर्मका भांगा आठ शेष कर्मोका दो दो भांगा पूर्ववत समझना।

(७) उदयद्वार–ज्ञानावर्णिय उदयवाळा एक ज्ञाना० उदयवाळा बहुत एवंयावत् अंतराय कर्मका ।

(८) उदिरणाद्वार–आयुष्य और वेदेनिय कर्मोका आठ आठ भांगा शेष छे कर्मोका दो दो भागा पूर्ववत ।

(९) लेश्याद्वार–शाळीके मूळमें जीव उत्पन्न होते है उसमे लेश्या स्यातकृष्ण स्यातूनिळ स्यातूकापात लेश्या होती है बहुत जीवों अपेक्षा २६ भागा होते है देखो शीघ्र० भाग ८ उत्पेळोधिकार ।

(१०) दृष्टीद्वार दृष्टी एक मिथ्यात्वकि भांगा दोय । एक जीवोत्पन्नापेक्षा एक, बहुत जीवोत्पन्नापेक्षा बहुत ।

(११) ज्ञानद्वार–अज्ञानी एक अज्ञानी बहुत ।

(१२) योगद्वार–काययोगि एक काययोगि बहुत ।

(१३) उपयोगद्वार–साकार अनाकारके भांगा आठ ।

(१४) वर्णद्वार–जीवापेक्षा वर्णादि नही होते हैं और शरीरापेक्षा पांच वर्ण दोय गंध पांच रस आठ स्पर्श पावे ।

(१५) उश्वासद्वार–उश्वास, निःश्वासा नोउश्वासनोनिश्वास तीन पदके भांगा २६ उत्पळवत ।

(१६) आहारद्वार–आहारीक एक–बहुता एक और बहुतके दो भांगा ।

---

१ शीघ्रबोध भाग ८ वांमें उत्पल कमलके ३२ द्वार सविस्तार छप गये हैं वास्ते साद्दश विषयकि भोलामन दी गइ है, देखो आठवा भाग ।

(१७) व्रतीद्वार—अव्रती एक अव्रती बहुत ।

(१८) क्रियाद्वार—सक्रिय एक सक्रिया बहुत ।

(१९) बंधद्वार—सात कर्मोके बन्ध और आठ कर्मोके बन्धसे आठ भांगा पूर्ववत् ।

(२०) संज्ञाद्वार—आहारसंज्ञा भय० मैथुन० परिग्रह० च्यार पदके ८० भांग देखो उत्पलाधिकार ।

(२१) कषायद्वार—क्रोध, मान, माया, लोभ च्यार पदके भांग ८० देखो उत्पलाधिकार ।

(२२) वेदद्वार—नपुंसकवेद एक नपुं० बहुत

(२३) बन्धद्वार—स्त्रिवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद इन तीनों वेदके २६ भांगोंसे बन्ध करता है ।

(२४) संज्ञीद्वार—असंज्ञी एक—बहुत ।

(२५) इन्द्रियद्वार—सइन्द्रियएक—बहुत ।

(२६) अनुबन्धद्वार कायस्थिति—जघन्य अन्तर महुर्त. उत्कृष्ट स्याते काल अर्थात् शालादिके मूलका मूलपणे रहे तो असंख्यात काल रह शक्ते है ।

(२७) संभहो—अन्य गति तथा जातिके अन्दर कितने भव करे कीतने कालतक गमनागमन करे ।

नाम	भव		काल	
	ज०	उ० भव	ज०	उत्कृष्ट काल
च्यार स्थावरमें	२	असंख्या	दोय अंतरमहूर्त	असंख्या० काल
वनास्पतिमें	२	अनन्ता		अनन्त० ,,
वैकलेन्द्रियमें	२	संख्यात		संख्यात० ,,
तीर्यच पांचेन्द्रिय	२	आठ		प्रत्यक ,,
मनुष्यमें	२	आठ		कोडपूर्व ,,

(२८) आहारद्वार—२८८ बोलोका आहार लेते है।

(२९) स्थितिद्वार—ज० अन्तरमहुर्त उ० प्रत्यक वर्षकि।

(३०) समुदघात—वेदनि, मरणंति, कषाय एवं तीन।

(३१) मरण—समोहीय, असमोहीय दोन प्रकारसे।

(३२) गतिद्वार—मरके ४९ स्थानमें जाते है पूर्ववत।

(प्र) हे भगवान् सर्व प्राणभूत जीव सत्व, शालीके मूलपणे पूर्वे उत्पन्न हुवे ?

हां गौतम, एक वार नही किन्तु अनन्ती अनन्ती वार उत्पन्न हुवे है। इति।१।

जेसे यह शालीके मूलका पहला उदेशा कहा है इसी माफीक शालीके कन्द उदेशा, स्कन्धउदेशा, त्वचाउदेशा, साखाउदेशा, प्रवाल उदेशा, और पत्रउदेशा एवं सातउदेशा सादश है सबपर ३२-३२ द्वार उतारना।

आठवां पुष्प उदेशामें जीव ७४ स्थानोंसे आते है जिस्मे ४९ तो पूर्वे कहा है, दशभुवनपति, आठव्यन्तर, पांच ज्योतीषी,

सौधर्म देवलोक, और इशान देवलोक, एवं पचवीस देवतावोंके पर्याप्ता चवके शालीके पुष्पोंमें आते है वास्ते ७४ स्थानोंकि आगति है। लेश्या च्यार भांगा ८० है अवगाहाना उत्कृष्ट प्रत्यक अंगुलकि है एवं नौवां, फलउदेशा तथा दशवां बीजउदेशा भी समझना। तात्पर्य यह है कि शाली गहु जव ज्वारादिके सात उदेशोंमें देवता उत्पन्न नहीं होते है। शेष तीन उदेशामें देवता मरके उत्पन्न होते है। कारण पुष्पादि अच्छे सुगन्धवाले होते है।

इति प्रथम वर्गके दश उदेशा प्रथम वर्ग समाप्तम्॥

(२) दुसरा कल मुगादिका वर्ग, शाली माफीक दशों उदेशा समझना तीन उदेशोंमें देव अवतरे।

(३) तीसरा—अलसी कसुंबादिका वर्गशाली माफीक दशो उदेशा समझना।

(४) वांस वेतका चोथा वर्ग, शाली माफीक है परन्तु दशों उदेशामें देवता उत्पन्न नहीं होते है।

(५) इक्षु वर्गके तीसरा स्कन्धउदेशामें देवता उत्पन्न होते है शेषमें नहीं, स्कन्धमें मधुरता रहेती है।

(६) डाभ तृणादि वर्गके दशोउपदेशोंमें देवता नहीं आवे सर्व वांस वर्गकि माफीक समझना।

(७) अझोहरा वर्ग, वांसवर्गके माफीक समझना।

(८) तुलसीवर्ग, वांसवर्गके माफीक समझना।

नोट—जीस उदेशामें देवता उत्पन्न होते हो वहां लेश्या च्यार पावे और भांगा ८० होते है शेषमें लेश्या तीन भांगा २६ होते है। इति भगवती सूत्र शतक २१। वर्ग आठ उदेशा ८० समाप्तं।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम।

थोकडा नम्बर २

सूत्र श्री भागवतीजी शतक २२

(वर्ग छे)

इस बावीसवां शतकके छे वर्ग है प्रत्येक वर्गके दश दश उदेशा होनसे साठ उदेशा होते है । यथा—

(१) ताल तम्बालादि वृक्षका वर्ग

(२) एक फलमें एक बीज आम्र हरडे निंब आदिके वर्ग

(३) एक फलमें बहुत बीज अगत्थीया वृक्ष तंडुक वृक्ष बद्रिक वृक्षादि ।

(४) गुच्छा वृन्ताकि आदिका वर्ग ।

(५) गुल्म—नवमालती आदिका वर्ग

(६) वेलि—पुंफली, कालिंगी, तुम्बीदि वर्ग

इस छे वर्गसे प्रथम तालतम्बालादि वृक्षके मूल, कन्द, स्कन्ध, त्वचा, साखा, यह पांच उदेशा शाली वर्गवत् कारण इस पाचों उदेशोंमें देवता उत्पन्न नही होते है । लेश्या तीन भांगा २६ होते है । स्थिति ज० अन्तर महूर्त उ० दशहजार वर्षांकि है । शेष परिवाल, पत्र, पुष्प, फल, बीज इस पांच उदेशोमें देवता आके उत्पन्न होते है, लेश्या च्यार भागा ८० होते है । और स्थिति ज० अन्तर महुर्त उ० प्रत्यक वर्ष की है । अवगाहाना जघन्य अंगुलके असंख्यातमें भाग है उत्कृष्टी मूल कन्दकि प्रत्यक धनुष्यकि, स्कन्ध, त्वचा, साखा, कि प्रत्यक गाउ० परवाल, पत्र, कि प्रत्यक धनुष्यकि, पुष्पोंकि प्रत्यक हाथ, फल, बीज कि प्रत्यक अंगुलकि है शेष अधिकार शाली वर्ग माफीक सझना ।

इति बावीसवां शतकके छे वर्ग समाप्त उदेशा ।

(२) एगठिया—निंब, जंबु, कोसंब, पीलु, इत्यादि जीसके फलमें एक गुठली हो एसे वृक्षोंके वर्गका दश उदेशा निर्विशेष प्रथम वर्गवत् समझना इति एगठिय वर्गके दश उदेशा। समाप्तं।

(३) बहुबीजा—आगत्थियाके वृक्ष, तंदुकवृक्ष कविट आम्बाण इत्यादि वृक्षोंका वर्गके दश उदेशा ताल वर्गके सादश समझना इति तीसरा वर्ग० स०।

(४) गुच्छा—वैगण, खलाइ, गंन, पडलादि गुच्छा वर्गके दश उदेशा निर्विशेष वांस वर्गकि म फोक समझना इति गुच्छा वर्ग समाप्तं।

(५) गुल्म—नौ मलति सरिका कणव नालिका आदिका वर्गके देश उदेशा निर्विशेष शाली वर्गकि माफीक समझना इति गुल्म वर्ग समाप्तम्।

(६) वेलि—पूषफली, कालिंगी तुबी तउसी एला बालुकि अदि वेलिवर्गके दश उदेशा तालवर्गकि माफीक परन्तु फल उदेशे अवगाहाना उ० प्रत्यक धनुष्यकि है और स्थिति सब उदेशे उ० प्रत्यक वर्षकि है इति वेलिवर्ग समाप्तं।

यहां छे वर्गके साठ उदेशा है प्रत्यक उदेशे बत्तीस बत्तीस द्वार उतारणा चाहिये वह आम्नाय शालीवर्गमें लिखी गई है सिवाय खास तफावतकि वातों यहांपर दर्शाई है वास्ते स्व उपयोगसे विचारणा चाहिये।

इति बावीसवां शतक छे वर्ग साठ उदेशा समाप्तं।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर ६

श्री भगवती सूत्र शतक २३

(वर्ग पांच)

इस तेवीसवां शतकके पांच वर्ग जिस्के पचास उदेशा है इस शतकमें अनन्त काय साधारण वनास्पतिका अधिकार है साधारण वनास्पतिकायमें जीव अनन्त कालतक छेदन, भेदन, महान् दुःख-सहन कियां है वास्ते इस शतकके प्रारम्भमें "नमो सुयदेवयाए भगवईए" सुत्र देवता भगवतीको नमस्कार करके (१) आलुवर्ग (२) लोहणी वर्ग (३) आवकाय वर्ग (४) पाढमि आदि वर्ग (५) मासपन्नी आदि वर्ग कहा है। (१) आलु मूला आदो हलदी आदिके वर्गका दश उदेशा वांस उदेशाकि माफीक है परन्तु परि-माण द्वारमें १-२-३ यावत संख्याते असंख्याते अनन्ते उत्पन्न होते है समय समय एकेक जीव निकाले तो अनन्ती सर्पिणि, उत्सर्पिणि पुर्ण होजाय। स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट अंतर महुर्तकि शेष वांसवर्गवत् समझना इति प्रथम वर्ग दश उदेशा समाप्तम्।

(२) लोहनि असकन्नो, वज्रकन्नो, आदिका वर्गके दश उदेशा, आलुवर्गके माफोक परंतु अवगाहाना तालवर्ग माफीक समझना इति समाप्तम्।

(३) आयकाय कहुणी आदि जमीकन्दकी एक जाति है इसके भी १० उदेशा आलुवर्ग माफीक है परंतु अवगाहाना ताल वर्ग माफीक समझना इति तीसरा वर्ग समाप्तम्।

(४) पाढमि नालकि मधुरसाग आदि० जमीकंदकि एक

जाति है इसका भी दश उदेशा आलुवर्ग सादश है परन्तु अवगा-हाना वेलिवर्ग माफीक समझना इति ॥ ४॥

(५) मासपन्नी मुग्गपन्नी जीव सरिसव आदि यह भी एक जमीकन्दकी जाति है इसके भी मूलादि दश उद्देशा निर्विशेष आलुवर्ग सादश समझना इति पांचम वर्ग समाप्तम् ।

इस तेवीसवा शतकके पांच वर्ग पचास उद्देशा है प्रत्येक उदेशापर पूर्वोक्त बत्तीस वतीसद्वार स्वउपयोगसे लगालेना ।

सुचीना २१-२२-२३ शतक पढ़नेके लिये पेस्तर उत्पल-कमला धिकार कण्ठस्थ कालेना चाहिये कि यह तीनों शतक सुगमता पूर्वक समझमें आसके इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेवसचम् ।

थोकडा नंबर ४

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २५ उद्देशो ४

(अल्पा बहुत्व)

(१) इस आरापार संसारके अन्दर अनन्ते परमाणु पुद्गल अनंन्ते द्विप्रदेशी स्कन्ध एवं तीन प्रदेशी, च्यार प्रदेशी, पांच प्रदेशी, छे प्रदेशी, सात प्रदेशी आठ प्रदेशी, नो प्रदेशी, दश प्रदेशी यावत् संख्याते प्रदेशी, असंख्याते प्रदेशी, अनन्त प्रदेशी स्कंध अनन्ते हैं।

(२) इस चौदा राज परिमाणवाले लोकमें, एक आकाश प्रदेशको अवगाहन किये हुवे पुद्गल अनन्ते है एवं २-३-४-५-६ ७-८-९-१० आकाश देश अवगाहन किये हुवे पुद्गल अनन्ते

है यावत् संख्याते, असंख्याते, आकाश प्रदेश अवगहान किये हुवे पुद्गल अनन्ते है।

(३) इस अनादि लोकके अन्दर एक समयकी स्थिति वाले पुद्गल अनन्ते है एवं २-३-४-५-६-७-८-९-१० यावत् संख्याते समयकी स्थिति, असंख्याते समयकि स्थिति वाले पुद्गल अनन्ते है।

(४) इस प्रवाह लोकके अन्दर एक गुन काले वर्ण एवं २-३ ४-५-६-७-८-९-१० यावतसंख्याते असंख्याते अनन्ते गुण काले पुद्गल अनन्ते है एवं नीलेवर्ण रक्तवर्ण पीतवर्ण श्वेतवर्ण सुगंध दुर्गन्ध तीक्तरस कटुकरस कषायलेरस अंबीलरस मधुरस कर्कशस्पर्श मृदु, गुरु लघु, शीत, उष्ण, रूक्ष, स्निग्ध यह वीसबोलोंके एक गुनसे अनंत गुणतकके पुद्गल अनंते अनन्ते है।

द्रव्यापेक्षा, क्षेत्रापेक्षा, कालापेक्षा, भावापेक्षा, इसी च्यारोंके द्रव्य और प्रदेशापेक्षा अल्पाबहुत्व कहते है।

(१) द्रव्यापेक्षा अल्पा०

(१) दो प्रदेशी स्कंध द्रव्यसे परमाणुवोंके द्रव्य बहुत है

(२) तीन प्रदेशी स्कंध द्रव्यसे दो प्रदेशीके द्रव्य बहुत है

(३) च्यार	,, ,,	,,	तीन	प्र०	स्कं०	द्रव्य		,,
(४) पांच	,,	,,	च्यार	,,	,,	,,		,,
(५) छे	,,	,,	पांच	,,	,,	,,		,,
(६) सात	,,	,,	छे	,,	,,	,,		,,
(७) आठ	,,	,,	सात	,,	,,	,,		,,
(८) नौ	,,	,,	आठ	,,	,,	,,		,,

(९) दश	,,	,, नौ	,,	,,	,,	,,
(१०) दश	,,	,, संख्यात	,,	,,	,,	,,
(११) संख्यात	,,	,, असं०	,,	,,	,,	,,
(१२) अनन्त	,,	,, असं०	,,	,,	,,	,,

(२) प्रदेशापेक्षा अल्पा०

(१) परमाणुवोंसे दो प्रदेशीके प्रदेश बहुत है ।

(२) दो प्रदेशी स्कंधसे तीन प्र० के प्रदेश बहुत है ।

(३) तीन प्र० स्क०		से च्यार प्र० के	,,	,,
(४) च्यार	,,	,, से पांच प्र० के	,,	,,
(५) पांच	,,	,, से छे प्र० के	,,	,,
(६) छे	,,	,, से सात प्र० के	,,	,,
(७) सात	,,	,, से आठ प्र० के	,,	,,
(८) आठ	,,	,, से नौ प्र० के	,,	,,
(९) नौ	,,	,, से दश प्र० के	,,	,,
(१०) दश	,,	,, से संख्याते प्र० के	,,	,,
(११) संख्या	,,	,, से असंख्या प्र० के	,,	,,
(१२) अनन्त	,,	,, से असंख्य० प्र० के	,,	,,

(३) क्षेत्रापेक्षा द्रव्योंकि अल्पा० दोय आकाश प्रदेश अवगाह्य द्रव्योंसे, एकाकाश प्रदेश अवगाह्ये द्रव्य बहुत है एवं यावत् दशाकाश अवगाह्य द्रव्योंसे नौ आकाश अवगाह्ये द्रव्य बहुत है । दशाकाश अवगाह्ये द्रव्यसे संख्याता काश अवगाह्ये द्रव्य बहुत है। संख्या ० अवगाह्यसे असंख्याताकाश अवगाह्ये द्रव्य बहुत है ।

(४) क्षेत्रापेक्षा प्रदेशकि अल्पा० एकाकाश अवगाह्य प्रदेशसे

दो आकाश अवगाह्ये प्रदेश बहुत है एवं यावत् नौ अव० से दशाकाश अवगाह्ये प्रदेश बहुत है, दशाकाश अवगाह्यसे संख्यात आकाश प्रदेश अवगाह्य प्रदेश बहुत, संख्यात० से असंख्याते प्रदेश अवगाह्ये प्रदेश बहुत है।

(५–६) कालापेक्षा द्रव्य और प्रदेशकी अल्पा बहुत्व क्षेत्रकि माफिक समझना।

(७–८) भावापेक्षा द्रव्य और प्रदेशकि अल्पाबहुत्व पांच वर्ण दोयगंध पांच रस और चार स्पर्श एवं १६ बोलोंकि अल्पा० परमाणुकी माफीक अर्थात् द्रव्यकि नं० १ प्रदेशकि नं० २ माफीक समझना और कर्कशस्पर्शकि अल्पा बहुत यथा= एक गुण कर्कश स्पर्शसे दो गुण कर्कश स्पर्श के द्रव्य बहुत है एवं नौ गुणसे दश गुणके द्रव्य बहुत, दश गुणसे संख्यात गुणके बहुत, संख्यात गुणोंसे असंख्यात गुणके बहुत, असंख्यात गुण कर्कश स्पर्शके द्रव्यों से अनन्त गुण कर्कश स्पर्शके द्रव्य बहुत है। इसी माफीक प्रदेशकी भी अल्पा० समझना एवं मृदुस्पर्श, गुरुस्पर्श, लघुस्पर्श भी समझना इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर ५

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २५ उद्देशा ५

(कालधिकार)

(प्र० हे भगवान्! एक आविलकामें क्या संख्याते समय होते हैं? असंख्याते समय होते है? अनन्ते समय होते है?

(उ) हे गौतम एक आविलकाके असंख्याते समय[1] होते है किन्तु संख्याते, अनन्ते समय नहीं होते है ।

(२) एवं एकश्वासोश्वासमें असंख्यात समय होते है ।

(३) स्तोककालमें असंख्यात समय होते है ।

(४) एवं एक लवकालमें असंख्याते समय होते है (५) एवं महुर्त (६) अहोरात्री (७) पक्ष (८) मास (९) ऋतु (१०) अयन (११) संवत्सर (१२) युग (१३) शतवर्ष (१४) सहस्त्रवर्ष (१५) लक्षवर्ष (१६) पूर्वांग[2] (१७) पूर्व[3] (१८) तुटीतांग (१९) तुटीत (२०) अडडांग (२१) अडड (२२) अववांग (२३) अवव (२४) हूहांग (२५) हूहू (२६) उपलांग (२७) उपल (२८) पद्मांग (२९) पद्म (३०) निलनिआंग (३०) निलनि (३०) (३१) अत्थनिआंग (३२) अत्थनि (३३) आयुरांग (३४) आयु (३५) नायुरांग (३६) नायु (३७) पायुरांग (३८) पायु (३९) चुलीयांग (४०) चूलिया (४१) शीश पेलीयांग (४२) शीषपेलीयां[4] (४३) पल्योपमं[5] (४४) सागरोपमं[6] (४५) उत्सर्पिणि (४६) अवसर्पिणि (४७) कालचक्रं[7] एवं ४७ बोल एक वचन अपेक्षा असंख्यात समय

---

१ समयको शास्त्रकारोंने बहुत ही सुक्षम बतलाया है देखो अनुयोग-द्वारसूत्रको। २ लक्ष चौरासी वर्षका एक पूर्वांग होते हैं (३) चौरासी लक्षको चौरासी लक्ष गुने करनेसे ७०५६०००००००००० वर्षका एक पूर्व होता हैं आगे एकेक बोलको चौरासी चौरासी लक्ष गुनाकर लेना । (४) यहांतक गणत विषय बतलाये हैं (५) कुवेके द्रष्टान्तसे पल्योपमकाल (६) दश कोडाकोड पल्योपमका एक सागरोपम (७) बीस क्रोडाकोड सागरोपमका एक काल चक्कर (८) अनन्ते कालचक्रका एक पुद्गल प्रवर्तन होते है ।

है और (४८) एक पुद्गल प्रवर्तनमें संख्यात समय नहीं असंख्यात समय नहीं किन्तु अनन्त समय होते है (४९) एवं भूतकालमें (५०) एवं भविष्य कालमें (५१) एवं सर्व कालमें अनन्त समय है कारण इस च्यार बोलोंमें काल अनंतो है।

(प्र) बहुवचनापेक्षा घणि अविलकामें समय संख्याते है असंख्याते है ? अनन्ते है।

(उ) संख्याते नहीं स्यात् असंख्याते स्यात अनन्ते समय है एवं ४७ वां बोल कालचक्र तक कहना शेष च्यार बोल (४८–४९–५०–५१) में संख्याते, असंख्याते समय नहीं किन्तु अनन्ते समय है।

(प्र) एक श्वासोश्वासमें आविलका कितनि है।

(उ) संख्याती है शेष नहीं एवं ४२ बोलतक स्यात संख्याती ४३–४४–४५–४६–४७ इस पांच बोलोंमें असंख्याती है शेष ४८–४९–५०–५१ वां बोलमें अनन्ती है एवं बहुवचनापेक्षा परन्तु ४२ बोलोंतक स्यात् संख्यती स्यात् असंख्याती स्यात अनन्ती पांच बोलोंमें स्यात् असंख्याती स्यात् अनन्ती शेष च्यार बोलोंमें आविलका अनन्ती है।

इसी माफोक एकेक बोल उत्तरोत्तर पृच्छा करनेमें एक वचनापेक्षा ४२ बालों तक संख्याते ५ वालोंमें असंख्याते ४ वालोंमें अनंते और बहुतवचनापेक्षा ४२ बोलो तक स्यात संख्याते स्यात् असंख्याते स्यात अनंते, पांच बोलोमें, स्यत असंख्याते स्यात् अनन्ते और च्यार बोलोंमें अनन्ते कहना। चरम प्रश्न।

(प्र) भूतकालमें पुद्गल प्रवर्तन कितने है।

(उ) अनन्ते एवं भविष्यकालमें भी एवं सर्व कालमें भी अनन्ते पुद्गल प्रवर्तन होते है। कारण काल अनन्ता है।

भूतकालसे भविष्यकाल एक समय अधिक है। कारण। वर्तमानकालका समय है वह भविष्य कालमें गीना जाता है। भूतकालकि आदि नहीं है और भविष्यकालका अंत नहीं है वर्तमान समय एक है उसकों शास्त्रकारोंने भविष्यकालमें ही गीना है इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेवसच्चम्।

थोकड़ा नम्बर ६

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २५ उद्देशा ७

(संयति)

निग्रंथ पांच प्रकारके होते है वह थोकडा, शीघ्रबोध भाग चोथामें छपा गया है, अब संयति (साधु) पांच प्रकारके होते है यथा सामायिक संयति, छदोपस्थापनियसंयति, परिहार विशुद्ध संयति, सुक्षम संपराय संयति, यथाख्यात संयति इस पांचो संयतिको ३६ द्वारसे विवरणकर शास्त्रकार बतलाते है।

(१) प्रज्ञापनद्वार=पांच संयतिकि परूपणा करते है (१) सामायिक संयतिके दो भेद है (१) स्वल्प कालका जो प्रथम और चरम जिनोंके साधुवोंकों होता है उसकी मर्याद जघन्य सातदिन मध्यम च्यार मास उत्कृष्ठ छे मास (२) बावीस तीर्थंकरोंके तथा महाविदेह क्षेत्रमें मुनियोंके सामायिक संयम होते है वह जावजीव तक रहेते हैं (२) छदोपस्थापनिय संयम, जिस्का दो भेद है (१) स अतिचार जो पूर्व संयमके अन्दर आठवां प्रायश्चित सेवन कर-

नेले फीरसे छेदो० संयम दिया जाता है (२) तेवीसवें तीर्थंकरोंका साधु चौवीसवें तीर्थंकरोंके शासनमें आते है उसको भी छेदो० संयम दिया जाते है वह निरातिच्यार छेदो० संयम है (३) परिहार विशुद्ध संयमके दो भेद है (१) निवृतमान जेसे नौ मनुष्य नौ नौ वर्षके हो दीक्षाले वीस वर्ष गुरुकुलवासे नौ पूर्वका ध्ययन कर विशेष गुण प्राप्तिके लिये गुरु आज्ञासे परिहार विशुद्ध संयमको स्वीकार करे । प्रथम छेमास तक च्यार मुनि तपश्चर्य करे च्यार मुनि तपस्वी मुनियोंकि व्यावच्च करे एक मुनि व्याख्यान वाचे दूसरे छ मासमें तपस्वी मुनि व्यावच्च करे व्यावच्चयवाले तपश्चर्यकरे तीसरे छमासमें व्याख्यान वाला तपश्चर्यकरे सातमुनी उन्होंकि व्यावचकरे, एक मुनि व्याख्यान वांचे । तपश्चर्यका क्रमः उष्णकालमें एकान्तर शीतकालमें छट छट पारणा चतुर्मासामें अठम अठम पारणा करे, एसे १८ मासतक तपश्चर्य करे । जिनकल्पको स्वीकार करे अगर एसा नहोतों वापीस गुरुकुलवासाको स्वीकार करे ।

(४) सुक्ष्म संपराय संयमके दो भेद है । (१) संक्लेश परिणाम उपशमश्रेणिसे गिरते हुवेके (२) विशुद्ध परिणाम क्षपकश्रेणि छडते हुवेके (५) यथाख्यात संयमके दो भेद है (१) उपशान्त वितरागी (२) क्षिणवितरागी जिस्में क्षिणवितरागीके दो भेद है (१) छद्मस्त (२) केवली जिस्में केवलीका दोय भेद है (१) संयोगी केवली (२) अयोगी केवली । इति द्वारम्

(२) वेद —सामायिक सं० छदोपस्थापनियसं० सवेदी, तथा अवेदी भी होतें है कारण नौ वां गुण स्थानके दो समय शेष रहने पर वेद क्षय होते है और उक्त दोनों संयम नौ वा गुण स्थान तक

है। च्यार सवेद होतों स्त्रिवेद, पुरुषवेद नपुंसकवेद इस तीनोंमें होते है। परीहार विशुद्ध संयम पुरुष वेद पुरुष नपुंसकवेदमें होते है सुक्ष्म यथाख्यात यह दोनो संयम अवेदी होते है जिस्मे उपशांत अवेदी (१०-११-गु०) और क्षिग अवेदी (१०-१२-१३-१४) गुणस्थान) होते है इति द्वारम्

(३) राग—च्यार संयम सरागी होते है यथाख्यात सं० वित रागी होते है सो उपशान्त तथा क्षिग वीतरागी होते है।

(४) कल्प— कल्पके पांच भेद है।

(१) स्थितकल्प—(१) वस्त्रकल्प (२) उद्देशीक आहार कल्प (३) राजपण्ड (४) शय्यातरपण्ड (५) मासीकल्प (६) चतुर्मासीक कल्प (७) व्रतकल्प (८) प्रतिक्रमणकल्प (९) कृतकर्मकल्प (१०) पुरुषजेष्टकल्प एवं (१०) प्रकारके कल्प प्रथम और चरम जिनोंके साधुवोंके स्थितकल्प है।

(२) अस्थित कल्प पूर्वेजो १० कल्प काहा है वह मध्यमके २२ तीर्थंकरोंके मुनियोंके अस्थित कल्प है क्योंकि (१) शय्यातर व्रत, कृतकर्म, पुरुष जेष्ट, यह च्यार कल्पस्थित है शेष छेपरक अस्थित है विवरण पर्युषण कल्पमें है।

(३) स्थिवर कल्प—मर्यादापूर्वक १४ उपकरण रखे गुरुकुल वासो सेवन करे गच्छ संग्रहत रहै। और भी मर्यादा पालन करे।

(४) जिनकल्प—जघन्य मध्यम उत्कृष्ट उत्सर्ग पक्ष स्वीकार कर अनेक उपसर्ग सहन करते जंगलादिमें रहे देखो नन्दीसुत्र विस्तार।

(९) कल्पातित—आगम विहारी अतिश्य ज्ञानवाले महात्मा जो कल्पसं वितिरक्त अर्थात् भुत भविष्यके लाभालाभ देख कार्य करे इति । सामा० सं० में पूर्वोक्त पांचों कल्पपावे छेदो० परि-हार०में कल्प तीन पावे, स्थित कल्प, स्थिवर कल्प, जिन कल्प । सूक्ष्म० यथाख्य० में कल्पदोय पावे अस्थित कल्प और कल्पातित इतिद्वारम् ।

(५) चारित्र=सामा० छदो० में निर्गंथ च्यार होते है पुलाक बुकश प्रतिसेवन, कषायकुशील । परिहार० सुक्ष्म० में एक कषाय कुशील निर्गंथ होते है यथाख्यात संयममें निर्गंथ और सनातक यह दोय निग्रन्थ होते है द्वारम् ।

(६) प्रति सेवना—सामा० छदो० मूलगुण (पांच महाव्रत) प्रति सेवी (दोष लगावे) उत्तर गुण (पंड विशद्धादि) प्रतिसेवीतथा अप्रति सेवी होते है द्वारम् ।

(७) ज्ञान—प्रथमके च्यार संयममें क्रमःसर च्यार ज्ञानकि भजना २–३–३–४ यथाख्यातमें पांच ज्ञानकि भजना ज्ञान पढने अपेक्षा सामा० छदो० जघन्य अष्ट प्रवचन उ० १४ पूर्व पढे । परिहार० ज० नौवां पूर्वकि तीसरी आचार वस्तु उ० नौ पूर्व सम्पुर्ण, सुक्ष्म० यथाख्यात ज० अष्ट प्रवचन उ० १४ पूर्व तथा सूत्र वितिरक्त हो इतिद्वारम् ।

(८) तीर्थ—सामा० तीर्थमें हो, अतीर्थमें हो, तीर्थकरोंके हो और प्रत्येक बुद्धियोंके होते है । छदो० परि० सुक्ष्म० तीर्थमें ही होते है यथाख्यात० सामायिक संयमवत् च्यारोंमें होते है इतिद्वारम् ।

(९) लिंग—परिहार विसुद्धि द्रव्ये और भावें स्वलिंगी; शेष च्यार संयम द्रव्यापेक्षा स्वलिंगी अन्यलिंगी होते है। भावे स्वलिंगी होते इतिद्वारम्।

(१०) शरीर—सामा० छदो० शरीर ३–४–५ होते है शेष तीन संयममें शरीर तीन होते है वह वैक्रय आहारीक नही करते है द्वारम्।

(११) क्षेत्र—जन्मापेक्षा सामा० सूक्ष्म संपराय, यथाख्यात, पन्दरा कर्म भूमिमें होते है। छदो० परि० पांच भरत पांच इार भरत एवं दश क्षेत्रोंमें होते है। साहारणपेक्षा परिहार० का साहारण नहीं होते है शेष च्यार संयम कर्मभूमि अकर्मभूमिमें भी मीलते है इतिद्वारम्।

(१२) काल—सामा० जन्मापेक्षा अवसर्पिणि कालमें ३-४-५ आरे जन्मे और ३–४–५ आरे प्रवृते। उत्सर्पिणि कालमें २–३–४ आरे जन्मे ३–४ आरे प्रवृते। नोसर्पिणि नोउत्सर्पिणि चोथे पलीभाग (महाविदहे)में होवे। साहारणापेक्षा अन्यपली भाग (३० अकर्मभूमि)में भी मील सके। एवं छदो० परन्तु जन्म प्रवृतन तथा सर्पिणि उत्सर्पिणि विदेहक्षेत्रमें न हुवे, साहारणापेक्षा सब क्षेत्रोंमें मीले। परिहार० अवसर्पिणि कालमें ३-४ आरे जन्में प्रवृते उत्सर्पिणी कालमें २-३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृतो सुक्ष्म० यथाख्यात अवसर्पिणिकाले ३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। उत्सर्पिणिकालमें २-३-४ आरे जन्मे ३-४ आरे प्रवृते। नो सर्पिणिनो उत्सर्पिणि चोथापली भागमें भी मीले साहारणापेक्षा अन्य पली भागमें भी लाधे इति द्वारम्।

(१३) गतिद्वार यंत्रसे

संयमके नाम	गति		स्थिति	
	ज०	उ०	ज०	उ०
सामा० छदोप०	सौधर्म कल्प	अनुत्तर वै०	२ पल्यो०	३३ सागरो०
परिहार०	सौधर्म०	सहस्त्र	२ पल्यो०	१८ सागरो०
सुक्षम०	अनुत्तर वै०	अनुत्तर वै०	३१ साग०	३३ सा०
यथाख्या०	अनु०	अनु०	३१ सा०	३३ सा०

देवतावोंमें इन्द्र, सामानिक, तावत्रीसका, लोकपाल, और अहमेंन्द्र यह पांच पद्वि है। सामा० छदो आराधि होतों पांचोसे एक पद्विवाला देव हो परिहार विशुद्ध प्रथमकि च्यार पद्विसे एक पद्वि धर हों। सुक्ष० यथा० अहंमेंन्द्रि पद्विधर हों। जघन्य विराधि होतों च्यार प्रकारके देवोंसे देव होवें। उत्कृष्ट विराधि होतों संसारमंडल। इतिद्वारम्।

(१४) संयमके स्थान—सामा० छेदो० परि० इनतीनों संयमके स्थान असंख्याते असंख्याते है। सुक्षम० अन्तर महुर्तके समय परिमाण असंख्याते स्थान है। यथाख्यानके संयमका स्थान एक ही है। जिस्की अल्पाबहुत्व।

(१) स्तोक यथाख्यात सं०के संयम स्थान।

(२) सुक्ष्म०के संयमस्थान असंख्यातागुने।

(३) परिहारके ,, ,,

(४) सामा० छेदो० सं०स्थ० तूल्य ,,

(१५) निकाशे—संयमके पर्यव एकेक संयमके पर्यव अनंते अनन्ते है। सामा० छेदो० परिहार० परस्पर तथा आपसमें षट्गुन हानिवृद्धि है तथा आपसमे तुल्य भी है। सूक्ष्म० यथाख्यातसे तीनों संयम अनन्तगुने न्यून है। सूक्ष्म० तीनोंसे अनन्तगुन अधिक है आपसमें षट्गुन हानि वृद्धि, यथाख्यातसे अनन्त गुन न्यून है। यथा० च्यारोंसे अनन्तगुन अधिक है। आपसमें तूल्य है। अल्पा बहुत्व।

(१) स्तोक सामा० छेदो० जघन्य संयम पर्यव आपसमे तुल्य
(२) परिहार० ज० सं० पर्यव अनंतगुना
(३) ,, उत्कृष्ट० ,, ,,
(४) सा० छे० ,, ,, ,,
(५) सूक्ष० ज० ,, ,,
(६) ,, उ० ,, ,,
(७) यथा ज०उ० आपसमे तूल्य ,, द्वारम्

(१६) योग—प्रथमके च्यार संयम संयोगि होते है, यथाख्यात० संयोगि अयोगि भी होते है।

(१७) उपयोग—सूक्ष्म० साकारोपयोगवाले, शेष च्यार संयम साकार अनाकार दोनों उपयोगवाले होते है।

(१८) कषाय—प्रथमके तीनसंयम संज्वलनके चोकमें होता है।

सुक्ष्म० संज्वलनके लोममें और यथाख्यात० उपशान्त कषाय और क्षिण कषायमें मी होता है ।

(१९) लेश्या—सामा० छेदो० में छेओं लेश्या, परिहार० तेजो पद्म शुक्ल तीनलेश्या, सुक्ष्म० एक शुक्ल, यथाख्यात० एक शुक्ल तथा अलेशी मी होते है ।

(२०) परिणाम—सामा० छेदो० परिहार० में हियमान० वृद्धमान और अवस्थित यह तीनों परिणाम होते है । जिस्में हियमान वृद्धमानकि स्थिति ज० एक समय उ० अन्तर महुर्त और अवस्थितकि ज० एक समय उ० सात समय० । सुक्ष्म० परिणाम दोय हियमान वृद्धमान कारण श्रेणि चढते या पडते जीव वहां रहेते है उन्होंकि स्थिति ज० उ० अन्तर महुर्तकि है । यथाख्यात० परिणाम वृद्धमान, अवस्थित जिस्में वृद्धमानकि स्थिति ज० उ० अन्तर महुर्त और अवस्थितकि ज० एक समय उ० देशोनाकोड पूर्व (केवलीकि अपेक्षा) द्वारम् ।

(२१) बन्ध—सामा० छेदो० परि० सात तथा आठ कर्म बन्धे सात बन्धे तो आयुष्य नहीं बन्धे । सुक्ष्म० आयुष्य० मोहनिय कर्म वर्जके छे कर्म बन्धे । यथाख्यात० एक साता वेदनिय बन्धे तथा अबन्ध ।

(२२) वेद—प्रथमके च्यार संयम आठों कर्म वेदे । यथाख्यात० सात (मोहनि वर्जके) कर्म वेदे तथा च्यार अघातीया कर्म वेद ।

(२३) उदिरणा—सामा० छेदो० परि० ७-८-६ कर्म

उदिरे० सातमें आयुष्य और छे में आयुष्य मोहनीय वर्जके। सूक्ष्म० ५-६ कर्म उदिरे पांचमें आयुष्य मोहनिय वेदनिय वर्जके। यथाख्या० ५-२ दोय नाम गौत्र कर्मकि उदिरणा करे तथा अनुदिरणा भी है।

(२४) उवसंपझांण-सामा० सामायिक संयमकों छोडे तो० छदोपस्थापनिय सूक्षम संपराय संयमासंयमि (श्रावक) तथा असंयममें जावे। छदो० छदोपस्थापनियकों छोडे तो० सामा० परि० सूक्ष्म० असंयम, संयमासंयममें जावे। परि० परिहार विशुद्धकों छोडे तो छदो० असंयम दो स्थानमें जावे। सुक्ष्म० सुक्ष्मसंपरा-छोडे तो सामा० छदो० यथा० असयममें जावे। यथा० यथाख्यातकों छोडके सुक्ष्म० असंयम और मोक्षमें जावे सर्व स्थान असंयम कहा है वह संयममें कालकर देवतावों मेंजाते है उस अपेक्षा समझना इतिद्वारम्।

(२५) संज्ञा-सामा० छदो० परि० च्यारों संज्ञावाले होते है तथा संज्ञा रहित भी होते है शेष दोनों नो संज्ञा है।

(२६) आहार=संयमके च्यार संयम आहारीक है यथाख्यात स्यात् आहारीक स्यात् अनाहारीक (चौदवागुण०)

(२७) भव=सामा० छदो० परि० जघन्य एक उत्कृष्ट ८ भव करे अर्थात् सात देवके और आठ मनुष्यके एवं १५ भव कर मोक्ष जावे सूक्षम ज० एक उ० तीन भव करे। यथा० ज० एक उ० तीन तथा उसी भवमें मोक्ष जावे।

(२८) आगरेस=संयम कितनीवार आते हैं ।

संयम नाम	एकभवा पेक्षा		बहुतभवापेक्षा	
	ज०	उ०	ज०	उ०
सामायिक०	१	प्रत्येक सौवार	२	प्रत्येक हजारवार
छेदो०	१	प्रत्येक सौवार	२	साधिक नौसोवार
परिहार०	१	३ तीनवार	२	साधिक नौसोवार
सूक्ष्म०	१	च्यारवार	२	नौ वार
यथाख्यात	१	दोयवर	२	५ वार

(२९) स्थिति—संयम कितने काल रहे ।

संयम नाम	एकजीवापेक्षा		बहुत जीवापेक्षा	
	ज०	उ०	ज०	उ०
सामा०	एक समय	देशोनक्रोड पूर्व	शास्वते	शास्वते
छेदो०	,,	,,	२५० वर्ष	५० क्रो० सा०
परिहार०	,,	२९वर्षोनाको.	दे. दोसोवर्ष	देशोना क्रोड पूर्व
सुक्ष्म०	,,	अन्तरमहुर्त	अन्तरमहुर्त	अन्तर महुर्त
यथा०	,,	देशोनाक्रोडपूर्व	शास्वते	शास्वते

(३०) अन्तर—एक जीवापेक्षा पांचों संयमका अन्तर ज० अन्तर महुर्त उ० देशोना आदा पुद्गलप्रावर्तन बहुत जीवापेक्षा सा० यथा० के अन्तर नहीं है। छेदो० ज० ६३००० वर्ष परिहार० ज० ८४००० वर्ष उत्कृष्ट अठारा क्रोडाक्रोड सागरोपम देशोना। सूक्ष्म० ज० एक समय उ० छेमास।

(३१) समुद्घात—सामा० छदो० में केवली समु० वर्जके छे समु० पावे० परिहार० तीन क्रमःसर सुक्ष० समु० नहीं० यथा० एक केवली समुद्घात ।

(३२) क्षेत्र० च्यार संयम लौकके असंख्यातमें भागमें होवे । यथा० लौकके असंख्यात भागमें होवे तथा सर्व लौकमें (केवली समु० अपेक्षा) ।

(३३) स्पर्शना—जेसे क्षत्र है वेसे स्पर्शना भी होती है परन्तु यथाख्यातापेक्षा कुच्छ स्पर्शना अधिक भी होती है ।

(३४) भाव—प्रथमके च्यार संयम क्षयोपशम भावमें होते है और यथाख्यात । उपशम तथा क्षायक भावमें भी होता है ।

(३५) परिमाण द्वार—सामा० वर्तमानापेक्षा स्यात् मीले स्यात् न मीले अगर मीलेतों ज० १–२–३ उ० प्रत्येक हजार मीले । पूर्व तमापर्यायापेक्षा नियम प्रत्यक हजार कोड मीले (एवं छदो० वर्तमाना पेक्षा मीले तों १-२-३ प्रत्येक सौ मीले । पूर्व पर्यायापेक्षा अगर मीलेतों ज० उ० प्रत्यक सौ कोड मीले । परि- हार० वर्तमान अगर मीलेतों १-२-३ प्रत्येक सौ । पूर्व पर्याय मीलेतों १–२–३ प्रत्यक हजार मीले । सुक्ष्म० वर्तमानापेक्षा मीलेतों १–२–३ उ० १६२ मीले जिसमें १०८ क्षपक श्रेणि और ५४ उपशम श्रेणि चडते हुवे पूर्व पर्यायपेक्षा मीलेतों १-२-३ उ० प्रत्येक सौ मीले । यथा० वर्तमान अगर मीले तों १-२-३ उ० १६२ । पूर्व पर्यायापेक्षा नियमा प्रत्येक सौ कोड मीले (केवली कि अपेक्षा ।)

(३६) अल्पा बहुत्व ।

(१) स्तोक सूक्षम संपराय संयमवाले ।
(२) परिहार विशुद्ध संयमवाले संख्याते गुने ।
(३) यथाख्यात संयमवाले संख्यातगुने ।
(४) छदोपस्थातिय संयमवाले संख्यात गुने ।
(५) सामायिक संयमवाले संख्यात गुने ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेवसच्चम् ।

थोकडा नंबर ७

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २५ उद्देशा ८

(प्र) हे भगवान् मनुष्य तीर्यचसे मरके नरकमें उत्पन्न होनेवाला जीव नरकमें कीस तरेहसे उत्पन्न होता है ।

(उ) हे गौत्तम–जेसे कोइ मनुष्य सथवाडासे भ्रष्ट हुवा पुनः उस सथवाडाकों मीलनेकि अभिलाषा करता हुवा, एसा ही अध्यवसायका तीव्र निमत योगोके कारणसे आतुरतासे चलता हुवा पीछले स्थानका त्याग कर आगेके स्थानकि अभिलाषा करता हुवा उस सथवाडासे मीलके उसे स्वीकार कर विचरता है। इसी माफीक जीव मनुष्य तथा तीर्यचके आयुष्य दलकों क्षयकर शरीर त्यागकर परगतिमें गमन करते है उस समय बडे ही वेगसे अध्यवसायोंका निमत्त कारमण योगकि आतुरतासे शीघ्रता पूर्व चलता हुवा नरकके उत्पती स्थानकों स्वीकार कर विचरता है ।

(प्र) हे भगवान् जेसे कोइ युवक पुरुष विज्ञानवन्त हाथकि बाहु पसारे संकोच करे हाथकि मुठी खोले, बंध करे, आंखकोमीचे खोले, इतनी देर नरकमें उत्पन्न होते जीवकों लागे ।

(उ) नहीं गौतमी नारकिकों नरकमें उत्पन्न होनेमें १-२-३ समय लगता है।

(प्र) परभवको आयुष्य कीस कारणसे बान्धता है।

(उ) अध्यवसायोंके निमित कारण हेतु और योगोंकि प्रेरणासे जीव परभवका आयुष्य बान्धता है।

(प्र) यह जीव गतिकी प्रवृति क्यों करता है।

(उ) पूर्व भवमें जीस जीवोंने—

(१) भवक्षय=मनुष्य तथा तीर्थंचका भव

(२) स्थितिक्षय=जीवन पर्यंत स्थिति

(४) आयुष्यक्षय=परभवसे गति प्रारंभ समयसे अगर विग्रह गति भी करी हो तों उस आयुष्यमें गीनी जाती है इस तीनोंका क्षय होनेसे जीव परभव संबंधी गतिके अन्दर प्रवृति करता है।

(प्र) जीव नरकमें उत्पन्न होता है। वह अपने आत्म ऋद्धि (अनुपूर्वादि) से या पर ऋद्धिसे नरकमें उत्पन्न होता है।

(उ) स्वात्माकि ऋद्धिसे उत्पन्न होता है। एवं अपने कर्मोसे अपने प्रयोगोंसे नरकमें उत्पन्न होता है।

जेसे नरकाधिकार कहा है इसी माफीक २४ दंडक परन्तु एकेन्द्रियमें गतिके समय १-२-३-४ समझना। इति २९-८

(२) इसी माफीक भव सिद्धि जीवाका २९-९

(३)	,,	,,	अभव्य ,,	,,	२९-१०
(४)	,,	,,	सम्यग्द्रष्टी	,,	२९-११
(५)	,,	,,	मिथ्य द्रीष्टी	,,	२९-१२

सेवं भंते सेवं भंते तमेवसच्चम्।

थोकडा नम्बर ८

श्री भगवती सूत्र शतक ३१

(खुल्लक युम्मा)

आगेके शतकोंमें महायुम्मा बतलाये जावेंगा। उस महायुम्माकि अपेक्षा यह लघु युम्मा है।

(प्र) हे भगवान ! खुल्लक (लघु) युम्मा कितने प्रकारके है। ।

(उ) हे गौतम ! लघु युम्मा च्यार प्रकारके है—यथा—कडयुम्मा तेउगायुम्मा दावरयुम्मा कलयुगा युम्मा।

(१) कडयुम्मा—जीस रासीके अन्दरसे च्यार च्यार गीनने पर शेष च्यार रूप रहे जाते हो उसे कडयुम्मा कहते है (२) शेष तीन रह जाते हो उसे तेउगायुम्मा (३) शेष दोय रूप बढ़ जानेसे दावर युम्मा (४) शेष एक रूप बढ़ जानेसे कलयुगा युम्मा केहते है।

(प्र०) खुल्लक कडयुम्मा नारकी कांहासे आयके उत्पन्न होते है (उ) पांच संज्ञी पांच असंज्ञो तीर्यच तथा संख्याते वर्षके संज्ञी मनुष्य एवं ११ स्थानोंसे आके उत्पन्न होते है।

(प्र) एक समयमें कितने जीव उत्पन्न होते है।

(उ) ४-८-१२-१६ एवं च्यार च्यार अधिक गीनने यावत् संख्याते असंख्याते जीव नारकिमें उत्पन्न होते है।

(प्र) वह जीव कीस रीतिसे उत्पन्न होते है ?

(उ) थोकडा नं० ७ में लिखा माफिक यावत् अध्यवसायके निमत्त योगोंका कारणसे शीघ्रता पूर्वक अपनी रूद्धि, कर्म,

प्रयोगसे उत्पन्न होते है। इसी माफीक सातों नरके समझेना परन्तु आगतिको स्थान इस माफ की है।

(१) रत्नप्रभाके आगतिके स्थान ११ है
(२) शार्कर प्रभाके „ „ ६ असंज्ञी तीर्यंच वर्जे
(३) वालुका प्रभाके „ „ ५ भुजपर वर्जे
(४) पङ्कप्रभाके „ „ ४ खेचर वर्जे
(५) धूम्रप्रभाके „ „ ३ स्थलचर वर्जे
(६) तमप्रभाके „ „ २ उरपुर वर्जे
(७) तमतमाके „ „ १ पूर्ववत् स्त्रि वर्जे

एवं तेयुगा युम्मा परन्तु परिमाण ३–७–११–१५ सं० अ०
एवं दावर युम्मा „ „ २–६–१०–१४ „ „
एवं कलउगा „ „ „ १–५–९–१३ „ „

यह ओघ (सामान्य) सूत्र हुवा अब विशेष कहते है कि कृष्णलेशी नारकी पांचवी, छठी, सातवी, पूर्वोक्त च्यार युम्म तीनों नरकपर लगा देना एवं निललेशी परन्तु नरक, तीजी चोथी और पांचवी शेष ओघवत् एवं कापोत लेशी परन्तु नरक पहली दूसरी तीसरी शेष ओघवत् एक समुच्चय और तीन लेश्याके तीन एवं च्यार उदेशा हुवे इसको ओघ उदेशा कहते है इति च्यार उदेशा।

४ एवं भव्य सिद्धि जीवोंका भी लेश्या संयुक्त च्यार उदेशा। एवं अभव्य जीवोंका भी लेश्या संयुक्त च्यार उदेशा। एवं सम्यग्द्रष्टी जीवोंका भी लेश्या संयुक्त च्यार उदेशा, परन्तु कृष्णा लेश्याधिकारे सातवी नरकमें सम्यग्द्रष्टी जीवोंकि उत्पात निषेद है।

एवं मिथ्यादृष्टी जीवोंका लेश्या संयुक्त च्यार उदेशा एवं कृष्ण पक्षी जीवोंका लेश्या संयुक्त च्यार उदेशा। एवं शुक्ल पक्षी जीवोंका लेश्या संयुक्त च्यार उदेशा। एवं सर्व मीलानेसे २८ उदेशा होते है। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर ९

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ३२ वां

(उदेशा अठावीस)

खुलक युम्मा च्यार प्रकारके है। कडयुम्मा, तेउगायुम्मा दावर युम्मा, कलउगा युम्मा परिमाण संज्ञा पूर्ववत्।

(प्र) खुलक युम्मा नारकि अन्तरे रहित निकलके कितने स्थानोंमें उत्पन्न होते है ? (उ) पांच संज्ञी तीर्यच और एक संख्याते वर्षवाले कर्मभूमि मनुष्यमें उत्पन्न होते है। परिमाण एक समय ४-८-१२-१६ यावत् संख्याते असंख्याते निकलते है। अध्यव सायके निमत योगोंका कारण पूर्ववत्। स्वकर्म ऋद्धि और प्रयोगसे निकलते है। एवं शार्कराप्रभा वालुकाप्रभा पङ्कप्रभा धूम प्रभा तमप्रभा समझना इस छे ओ नरकके निकले हुवे जीव पूर्वों छे छे स्थानमें जाते है और सातवी नरकसे निकले हुवे मनुष्य नहीं होते है केवल पांच प्रकारके तीर्यचमें ही उत्पन्न होते है शेष अधिकार पूर्ववत् समझना।

एवं तेउगा दावर युम्मा कलउगा परिमाण पूर्ववत् कहने शतक ३१ वा माफीक।

यह ओघ उदेशा हुवा इसी माफीक कृष्ण लेश्याका उदेशा एवं निल लेश्याका उदेशा, एवं कापोत लेश्याका उदेशा यह च्यार उदेशाको शास्त्रकारोंने ओघ उदेशा कहा है ।

एवं च्यार उदेशा भव सिद्धि जीवोंका ।

" " " अभव सिद्धि जीवोंका

" " " सम्यग्द्रष्टी जीवोंका, परन्तु कृष्ण लेश्याके उदेशे सातवीं नरकसे सम्यग्द्रष्टी जीव नहीं निकलते है ।

एवं च्यार उदेशा मिथ्याद्रष्टी जीवोंका

" " " कृष्ण पक्षी जीवोंका

" " " शुक्ल पक्षी जीवोंका

एवं सर्व मीलके २८ उदेशा

जेसे ३१ वां, शतकमें उत्पन्न होनेके २८ उद्देशा कहा था इसी माफीक इस ३२ वां शतकमें २८ उद्देशा नरकसे निकलनेका कहा है ।

सर्वज्ञ भगवानने अपने केवल ज्ञानसे नारकिको कृतयुम्मा आदिसे उत्पन्न होते हुवे को देखा है एसी परूपना करी है एक कडयुम्मा आदि युम्मा पणे अपना जीव अनन्तीवार उत्पन्न हुवा है इस समय सम्यक् ज्ञान आराधन करलेनेसे फोरसे उस स्थानमें इस युम्मा द्वार उत्पन्न ही न होना पडे एसी प्रज्ञा इस थोकडाके अन्दर सदैव रखनी चाहिये इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकड़ा नम्बर १०

श्री भगवतीजी सूत्र शतक ३३वां

(एकेन्द्रिय शतक)

(प्र) हे भगवान् ! एकेन्द्रिय कितने प्रकारके है।

(उ) हे गौतम ! एकेन्द्रिय वीस प्रकारके है यथा पृथ्वीकाय सुक्ष्म, बादर, एकेकके पर्याप्ता, अपर्याप्त, एवं अपकायके च्यार तेउकायके च्यार, वायुकायके च्यार, बनास्पतिकायके च्यार सर्व २० भेद होते है।

(प्र) वीस भेदसे प्रत्येक भेदके कर्म प्रकृति (सतारूप) कितनी है।

(उ) प्रत्येक भेदवाले जीवोंके कर्म प्रकृति आठ आठ है यथा ज्ञानावर्णिय, दर्शनावर्णिय, वेदनिय, मोहनिय, आयुष्य, नाम, गौत्र और अन्तराय कर्म।

(प्र) प्रत्येक भेदवाले जीवोंके कितने कर्मोका बन्ध है।

(उ) सात कर्म (आयुष्य वर्जके) तथा आठ कर्म बांधे।

(प्र) कितनी कर्म प्रकृतिकों वेदे।

(उ) आठ कर्म तथा श्रोतेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, पुरुष वेद, स्त्री वेद, इस १४ प्रकृतिको वेदते है। च्यार इन्द्रिय और दोय वेद एकेन्द्रियके न होनेसे इस बातका दुःख वेदते है यह बात अध्यावसायापेक्षा है केवली केवल ज्ञानसे देखा है। इति ३३वां शतकका प्रथम उद्देशा समाप्त।

(प्र) अनान्तर उत्पन्न हुवे एकेन्द्रिय कितने प्रकारके है।

(३) पृथ्व्यादि पांच सूक्ष्म पांच बादर एवं दशोंका अपर्याप्ता कारण अनान्तर अर्थात प्रथम समयके उत्पन्न जीवोंमें पर्याप्ता नहीं होते है इस लिये यहां दश भेद गीना गया है।

इस दश प्रकारके जीवोंके आठ कर्मोंकि सत्ता है बन्ध सात कर्मका है क्योंकि अनान्तर समयके जीव आयुष्य कर्म नहीं बान्धते है और पूर्वोक्त चौदा प्रकृतिकों वेदते है। भावना पूर्ववत् इति ३३ वां शतकका दुसरा उदेशा हुवा।

(३) परम्पर उदेशो– परम्पर उत्पन्न हुवा एकेन्द्रियका २० भेद है जिस्के आठों कर्मोंकि सता, सात आठ कर्मोंका बन्ध चौदा प्रकृति वेदे इति ३३–३।

(४) अनान्तर अवगाह्या एकेन्द्रिय पृथ्व्यादि पांच सूक्ष्म पांच बादरके अपर्यप्ता एवं १० प्रकारके है सत्ता आठ कर्मोकि बन्ध सात कर्मोका चौदा प्रकृति वेदे इति ३३–४।

(५) परम्पर अवगह्या एकेन्द्रियके वीस भेद है सत्ता आठ कर्मोकि, बन्ध सात आठ कर्मोंका चौदा प्रकृति वेदते है। ३३-५

(६) अनान्तर आहारिक उदेशा दुसरे उदेशाके माफक ३३-६					
(७) परम्पर आहारीक	,,	तीसरा	,,	,,	३३–७
(८) अनान्तर पर्याप्ता	,,	दुसरे	,,	,,	३३–८
(९) परम्पर पर्याप्ता	,,	तीसरे	,,	,,	३३–९
(१०) चरम उदेशा		दुसरे	,,	,,	३३-१०
(११) अचरम उदेशा		दुसरे	,,	,,	३३-११

इस ग्यारा उदेशाओंमें च्यार उदेशा २–४–६–८वांमें सात

आठ कर्मोंकी, बन्ध सात कर्मोका, कारण अनान्तर समयवालोंके आयुष्यका बन्ध नहीं होता है। चौद प्रकृति वेदते है, शेष सात उदेशावोंमें, आठ कर्मोंकी सत्ता। सात तथा आठ कर्मोका बन्ध और चौदा प्रकृति वेदते है भावना प्रथमोदेशाकि माफीक इति ३३वां शतकका प्रथम अन्तर शतक समाप्तम्।

(२) कृष्णलेशी शतकके भी ११ उदेशा जिस्में २-४-६-८वां उदेशामें दश दश भेद जीसके आठ कर्मोकी सत्ता. सात कर्मोका बन्ध. चौदा प्रकृति वेद और शेष सात उदेशोंके वीस वीस भेद जिस्में आठ कर्मोंकि सत्ता, ७ सात तथा आठ कर्मोका बन्ध, चौदा प्रकृति वेद इति ३३-२।

(३) एवं निललेशीका इग्यारा उदेशा संयुक्त ३३-३

(४) एवं कापोतलेशीका इग्यारा उदेशा संयुक्त ३३-४

यह लेश्या संयुक्त च्यार अन्तर शतक समुच्चय काहा है इसी माफीक लेश्या संयुक्त च्यार शतक भव्य जीवोंका और च्यार शतक अभव्य जीवोंका भी समझना परन्तु अभव्य शतकमें प्रत्येक शतक उदेशा नौ नौ कहना कारण चरम अचरम उदेशा अभव्यमें नहीं होता है सर्व बारहा अन्तर शतकके १२४ उदेशा है जिस्में ४८ उदेशा अनान्तर समयके है जिस्में एकेन्द्रिय के दश दश बोल अपर्याप्ता होनेसे ४८-१०=४८० बोलोंमें आठ कर्मोंकि सत्ता, सात कर्मोका बन्ध और चौदा प्रकृति वेदते है शेष ७६ उदेशामें एकेन्द्रियके वीस वीस भेद होनेसे १५२० बोलोंमें आठ कर्मोंकि सत्ता. सात आठ कर्मोका बन्ध, चौद प्रकृति

वेंदे इति ३३वां शतकके अन्तर शतक १२ और उदेशा १२४
इति तेतीसवा शतक समाप्त ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नं० ११

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ३४वां

(श्रेणिशतक)

इस आरापार संसारके अन्दर जीव अनादि कालसे एक स्थानसे दुसरे स्थानपर गमनागमन करते है एक स्थानसे दुसरे स्थानपर जानामें कितने समय लगते है यह इस थोकडा द्वारा बतलाया जायगा ।

(प्र) हे भगवान् । एकेन्द्रिय कितना प्रकारकि है ।

(उ) पृथ्व्यादि पांच स्थावर सुक्ष्म पांच स्थावर बादर इन्ह दशोंका पर्याप्ता अपर्याप्ता एवं एकेन्द्रियका २० भेद है ।

(१) रत्नप्रभा नरकके पूर्वका चरमान्तसे सुक्ष्म पृथ्वीकायके अपर्याप्ता जीव मरके, रत्नप्रभा नरकके पश्चमके चरमान्तमें सुक्ष्म पृथ्वीकायके अपर्याप्तापणे उत्पन्न होता है उसको रहस्तेमें १-२-३ समय लगता है, इसका कारण यह है कि शास्त्रकारोंने सात प्रकारकि श्रेणि वतलाइ है यथा=(१) ऋजुश्रेणि (समश्रेणि) (२) एको वक्का (३) दोवक्का (४) एक कोनावाली (५) दोयकोनावाली (६) चक्रवाल (७) अर्द्धचक्रवाल । जिस्में जीव ऋजुश्रेणि करते हुवेकों एक समय लागे एको वक्का श्रेणी करनेसे दोय समया दो

वक्रा श्रेणि करनेसे तीन समय लगता है। जहांपर तीन समय लागे वहां भावना सर्वत्र समझना।

(२) रत्नप्रभा नरकके पूर्वका चरमान्तसे सूक्ष्म पृथ्वीकायका अपर्याप्ता मरके, रत्नप्रभा नरकके पश्चमका चरमान्तमे सूक्ष्म पृथ्वी कायके पर्याप्तापणे उत्पन्न होनेमें १-२-३ समय रहस्तेमें लागे भावना पूर्ववत।

एवं रत्नप्रभा नरकका पूर्वके चरमान्तसे सूक्ष्म पृथ्वी कायको अपर्याप्त जीव मरके रत्नप्रभा के पश्चमके बादर तेउकायका पर्याप्ता अपर्याप्त वर्जके शेष १८ बोलपणे उत्पन्न होनेवालोंको १–२–३ समय रहस्तेमें लागे। रत्नप्रभा के पूर्वके चरमान्तके एक सूक्ष्म पृथ्वी कायका अपर्याप्ताका १८ स्थानोंमें उत्पात कही है इसी माफीक बदर तेउकायके पर्याप्ता अपर्याप्ता छोडके शेष १८ बोलोंका जीव, रत्नप्रभा नरकके पश्चमके चरमान्तके १८ बोलोपणे उत्पन्न हुवे जिस्कों रहस्तेमें १–२–३ समया लागे एवं बोल ३२४ हुवे।

रत्नप्रभा नरकका पूर्वके चरमान्तसे १८ बोलोंके जीव मनुष्य लोकके बादर तेउकायके पर्याप्ता अपर्याप्तपणे उत्पन्न हो उसके ३६ बोल तथा मनुष्य लोकके बादर तेउकायके पर्याप्तअ पर्याप्ता मरके रत्नप्रभाके पश्चपके चरमान्तमें १८ अठारा बोलपणे उत्पन्न हो जिसके ३६ बोल मनुष्य लोगके बादर तेउकायके पर्याप्ता अपर्याप्त मरके मनुष्य लोकके बादर तेउकाय पर्याप्ता अपर्याप्ता पणे उत्पन्न हुवे उसका च्यार बोल इस ७६ बोलमें रहस्ते चलते जीवोंको १–२–३ समय लागे एवं ३२४–७६ मीलाके ४०० बोल हुवे

रत्नप्रभा नरकके पूर्वके चरमान्तसे मरके पश्चमके चरमान्तमें उत्पन्न हुवे जीस्के ४०० भांगा कहा है इसी माफिक पश्चमके चरमान्तसे मरके पूर्वके चरमान्तमें उत्पन्न हुवे जीस्के भी ४०० भांगा। एवं दक्षिणके चरमान्तसे मरके उत्तरके चरमान्तमें उत्पन्न हुवे जीसके ४०० भांगा। उत्तरके चरमान्तसे मरके दक्षिणके चरमान्तमें उत्पन्न हुवे जीसका भी ४०० भांगा एवं च्यारों दिशावोंके १६०० भागे होते है। भावना पूर्ववत् समझना।

जेसे रत्नप्रभाके च्यारों दिशावोंका चरमान्तसे १६०० भाग किया है इसी माफीक शार्कर प्रभाका भी १६०० भागा करना परन्तु बादर तेउकायके जीव मनुष्य लोकसे मरके शार्कर प्रभाके चरमान्तमें उत्पन्न हुवे तथा शार्कर प्रभाके चरमान्तसे मरके मनुष्य लोकमें उत्पन्न हुवे जीसके रहस्तेमें २–३ समय लागे कारण शार्करप्रभा नरक अढाई राजके विस्तारवाली है वास्ते पहले समय समश्रेणिकर तसनालीमें आवेगा। दूसरे समय समश्रेणिकर मनुष्य लोकमें आवे अगर विग्रह करे तों तीन समय भी लागे शेषाधिकार रत्नप्रभावत् समझना १६०० भागा शार्कर प्रभाका

एवं बालुका प्रभाका भी १६०० भांगा

एवं पङ्क प्रभाका भी १६०० भांगा

एवं धूमप्रभाका भी १६०० भांगा

एवं तमप्रभाका भी १६०० भांगा

एवं तमतमा प्रभाका भी १६०० भांगा

नोट सातों नरकके चरमान्तमें बादर तेउकायके पर्याप्ता अर-

र्याप्त नहीं है वास्ते मनुष्य लोकके बादर तेउकायके पर्याप्ता अप-र्याप्ताका गमनागमन ग्रहण किया है दुजो नारकसे सातवी नरक तकके चरमान्तसे मनुष्य लोकसे गमनागमनमें २–३–समय समझना शेष भागमें १–२–३ समय समझना सातों नरकके ११२०० भांगा होते है।

इस असंख्याते कोडोनकोड विस्तारवाला लोकके दोय विभाग है (१) त्रसनाली उचापणेमें चौदा राज गोल एकराज परि-माण जीस्में त्रस जीव तथा स्थावर जीव है (२) स्थावरनाली जो त्रसनालीके बाहार जहांतक अलोक नआवे वहांतक उसके अन्दर केवल स्थावर जीव है।

अधोलोकके स्थावर नालीसे सूक्ष्म पृथ्वी कायका अपर्याप्ता जीव मरके। उर्ध्व लोकके स्थावर नालीके सूक्ष्म पृथ्वी कायके अपर्याप्तापणे उत्पन्न हो उस्में रहस्ते चलतोंको स्यात ३ समया स्यात् ४ समया लागे कारण प्रथम समय स्थावर नालीसे त्रसना-लीमें आवे दुसरे समय उर्ध्व लोकमें जावे तीसरे समय उर्ध्व लोकाके स्थावर नालीमें जाके उत्पन्न हुवे अगर विग्रह करे तों च्यार समय भी लग जाते है। एवं पहलेकि माफीक अधोलोककि स्थावरनालीसे १८ बोलोका जीव मरके उर्ध्व लोकके स्थावर नालीमें अठारा बोलोमें उत्पन्न होतों ३–४ समय लगे एवं ३२४ बोल हुवा। मनुष्य लोकके बादर तेउ उर्ध्व लोककि स्थावरनालीके १८ बोलो पणे उत्पन्न हुवे तो २–३ समय लागे कारण स्थावर नालीमें एक दफे ही जाना पडे। एवं १८ बोलोंके जीव मनुष्य लोकके तेउकाय पणे उत्पन्न होनेमें पर्याप्ता अपर्याप्ताके ३६ बोल एवं ७२ तथा

मनुष्य लोकका बादर तेउ कायके पर्याप्ता पर्याप्ता मनुष्य लोकमें होतो १–२–३ समय लागे कुल पूर्ववत् ४०० भाग इसी माफीक उत्पन्न उर्ध्व लोककि स्थावर नालीके जीव मरके अधोलोककि स्थावर नालीमें उत्पन्न हुवे जीसका भी पूर्ववत् ४०० भाग हुवे यहां तक ११२००–४००–४००–१२००० भाग हुवे ।

लोकके चरमान्तमें पांच सुक्ष्म स्थावरके पर्याप्ता अपर्याप्ता एवं १० तथा बादर वायुकायके पर्याप्ता अपर्याप्ता भीलाके १२ बोल पावे ।

लोकके पूर्वके चरमान्तरसे सूक्ष्म पृथ्वी कायका अपर्याप्त मरके लोकके पूर्वके चरमान्तमें सूक्ष्म पृथ्वी कायके अपर्याप्तपणे उत्पन्न होतो विग्रह गतिका १–२–३–४ समय लागे । कारण समश्रेणि एक समय, एक वक्राश्रेणि दो समय, दो वक्रा श्रेणि तीन समय (पूर्ववत्) जो अधोलोकके पूर्वके चरमान्तसे प्रथम समय समश्रेणिकर त्रसनालीये आवे दुसरे समय उर्ध्वलोकमें जावे तीसरे समय उर्ध्वलोकके पूर्वके चरमान्तमे जावे परन्तु वह अलोकके प्रदेशो कि विषमता हो तों चोथे समय उत्पन्न स्थानपर जा उत्पन्न होवे वास्ते च्यार समय तक भी लागे। एवं बारहा बोलों पणे उत्पन्न हो तों १–२–३–४ समय लागे बोल १४४ हुवा।

१४४	पूर्व	चरमान्तसे	पूर्वके चरमान्तका	वि०	१–२–३–४
,,	,,	,,	दक्षिण	,,	,,
,,	,,	,,	पश्चिम	,,	,,
,,	,,	,,	उत्तर	,,	,,
,,	दक्षि	चरमान्तसे	पूर्व चरमान्तका		,,

१४४	,,	,,	,,	दक्षिण	,,	,,
१४४	,,	,,	,,	पश्चिम	,,	,,
१४४	,,	,,	,,	उत्तर	,,	,,
१४४	पश्चिम	,,	,,	पूर्व	,,	,,
१४४	,,	,,	,,	दक्षिण	,,	,,
१४४	,,	,,	,,	पश्चिम	,,	,,
१४४	,,	,,	,,	उत्तर	,,	,,
१४४	उत्तर	,,	,,	पूर्व	,,	,,
१४४	,,	,,	,,	दक्षिण	,,	,,
१४४	,,	,,	,,	पश्चिम	,,	,,
१४४	,,	,,	,,	उत्तर	,,	,,

एवं १४४ को १६ गुणा करनेसे २३०४ भांगा होते है तथा १२००० पूर्वके मीलानेसे यहांतक १४३०४ भांगा हुवे।

पांच स्थावरके २० भेदों कि समुद्घात उत्पात और स्थान देखो शीघ्रबोध भाग १२ वां स्थानपदके थोकडेमे देखो।

एकेन्द्रियके २० भेद है जिसके आठ कर्मोंकि सत्ता, बन्ध सात आठ कर्मोंका और चौदा प्रकृतिको वेदते है। एकेन्द्रिकि आगति ७४ स्थानकि है ४६ तीर्यंच, तीन मनुष्य, पचवीस देवता एकेन्द्रियके च्यार समुद्घात क्रमःसर है।

एकेन्द्रिय च्यार प्रकारके है।

(१) समस्थिति सम कर्मवाले।

(२) समस्थिति विषम कर्मवाले।

(३) विषम स्थिति सम कर्मवाले।

(४) विषम स्थिति और विषय कर्मवाले।

ऐसा होनेका क्या कारण है सो बतलाते है।

(१) सम आयुष्य और साथमें उत्पन्न हुवा।

(२) सम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुवे।

(३) विषम आयुष्य और साथमें उत्पन्न हुवा।

(४) विषम आयुष्य और विषम उत्पन्न हुवा।

इति चोवीसवा शतकका प्रथम उद्देशा समाप्तं।

(२) अनन्तर उत्पन्न हुवा एकेन्द्रियके दश भेद है। पृथ्यादि पांच सुक्षमस्थावर पांच बादरस्थावर इन्ही दशोंके अपर्याप्ता है कारण प्रथम समयके उत्पन्न हुवेमे पर्याप्ता नही होते है। प्रथम समयके उत्पन्न हुवा मरके अन्य गतिमें भी नही जाते है।

समुद्घात उत्पात और स्थानकों दाखे स्थानपद।

दश भेदोंमे आठों कर्मकि सत्ता है। बन्ध आयुष्यवर्जके सात कर्मोंका है चौदा प्रकृति वेदते है। उत्पात ७४ स्थानसे समुद्घात दोय वेदनि कषाय। अनान्तरसमयके उत्पन्न हुवा एकेन्द्रिय दोय प्रकारके होते है (१) समस्थिति समकर्मवाला (२) समस्थिति विषम कर्मवाला। इति २४–२

एवं अनान्तर अवगाह्या अनन्तर आहारिक और अनान्तर पर्याप्ता, यह च्यार उद्देशा सादृश है।

१४३०४ परम्पर उत्पन्न होनेका उद्देशो समुच्चयवत्

१४३०४ परम्पर अवगाह्या ,, ,,

१४३०४ परम्पर आहारिक ,, ,,

१४३०४ परम्पर पर्याप्ता ,, ,,

१४३०४ चरम उदेशो „ „

१४३०४ अचरम उदेशो „ „

इस ओघ (समुच्चय) शतकके इग्यारा उदेशाके सर्व भांगा १००१२८ होते है इसी माफीक–

१००१२८ कृष्णलेशी शतकके ११ उदेशा

१००१२८ निललेशी शतकके ११ उदेशा

१००१२८ कापोतलेशी शतकके ११ उदेशा

१००१२८ समुच्चय भव्य संबन्धी ११ उदेशा

१००१२८ भव्य कृष्णलेशी शतक उदेशा ११

१००१२८ भव्य निललेशी „ „ „

१००१२८ भव्य कापोतलेशी „ „ „

अभव्य जीवोंका भी लेश्या संयुक्त च्यार शतक है परन्तु अभव्यमें चरम अचरम उदेशोंकों छोड शेष प्रत्येक शतकके नौ नौ उदेशा कहना। जिस्मे च्यार उदेशा तों अनान्तर समयके होनेसे भांगा नही होते है शेष पांच उदेशावोंके प्रत्येक उदेशे १४३०४ भागोंके हीसाबसे ७१५२० भागे एक शतकके होते है एवं च्यार शतकके २८६०८० भांगे होते है।

पहलेके आठ शतकके ८०१०२४ भागा मीलानेसे १०८७१०४ भागा श्रेणिशतकके होते है।

इति चौतीसवां मूल शतकके बारहा अन्तर शतकका १२४ उदेशा।

सेवं भंते सेवं भंते तमेवसच्चम्।

समाप्त चौतीसवा शतक।

थोकडा नम्बर १२.

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ३५ वां

(महायुम्मा)

प्रथम ३१-३२ शतकमें खुल्क=क्षुद्र युम्मा कहा था उसकि अपेक्षासे यहां महायुम्मा कहा है।

(प्र०) हे भगवान् ! महायुम्मा कितने प्रकारके है ?

(उ०) हे गौतम ! महायुम्मा शोला प्रकारका है—यथा—

(१)	कडयुम्मा	कडयुम्मा	जेसे	१६-३२	सं०	असं०	अनं०
(२)	,,	तेउगा	,,	१९-३५	सं०	असं०	अ०
(३)	,,	दावरयुम्मा	,,	१८-३४	,,	,,	,,
(४)	,,	कल्युगा	,,	१७-३३	,,	,,	,,
(५)	तेउगा	कडयुम्मा	,,	१२-२८	,,	,,	,,
(६)	,,	तेउगा	,,	१५-३१	,,	,,	,,
(७)	,,	दावर०	,,	१४-३०	,,	,,	,,
(८)	,,	कल्युगा	,,	१३-२९	,,	,,	,,
(९)	दावर०	कडयुम्मा	,,	८-२४	,,	,,	,,
(१०)	,,	तेउगा	,,	११-२७	,,	,,	,,
(११)	,,	दावर०	,,	१०-२६	,,	,,	,,
(१२)	,,	कल्युगा	,,	९-२५	,,	,,	,,
(१३)	कल्युगा	कडयुम्मा	,,	४-२०	,,	,,	,,
(१४)	,,	तेउगा		७-२३	,,	,,	,,
(१५)	,,	दावर०		६-२२	,,	,,	,,
(१६)	,,	कल्युगा		५-२१	,,	,,	,,

जैसे एकेन्द्रियके अन्दर कुडयुम्मा कडयुम्मे उत्पन्न होते है वह एक समय १६–३२–४८–६४ एवं शोला शोला वृद्धि करतों यावत् संख्याते असंख्याते अनंते उत्पन्न होते है वह सब शोला शोलाके हिसाबसे उत्पन्न होते है इसी माफीक १६ युम्माके अंक रखा है इस्मे ऊपर शोला शोलाकि वृद्धि करना।

इस शतकमें एकेन्द्रिय महायुम्मा शतकका अधिकार बतलाया है प्रत्येक युम्मोपर बत्तीस बत्तीस द्वार उतारे जावेगा।

हे भगवान् कडयुम्मा कडयुम्मा एकेन्द्रिय कहांसे आके उत्पन्न होते है इसी माफीक अपने अपने द्वारके प्रथम कडयुम्मा कडयुम्मा एकेन्द्रिय सब द्वारोंके साथ बोलना।

(१) उत्पात—७४ स्थानोंसे आके उत्पन्न होते है।

(२) परिमाण—१६–३२–४८ संख्या० असं० अनन्ते।

(३) अपहरण—प्रत्येक समय एकेक जीव निकाले तों अनन्ती सर्पिणि उत्सर्पिणि पूर्ण होजाय इतना जीव है।

(४) अवगाहना—ज० अंगु० असं० भाग० उ० साधिक १००० जोजन।

(५) बन्ध सातों कर्मोंके बन्धवाले जीव बहुत और आयुष्य कर्मके बन्ध तथा अबन्धवाले भी बहुत है।

(६) वेदे—आठों कर्मोंके वेदनेवाला बहुत असाता तथा असाता वेदनेवाला भी बहुत है।

(७) उदय—आठों कर्मके उदयवाला बहुत।

(८) उदिरणा—छे कर्मोंके उदिरणावाला बहुत आयुष्य और वेदनिय कर्मोंके उदिरणावाले बहुत अनुदिरणावाले बहुत।

(९) लेश्या—कृष्ण निल कापोत तेजोलश्यावाले बहुत ।

(१०) दृष्टी—मिथ्यादृष्टी जीव बहुत है ।

(११) ज्ञान नहीं, अज्ञानी जीव बहुत हैं ।

(१२) योग—कायाके योगवाले बहुत है ।

(१३) उपयोग—साकार अनाकार उप०वाले बहुत ।

(१४) वर्णादि—जीवापेक्षा वर्णादि० नहीं है, शरीरापेक्षा वर्णादि है।

(१५) उश्वासगा—उश्वास नि० नोउश्वा० नि० के बहुत है ।

(१६) आहार—आहारीक अनाहारीक बहुत है ।

(१७) व्रती—सर्व जीव अव्रती है ।

(१८) क्रिया—सर्व जीव सक्रिया है ।

(१९) बन्ध—सातकर्म बन्धनेवाले. बहुत आठ० बहुत है ।

(२०) संज्ञा—च्यारों संज्ञावाले बहुत बहुत है ।

(२१) कषाय—च्यारों कषायवाले " "

(२२) वेद—नपुंसक वेदवाले बहुत ।

(२३) बन्धक—तीनों वेदके बन्धक बहुत बहुत है ।

(२४) संज्ञी—सर्व जीव असंज्ञी है ।

(२५) इन्द्रिय—सर्व जीव इन्द्रिय सहित है ।

(२६) अनुबन्ध—ज० एक समय उ० अनन्तेकाल

---

१ तीर्यचके ४६ मनुष्यके ३ देवतोंके २५ एवं ७४ देखों इकेन्द्रियकि आगति—

१ एक समय जीवकि स्थिति अनुबन्ध नही किन्तु महायुम्मा कि रास रेहने अपेक्षा हैं कारण जीव समय समय उत्पन्न होते है चवते भी है ।

(१७) संमहो—देखो गमाका थोकडा पृथ्वी अधिकार ।

(२८) आहार—व्याघातापेक्षा स्यात ३–४–५ दिशा निर्व्याघातापेक्षा नियमा छेवों दिशाका आहार लेवे ।

(२९) स्थिति—ज० एक समय (महा युम्मा रहेनेकि अपेक्षा) उत्कृष्ट २२००० वर्षकि

(३०) समुद्घात—प्रथमकि च्यारोंवाले बहुत १

(३१) मरण—समोहिय असमोहियके बहुत २

(३२) चवन—मरके ४९ स्थान ४६–१में जाते है ।

(प्र०) हे भगवान् ! सर्व प्राणभूत जीव सत्व कडयुम्मा कडयुम्मा एकेन्द्रियपणे पूर्वे उत्पन्न हुवा है ।

(उ०) हे गौतम—एक बार नहीं किन्तु अनन्तीवार उत्पन्न हुवे है ।

यह ३२ द्वार कडयुम्मा कडयुम्मापर उतारे गये है इसी माफीक १६ महायुम्मा पर उतार देना परन्तु परिमाण द्वारमें पूर्व बतलाये हुवे परिमाण कहना चाहिये इति ३५–१

(२) प्रथम समयके कडयुम्मा २ कि पृच्छा १

(उ०) प्रथम उद्देशा कि माफोक ३२ द्वार कहना परन्तु प्रथम समयके उत्पन्न हुआ जीवोंमें नाणन्ता दश है यथा ।

(१) अवगाहाना ज० उ० अंगु० असं० भाग ।

(२) आयुष्य कर्मका अबन्धक है

(३) आयुष्य कर्मके अनुदिरक है

(४) उश्वास निश्वासगा नहीं है

(५) सात कर्मोका बन्धक है किन्तु आठका नही।

(६) अनुबन्ध ज० उ० एक समयका है

(७) स्थिति ज० उस एक समय कि (रासी कि)

(८) समुद्घात—वेदनि और कषाय।

(९) मरण—कोइ प्रकारका नही है

(१०) चवन—चवन हो अन्यस्थान नही जाते है।

शेष द्वार पूर्ववत् एवं १६ महा युम्मा समझना इति ३५-२

(३) अप्रथम समयका उदेशा प्रथमवत् ३५—३

(४) चरम समय उदेशामें देवता नहीं आते है लेश्या तीन शेष ३२ द्वारसे शोला महायुम्मा प्रथम उ०वत् ३५-४

(५) अचरम उदेशो प्रथम उ०वत्। ३५-५

(६) प्रथम प्रथम उदेशो दुसरा उ०वत् ३५-६

(७) प्रथम अप्रथम उदेशो दुसरा उ०वत् ३५-७

(८) प्रथम चरम उदेशो दुसरा उदेशावत् ३५-८

(९) प्रथम अचरम उ० दुसरा उ०वत् ३५-९

(१०) चरम चरम उदेशो चोथा उदेशावत ३५-१०

(११) चरमा चरम उदेशो दुसरा उ०वत् ३५-११

इस इग्यारा उदेशोंमें १-३-५ यह तीन उदेशा सादृश है शेष आठ उदेशा सादृश है। चोथा आठवा दशवा उदेशे देवता सर्वत्र नहीं उपजे वास्ते लेश्या भी तीन हुवे शेषाधिकार प्रथमो देशा माफीक समझना इति इग्यारा उदेशा संयुक्त पैतीसवा शतकका प्रथम अन्तर शतक समाप्तम्। ३५-१-११

(२) दुसरा शतक कृष्ण लेशीका है वह प्रथम शतककि माफीक इग्यारा उदेशा कहना परन्तु नाणन्ता तीन है (१) लेश्या एक कृष्ण (२) अनुबन्ध ज० एक समय उ० अन्तर महुर्त (३) स्थिति ज० एक समय उ० अन्तर महुर्त शेष इग्यारा उदेशा प्रथम शतक माफीक परन्तु यहां देवता सर्वत्र नहीं उपजे। १-३-५ सादश शेष काठ उदेशा सादश है इति ३९-२

(३) एवं निल लेश्याका शतकके उदेशा ११

(४) एवं कापोत लेश्या शतकके उदेशा ११

इस्में लेश्या अपनि अपनि और स्थिति अनुबन्ध कृष्णकि माफीक इति पैतीसवां शतकका च्यार अन्तर शतक ४४ उदेशा हुवा।

जेसे ओघ शतक और तीन लेश्याका तीन शतक कहा है इसी माफीक भव्य सिद्धि जीवोंका भी च्यार शतक समझना परन्तु यहां सर्व जीवादि भव्य एकेन्द्रियपणे उत्पन्न नहीं हुवा है। कारण सर्व जीवोंमें अभव्य जीव भी सेमल है। शेषाधिकार पहलेके च्यार शतक सादश है इति ३९-८

जेसे भव्य सिद्धि जीवोंका लेश्या संयुक्त च्यार शतक कहा है इसी माफीक च्यार शतक अभव्य सिद्धि जीवोंका भी समझना इति ३९-१२-१३२ पैतीसवां शतकके अन्तर शतक बारहा उदेशा एक सौ बत्तीस समाप्तं।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नंबर १३.

सुत्र श्री भगवती शतक ३३

(वेन्द्रिय महायुम्मा)

महायुम्मा १६ प्रकारके होते है परिमाण. पैतीसवे शतककि माफिक समाझना. कडयुम्मा कडयुम्मा वेन्द्रिय काहासे आके उत्पन्न होते है ? तीर्यचके ४६ और मनुष्यके ३ एवं ४९ स्थानोंसे आके वेन्द्रियमें उत्पन्न होते है यहां भी एकेंद्रियकि माफीक ३२ द्वार कहना चाहिये जीस द्वारमें फरक है वह यहांपर बता दिया जाता है ।

(१) उत्पात—४९ स्थानकि है ।

(२) परिमाण—१६—३२—४८ यावत् असंख्याते ।

(३) अपहरनमें काळ यावत् असंख्याते ।

(४) अवगाहाना उ० बारहा योजनकि । +++

(९) लेश्या—कृष्ण निल कापोत ।

(१०) दृष्टी दोय—सम्यग्दृष्टी मिथ्यादृष्टी

(११) ज्ञान—दोयज्ञान दोयअज्ञान ।

(१२) योग—दोय मनयोग वचनयोग +++

(२५) इन्द्रिय—दोय स्पर्शेन्द्रिय रसेंद्रिय ।

(२६) अनुबंध—ज० एक समय उ० संख्याते काळ ।

(२८) आहार=नियमा छेवौ दिशा काले ।

(२९) स्थिति ज० एक समय उ० बारहा वर्ष ।

(३०) समुद्घात तीन वेदनिय, कषाय, मरणंति ।

शेष १९ द्वार एकेंद्रिय महायुम्मावत समझना शेष १५ महायुम्मा भी इसी माफीक परन्तु परिमाण अपना अपना कहना इति ३६—१

(२) दुसरा प्रथम समयके उदेशामें नाणन्ता ११ है यथा—

(१) अवगाहाना ज० अंगु० असं० भाग।

(२) आयुष्य कर्मका अबन्धक है

(३) आयुष्यकर्म उदिरणा भी नही है

(४) उश्वास निश्वासगा भी नही है

(५) सात कर्मोका बन्धक है परन्तु आठका नही

(६) अनुबन्ध ज० उ० एक समयका

(७) स्थिति ज० उ० एक समयकि

(८) समुद्घात—दोय० वेदनिय कषाय

(९) योग—एक कायाक है

(१०) मरण नही (११) चवन नही है।

शेष २१ द्वार पुर्वोक्त ही समझना एवं १६ महायुम्मा इति ३६—२ इसी माफीक प्रथमादि सर्व ११ उदेशा होते है १—३—५ यह तीन उदेशा सादश है शेष ८ उदेशा सादश है परन्तु ४—६—८—१० इस च्यार उदेशोंमें ज्ञान और समकित नही है। इति छतीसवा शतकका अन्तर शतकके इग्यारा उदेशा समाप्तम्।

(२) इसीमाफीक कृष्णलेशी बेन्द्रियका इग्यारा उदेशा संयुक्त दुसरा अन्तर शतक है परन्तु लेश्या तीनके स्थान एक कृष्णा लेशा है. अनुबन्ध औरस्थिति ज० एकसमय उ० अन्तर

मुहुर्त है । कारण औदारीक शरीर धारीके लेश्या अन्तर महुर्तसे अधिक नही रहेती है इति ३६–१–२२

(३) एवं निललेश्यावाले बेन्द्रियका शतक ।

(४) एवं कापोतलेशी बे न्द्रियका अन्तर शतक ।

इसी माफीक भव्य सिद्धि जीवोंका भी लेश्या संयुक्त च्यार शतक कहाना ० सर्व जीवोंकि उत्पात एकेन्द्रिय महायुम्मा कि माफीक समझना–कारण सर्व जीव भव्यपणे उत्पन्न नही हुवा न होगा–सर्व जीवोंमें अभव्य जीव भी समेल है । अभव्य भव्यपणे न उत्पन्न हुवा न होगा ।

इसी माफीक लेश्या संयुक्त च्यार शतक अभव्य सिद्धि जीवोंका भी समझना । इति छतीसवां मूल शतकके बारह अन्तर शतक प्रत्येक शतकके इग्यारा इग्यारा उद्देशा होनेसे १३२ उद्देशा हुवा इति ३६ वा शतक समाप्तं ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकड़ा नम्बर १४

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ३७ वां

(तेन्द्रिय महायुम्मा)

जेसे बेन्द्रिय महायुम्मा शतकके १३२ उद्देशा कहा है इसी माफीक तेन्द्रिय महा शतकके बारहा अन्तर शतक और प्रत्येक शतकके इग्यारा इग्यारा उद्देशा कर सर्व १३२ कह देना परन्तु यहांपर ।

(१) अवगाहाना ज० अंगुलके असंख्यातमें भाग उत्कृष्ट तीन गाउकि केहना ।

(२) महायुम्मावोंकि स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट एकुण पचास अहोरात्रीकि कहना ।

(३) इन्द्रिय तीन घ्रणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय कहना ।

शेषाधिकार बेन्द्रियमहायुम्मा माफीक समझना इति ३७-१२-१३२ इति सेतीसवा शतक समाप्तम्

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नंबर १९.

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ३८ वां

(चौरिंद्रिय महायुम्मा)

जीस रीतिसे तेन्द्रिय महायुम्मा शतक कहा है इसी माफीक यह चौरिंद्रिय महायुम्मा शतक समझना । विशेष इतना है ।

(१) अवगाहाना जघन्य अंगुलके असंख्यातमे भाग उत्कृष्ट च्यार गाउकि है ।

(२) स्थिति—जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छेमास

(३) इन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्रणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय ।

शेषाधिकार तेन्द्रिय माफीक इति ३८-१२-१३२ इति अडतीशवां शतक समाप्तम् ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नं० १६

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ३९ वां

(असंज्ञी पांचेन्द्रिय महायुम्मा)

जीस रीतसे चौरिन्द्रिय महायुम्मा शतक कहा है इसी माफीक यह असंज्ञो पांचेन्द्रिय महायुम्मा शतक समझना परन्तु (१) अवगाहना ज० अंगुलके असंख्यातमें भाग उत्कृष्ट १००० योजनकि (२) इन्द्रिय पांचों है (३) अनुबन्ध जघन्य एक समय उ० प्रत्येक कोडपूर्वका (४) स्थिति ज० एक समय उ० कोडपूर्वक वर्षोंकि (५) चवन ४९ स्थान पूर्ववत् समझना। प्रत्येक अन्तर शतकके इग्यारा इग्यार उदेशा पूर्ववत् करनेसे बारहा अन्तर शतकके १३२ उदेशा हुवा। इति एकुनचालीसवा शतक समाप्तम्।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकड़ा नम्बर १७

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ४० वां

(संज्ञी पांचेन्द्रिय महायुम्मा)

महायुम्मा १६ प्रकारके है परिमाण एकेन्द्रिय महायुम्मा शतकमें लिखा आये है। यहांपर कडयुम्मा कडयुम्मा संज्ञी पांचेन्द्रिय कहांसे आके उत्पन्न होते है तथा ३१ द्वार बतलाते है।

(१) उत्पात=सर्व स्थानोंसे आके उत्पन्न होते है।

(२) परिमाण—१६—३२—४८ यावत् असंख्याते।

(३) अपहरण—यावत् असंख्याति उत्सर्पिणि २

(४) बन्ध=वेदनिय कर्मके बन्धक बहु १० शेष सातों कर्मोका बंधक भी घणा अबन्धक भी घणा ।

(५) उदय–सात कर्मोके उदयवाला घणा० मोहनिय कर्मके उदयवाले घणा तथा अनोदयवाला भी घणा ।

(६) उदिरणा,=नाम गौत्र कर्मोके उदिरक घणा, शेष छे कर्मोका उदिरक तथा अनुदिरक भी घणा ।

(७) वेदे–सात कर्मोका वेदका घणा, मोहनिय कर्मका वेदका अनवेदका भी घणा ।

(८) अवगाहाना उ० १००० जोजनकि ।

(९) लेश्या–कृष्ण यावत् शुक्ल लेश्यावाले भी घणा

(१०) दृष्टी–सम्य० मिथ्य: मिश्र० ,,

(११) ज्ञान–ज्ञानी अज्ञानी दोनों भो ,,

(१२) योग–मन वचन कायवाले ,,

(१३) उपयोग–साकार अनाकारवाले ,,

(१४) वर्णादि–एकेन्द्रिय माफीक

(१५) उश्वासगा ,, ,,

(१६) आहार ,, ,,

(१७) व्रति=व्रति अव्रति व्रताव्रति ,,

(१८) क्रिया–सक्रिय घणा ,,

(१९) बन्ध ७–८–६–१ कर्मोके बन्धने वाले,,

(२०) संज्ञा, च्यारों संज्ञावाले तथानो संज्ञा ,,

(२१) कषाय, च्यारों कषायवाले तथा अकषाय,,

(२२) वेद=तीनोंवेद तथा अवेदी ,,

(२३) बन्धक,—तीनों वेदके बन्धक तथा अबन्धक भी

(२४) संज्ञी—असंज्ञी नहीं, संज्ञी बहुत है।

(२५ इन्द्रिय, अनेन्द्रिय नही सेन्द्रिह बहुत।

(२६) अनुबन्ध. ज०एकसमय उ.प्रत्यक सौसागरोपम साधिक

(२७) संमहो—जेसे गमाजीके थोकडे लिखा है।

(२८) आहार नियमा छे दिशका २८८ बोलका

(२९) स्थिति ज० एक समय उ० तेतीस सागरो०

(३०) समुदंघात केवली वर्जके छे वाले पणा।

(३१) मरण दोनों प्रकारसे मरे। स० अ०

(३२) चवन—चरके सर्व स्थानमें जावे।

(प्र) हे करूणा सिन्धु। सर्व प्राणभूतजी वसत्व कडयुम्मा कडयुम्मा संज्ञी पांचेन्द्रियपणे उत्पन्न हुवा है।

(उ) हे गौतम सर्व प्राणभूत जीव सत्व कड० कड० संज्ञी पांचेन्द्रियपणे पूर्वे एकवार नहीं किन्तु अनन्ती अनन्ती वार उत्पन्न हुवा है। कारण जीव अनादि कालसे संसारमें परिभ्रमण कर रहा है।

इसी माफीक शेष १५ महायुम्मा भी समझ लेना परन्तु परिमाण अपना अपना कहाना। इति ४० शतक प्रथम उदेशा।

(२) प्रथम समयके संज्ञी पांचेन्द्रिय कडयुम्मा कहासे उत्पन्न होते है इत्यादि ३२ द्वार।

(१) उत्पात—सर्वस्थानसे (२) परिमाण पूर्ववत (३) अपहा-रण पूर्ववत् (४) अवगाहाना ज० उ० अंगुलके असंख्यातमें भाग

(५) बन्ध आयुष्य कर्मका अबन्ध शेष पूर्ववत् (६) वेदे आठों-कर्मोका वेदका है (७) उदय आठों कर्मोका (८) उदिरणा आयुष्य कर्मका अनुदिरक वेदनिय कर्मकि भजना शेष छे कर्मोका उदिरक अनुदिरक। (९) लेश्या छेवों (१०) दृष्टी दोय सम्य० मिथ्या० (११) ज्ञानाज्ञान दोनों (१२) योग—कायाको (१३) उपयोग दोनों (१४) वर्णादि, एकेन्द्रियवत। (१५) उश्वासग, नो उश्व० नो निश्वा० (१६) आहारीक (१७) अव्रती है (१८) क्रिया सक्रिय है (१९) बन्ध—सात बन्धगा (२०) संज्ञ=च्यारों (२१) कषाय=च्यारों (२२) वेद=तीनों (२३) बन्धक=अबन्धक (२४) संज्ञो है। (२५) इन्द्रिय=पेंद्रिय है (२६) अनुबंध ज० उ० एक समय (२७) संम हों गमावत् (२८) आहार नियमा छे दिशाका (२९) स्थिति ज० उ० एक समय (३०) समुद्घात=दोय वदेनिय० कषाय० (३१) मरण नहीं (३२) चवन नहीं। एवं १६ महायुग्मा परन्तु परिमाण अपना अपना कहना. सर्व प्राणभूत जीव सत्व प्रथम समयके कड० कड० संज्ञा पांचेंद्रियपणे अनन्ती वार उत्पन्न हुवा है भावना पूर्ववत इति ४०—२ समाप्तम्।

(३) अप्रथम समयका उदेशा (४) चरम समयका उदेशा (५) अचरम समयका उदेशा (६) प्रथम प्रथम समयका उदेशा (७) प्रथम अप्रथम समयका उ० (८) प्रथम चरम समयका उ० (९) प्रथम अचरम समयका उ० (१०) चरम चरम समयका० (११) चरम अचरम समयका उदेशा. इस इग्यारा उदेशावोंमें पहला, तीसरा और पांचमा यह तीन उदेशा सादृश है। शेष आठ उदेशा सादृश है। इति चालीसवा शतकके इग्यारा उदेशोंसे प्रथम अन्तर शतक समाप्त हुआ।

(२) कृष्ण लेश्याका दुसरा शतक महायुम्मा १६ प्रकारके हैं प्रथम कडयुम्मा कडयुम्मा परद्वार ।

(१) उत्पात. मनुष्य तीर्यंचसे तथा नारकी देवता पर्याप्ता कृष्ण लेशीसे आके सज्ञी पांचेन्द्रिय कड० कड० कृष्णलेशीये उत्पन्न होते हैं ।

(२) बन्ध, उदय, उदिरणा, बेदे, एकेन्द्रिवत्

(३) लेश्या–एक कृष्ण लेश्या

(४) बन्धक–सात आठ कर्मोंका बन्धक है

(५) सज्ञा, कषाय, वेद, बन्धक, एकेन्द्रियवत्

(६) अनुबन्ध. ज० एक समय उ० ३३ सागरोपम अन्तर महुर्त अधिक

(७) स्थिति–ज० एक समय उ० ३३ सागरो०

शेष १९ द्वार ओघ उदेशा माफीक समझना. एवं शेष १५ महायुम्मा भी केहना. एवं प्रथम समयादि ११ उदेशा ओघ शतकके माफीक नाणन्ते संयुक्त और १–३–५ यह तीन उदेशा सादृश शेष आठ उदेशा सादृश इति ४०–२–२२

(३) एवं निललेश्याका इग्यारा उदेशा संयुक्त तीसरा अन्तर शतक है परन्तु अनुबन्ध ज० एक समय, उ० दश सागरोपम पल्योपमके असंख्यात भाग अधिक एवं स्थिति भी समझना इति ४०३–२३

(४) एवं कापोत लेश्याका इग्यारा उदेशा संयुक्त चोथा अन्तर शतक परन्तु अनुबन्ध ज० एक समय उ० तीन सागरोपम पल्योपमके असंख्यातमा भाग अधिक एवं स्थिति भी समझना इति ४०–४–२४

(५) एवं तेजो लेश्याका इग्यारा उदेशा संयुक्त पांचवा अन्तर शतक परन्तु अनुबन्ध उ० दोय सागरोपम पल्योपमके असंख्यातमे भाग अधिक. एवं स्थिति. किन्तु १-२-५ उदेशामें नो संज्ञा भी कहना कारण तेजोलेशी सातवे गुनस्थान भी है वहांपर संज्ञा नहीं है शेष पूर्ववत् इति ४०-५-५५।

(६) एवं पद्मलेश्याके इग्यारा उदेशा संयुक्त छटा अन्तर शतक है परन्तु अनुबन्ध ज० एक समय उ० दश सागरोपम अन्तर महुर्त साधिक. स्थिति दश सागरोपम शेष तेजो लेश्यावत् समझना इति ४०-६-६६

(७) शुक्लेश्याके इग्यारा उदेशा संयुक्त सातवा अन्तर शतक ओघ शतककि माफक समझना परन्तु अनुबन्ध ज० एक समय उ० तेतीस सागरोपम अन्तर महुर्त साधिक स्थिति उ० तेतीस सागरोपमकि है इति ४०७-७७ इति। लेश्या संयुक्त सात शतक समुच्चयके हुवे।

नोट-उत्पात तथा चवनद्वारमें सर्वस्थानोंके जीवोंकि उत्पात तथा चवन कहा है वह अपने अपने लेश्यावोंके स्थानवाले नारकि देवता जीस जीस लेश्यामे उत्पन्न होते है और चवनमें भी जीस जीस लेश्यासे चवते है उस उस लेश्याके स्थानमें उत्पन्न होते है तात्पर्य यह हुवा कि नारकि देवतावोंमे अपनि अपनि लेश्याका ही सर्व स्थान समझना।

इसी माफीक भव्य जीवोंका भी लेश्या संयुक्त सात शतक कहाना. सर्व जीव उत्पन्नका उत्तरमें पुर्ववत् निषेद करना। इति ४८=१४=१९४।

अभव्य जीवोंका सात शतक भव्य जीवोंकि माफीक है परन्तु जो तफावत है सो बतलाते है ।

(१) उत्पात–पांचानुत्तर वैमान छोडके

(१०) दृष्टी एक मिथ्यात्वकी

(११) ज्ञान–ज्ञान नहीं अज्ञान है ।

(१७) व्रति–व्रति नहीं, अव्रति है ।

(२६) अनुन्ध उ० तेतीस सागरोपम (नरकापेक्षा) परन्तु शुक्ल लेश्या शतकमे उ०

(२९) स्थिति–उ० तेतीस सागरोपम शुक्ल लेश्याकि अनुबन्धवत्

(३०) समुद्घात–पांच क्रमःसर

(३१) सागरोपम–अन्तर महुर्त समझना ।

(९) लेश्या–कृष्णादि छेवों

(३२) चवन पांचानुत्तर वैमान छोड सर्वत्र

शेष सर्व द्वार असंज्ञी तीर्यंच पांचेन्द्रियकि माफीक समझना. सर्व जीव अभव्यपणे उत्पन्न नही हुवा है । १–३–५ एक गमा शेष आठ उदेशा एक गमा । इसी माफीक शोला महायुम्मा समझना । इति ।

(२) कृष्णलेशी शतकमें नाणन्ता तीन ।

(१) लेश्या एक कृष्ण लेश्या ।

(२) अनु० उ० तेतीस सागो० अन्तर० अधिक

(३) स्थिति उ० तेतीस सागरोपम ।

(३) एवं निल लेश्याका शतक नाणन्ता
(१) लेश्या एक निललेश्या (अधिक
(२) अनु० उ० दशसागरो० पल्या० असंभाग
(३) स्थिति उ०दश सागरोपम ,, ,,

(४) एवं कापोत लेश्याका शतक नाणन्ता
(१) लेश्या एक कापोत लेश्या [अधिक
(२) अनु० उ० दोय सागरों० पल्यो० असं० भाग
(३) स्थिति तीन सागरोपमकि ,, ,,

(५) एवं तेजो लेश्याका शतक नाणन्ता
(१) लेश्या एक तेजस लेश्या
(२) अनु० उ० दोय सागरो० पल्य० असं० भाग
(३) स्थिति ,, ,, ,,

(६) एवं पद्मलेश्याका शतक नाणन्ता
(१) लेश्या एक पद्म लेश्या
(२) अनु० दश सागरो० अन्तर महुर्त अ०
(३) स्थिति उ० दश सागरो०

(७) एवं शुक्ल लेश्या शतक नाणन्ता
(१) लेश्या एक शुक्ल लेश्या
(२) अनु० उ० ३१ सागरो० अन्तर महुर्त
(३) स्थिति ३१ सागरोपम

शेष अधिकार पूर्ववत् समझना. इति चालीसवा शतकके अन्तर शतक २१ उदेशा २३१ संयुत चालीसवा शतक समाप्तम्।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सचम् ।

थोकड़ा नम्बर १८.

श्री भगवतीजी सूत्र शतक ४१वां

(रासी युम्मा)

(प्र) हे भगवान । रासी युम्मा कितने प्रकारके है ।

(उ०) हे गौतम । रासी युम्मा च्यार प्रकारके है । यथा रासी कडयुम्मा, रासी तेउगायुम्मा, रासी दावरयुम्मा, रासी कलयुगायुम्मा ।

(प्र०) हे भगवान् रासी कडयुम्मा यावत् रासी कलयुगा कीसकों कहते है ।

(१) जीस रासीके अन्दरसे च्यार च्यार निकालने पर शे च्यार रूप वढजावे उसे रासी कडयुम्मा कहते है (२) इसी माफी शेष तीन वढ जानेसे रासी तेउगा (३) दोय वढ जानेसे रासी दावर युम्मा (४) और एक वढ जानेसे रासी दावर युम्मा कहा जाते है ।

(प्र) रासी युम्मा नारकी कहासे आके उत्पन्न होते है ?

(१) उत्पात–पांच संज्ञी तीर्यंच पांच असंज्ञी तीर्यंच तथा एक संख्याल वर्षका कम भूमि मनुष्य एवं ११ स्थानोंसे आके उत्पन्न होते है ।

(२) परिमाण· ४·८·१२·१६ यावत् संख्या० असंख्याते ।

(३) सान्तर–और निरान्तर ।

(१) सान्तर–उत्पन्न हो तों ज०एक समय उत्कृष्ट असंख्यात समय तक हुवा ही करे ।

(३) निरान्तर उत्पन्न होतों ज० दोय समय उ० असंख्यात समय उत्पन्न हुवा ही करे ।

(४) ज० समयद्वार-(१) जिस समय रासी कडयुम्मा है उस समय रासी तेउगा नहीं है । (२) जिस समय रासी तेउगा है उस समय रासी कडयुम्मा नहीं है (३) जिस समय रासी कडयुम्मा है उस समय रासी दाबरयुम्मा नहीं है (४) जिस समय रासी दाबरयुम्मा है उस समय कडयुम्मा नहीं है (५) जिस समय रासी कडयुम्मा है उस समय रासी कलयुग नहीं है (६) जिस समय रासी कलयुग है उस समय रासी कडयुम्मा नहीं है । अर्थात् च्यारो युम्मासे एक होगा उस समय शेषका निषेद है ।

(५) नारकिमें जीव कीस तरहसे उत्पन्न होता है (२५=८) सथवाडाका द्रष्टांतकी माफीक उत्पन्न होते है ।

(प्र) नारकीमें जीव उत्पन्न होते है वह आत्माके संयमसे या असंयमसे उत्पन्न होते है ।

(उ) आत्माका असंयमसे उत्पन्न होते है ।

(प्र) आत्माका संयमसे जीवे है या असंयमसे ।

(उ) असंयम-से जीवे है वह अलेशी नहीं परन्तु सलेशी है अक्रिया नहीं किंतु सक्रिया है ।

(प्र) सक्रिय नारकी उसी भवमें मोक्ष जावेगा ।

(उ) नहीं उसी भवमें मोक्ष नहीं जावे ।

इसी माफीक २४ दंडककि पृच्छा और उत्तर है जिस्के अन्दर जो नाणन्ता है सो निचे बतलाते है ।

(१) वनास्पतिके उत्पात अनन्ता है।

(२) अगतिके स्थान अपने अपने अगाति स्थानोंसे कहना देखो गत्यागतिका थोकडाकों।

(३) मनुष्य दंडकमें उत्पन्न तो आत्माके असंयमसे होते है परन्तु उपजीवकाधिकारमें कोई संयमसे कोई असंयमसे करते है। जो आत्माके संयमसे मनुष्य जीवे है वह क्या सलेशी होते है या अलेशी होते है? सलेशी अलेशी दोनों प्रकारसे होते है। जो अलेशी है वह नियमा अक्रिय है। जो अक्रिय है वह नियमा मोक्ष जावेगा।

जो सलेशी है वह नियमा सक्रिय है। जो सक्रिय है वह कितनेक तो तद्भव मोक्ष जावेगा। और कितनेक तद्भव मोक्ष नहीं जावेगा।

जो आत्माके असंयमसे जीवे है वह नियमा सलेशी है। जो सलेशी है वह नियमा सक्रिय है। जो सक्रिय है वह उस भवमे मोक्ष नहीं जावेगा। इति रासीयुम्मा नामका इगतालीसवा शतकका प्रथम उदेशा समाप्तं। ४१-१

(२) एवं रासी तेउगा युम्माका उदेशा परन्तु परिमाण ३-७-११-१५ संख्याते असंख्याते।

(३) एवं रासी दावर युम्माका उदेशा परन्तु परिमाण २-६-१०-१४ संख्याते असंख्याते।

(४) एवं रासी कलयुगा उदेशा परन्तु परिमाण १-५-९-१३ संख्याते असंख्याते।

इस च्यार उदेशोंकों ओघ (समुचय) उदेशा कहते है।

इसी प्रकारसे च्यार उदेशा कृष्णलेश्याका है परन्तु यहां ज्योतीषी और वैमानिक वर्जके । बावीस दंडक है । नारकी देवतोंके जीतने स्थानमें कृष्ण लेश्या हो उन्हों कि आगति हो वह यथासंभव कहेना । विशेष इतना है कि मनुष्यके दंडकमे संयम, अलेशी, अक्रिया, तद्‌भवमोक्ष यह च्यार बोल नही कहेना कारण इस बोलोंका कृष्ण लेश्यामें अभाव है यहांपर भाव लेश्याकि अपेक्षा है । शेषाधिकारी 'ओघ' वत् इति ४१–८

(४) एवं च्यार उदेशा निललेश्याका अपना स्थान और अगति यथा संभव कहेना शेष कृष्णलेश्यावत् इति ४१–१२

(४) एवं कापोत लेश्याका भी च्यार उदेशा परन्तु आगति तथा लेश्याका स्थान याथासंभव केहना इति ४१–१६ ।

(४) एवं तेजो लेश्याका भी च्यार उदेशा परन्तु यहां दंडक १८ है नारकीमें तेजो लेश्या नहीं है, देवतावोंमें सौधर्मेशान देवलोक तक कहाना आगति अपनि अपनि समझना ।

(४) एवं पद्म लेश्याका भी च्यार उदेशा परन्तु दंडक तीन है पांचवा देवलोक तक और आगति अपनि अपनि कहेना इति ।

जैन सिद्धांत स्याद्वाद गंभिर शैलीवाले है जेसे छटे गुणस्थान लेश्या छे मानी गइ है यहांपर पद्म लेश्या तक संयम भी नहीं माना है । यह संभव होता है कि कृष्ण लेश्यामें संयम माना है वह व्यवहार नयकि अपेक्षा है और पद्म लेश्या तक संयम नहीं माना है वह निश्चय नयकि अपेक्षा है इस्में भि सामान्य विशेष पक्ष होना संभव है । तत्त्व केवलीगम्यं ।

(४) एवं शुक्ल लेश्याका भी च्यार उदेशा परन्तु दंडक तीन है मनुष्यके दंडकमें जेस समुच्चयमें विस्तार किया है संयम सलेशी अलेशी सक्रिय अक्रिय तद्भव मोक्ष जाना काहा है वह सर्व कहेना। इति च्यार उदेशा समुच्चय और छे लेश्याके चौवीस उदेशा सर्व २८ उदेशा होता है।

२८ उदेशा ओघ (समुच्चय) लेश्या संयुक्त

२८ उदेशा भव्य सिद्धि जीवोंका पूर्ववत्

२८ उदेशा अभव्य सिद्धि जीवोंका परन्तु सर्व स्थान असंयम ही समझना

२८ उदेशा सम्यग्दृष्टी जीवोंका ओघवत्

२८ उदेशा मिथ्यात्वी जीवोंका अभव्यवत्

२८ उदेशा कृष्णपक्षी जीवोंका अभव्यवत्

२८ उदेशा शुक्ल पक्षी जीवोंका ओघवत्

इति १९६ उदेशा हुवे इति एगतालीसवा शतक समाप्तम्

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर १९

श्री भगवती सूत्राकि समाप्ती।

संमत समय प्रायः पैतालीस आगम माना जाते है जिस्मे पञ्चमाङ्ग भगवति सूत्र बडा ही महात्ववाला है। इस भगवती सूत्रमें

(१) मुनीन्द्र-इंद्रभूति अग्निभूति नग्रन्थपुत्र नारदपुत्र कालसवेसी गंगयाजी आदि मुनियोंके प्रश्नके उत्तर

(१) देवीन्द्र–शकेन्द्र ईशानेन्द्र चमरेन्द्र और ४ सूरियाभ आदि देवोंके पुच्छे हुवे प्रश्नोंके उत्तर

(३) नरेन्द्र–उदाइ राजा, श्रेणक राजा, कोणक राजा, आदि राजावां के पुच्छे हुवे प्रश्नोंके उत्तर

(४) श्रावकों–आनन्द, कामदेव, संख, पोखली, मंडुक, सुर्दशन और भी आलंभीया ना गरीके, तुंगीया नगरीके श्रावकोंके पुच्छे हुवे प्रश्नोका उत्तर।

(५) श्राविकावों–मृगावती जेयवन्ती सुलसा चेलना सेवानन्दा आदि श्राविकावोंके पृच्छा हुवा प्रश्नोंके उत्तर।

(६) अन्य तीर्थीयों–कालोदाइ सेलोदाइ संखोदाई शिवराज ऋषि पोगल नामका सैन्यासी तथा सौमल ब्रह्मण आदि अन्य तीर्थीयोंके पुच्छे हुवे प्रश्नोंका उत्तर।

इसके सिवाय इस आगमार्णवमें केवल गौतमस्वामिके पुच्छे हुवे ३६००० प्रश्नोका उत्तर भगवान वीर प्रभु दीया है।

इस सुत्र समुद्रसे अमूल्य रत्न ग्रहन करनेकि अभिलाषावाले भव्य आत्मावोंके लिये शास्त्रकारोंने च्यार अनुयोगरूपी च्यार नौकावों बतलाये है जेसे कि–

(१) द्रव्यानुयोग–जिस्मे जीव और कर्मोका निर्णार्थे षट्द्रव्य सात नय च्यार निक्षेपा सप्तभंगी अष्टपक्ष उत्सर्गोपवाद सामान्य विशेष अवीर भाव त्रोंभाव कारण कार्य द्रव्यगुणपर्याय द्रव्यक्षेत्र कालभाव इत्यादि स्याद्वाद शैलीसे वस्तुतत्त्वका ज्ञान होना उसे द्रव्यानुयोग्य कहते है।

(२) गणतानुयोग–जिस्में क्षेत्रका लम्बा पना चोड पना उर्ध्व अधो नदि द्रह पर्वत क्षेत्रका मान देवलोकके वैमान नारकोंके नरका वास तथा ज्योतीषी देवोंका वैमान ज्योतीषीयोंकि चाल ग्रह नक्षत्रका उदय अस्त समवक्र होना तथा वर्ग मूल घन आदि फला-वट इसकों गणतानुयोग कहते है।

(३) चरण करणानुयोग–जिस्में मुनिके पांच महाव्रत पांच समिति तीन गुप्ती दश प्रकार यति धर्म, सत्तरा प्रकारका संयम बारहा प्रकारका तप पचवीस प्रकारकि प्रतिलेखन गौचरीके ४७ दोषन इत्यादि तथा श्रावकोंके बारहव्रत एकसो चौवीस अतिचार इग्यारा प्रतिमा पूजा प्रभावना सामि वत्सल सामायिक पौषद आदि क्रियावों है उसे चरण करणानुयेण कहते है।

(४) धर्मकथानुयोग–जिस्में भूतकालमें होगये जैन धर्मके प्रभावीक पुरुष चक्रवर्त बलदेव वासुदेव मंडलीक राजा सामान्य राजा सेठ सेनापति आदिका जो जीवन चारित्र तथा न्याय नीति हेतु युक्ति अलंकार आदिका व्याख्यान हो उसे धर्म कथानुयोग कहते है।

इस च्यार अनुयोगमें द्रव्यानुयोग कार्य रूप है शेष तीना-नुयोग इसके कारण रूप है इस प्रभावशाली पञ्चमाङ्ग भगवती सूत्रमें च्यारों अनुयोग द्वारोंका समावेस है तद्यपि विशेष भाग द्रव्यानुयोग व्याप्त है इसी लिये पूर्व महाऋषियोंने द्रव्यानुयोगका महानिधिकी औपमा भगवती सूत्रको दी है।

(१) भगवती सूत्रके मूल श्रुतस्कन्ध एक है

(२) भगवती सूत्रके मूल शतक ४१ है

(३) भगवती सूत्रके अन्तर शतक १३८ है
(४) भगवती सूत्रके वर्ग १९ है
(५) भगवती सूत्रके उदेशा १९२४ है
(६) भगवती सूत्रके हालमें श्लोक १५७७२ है
(७) भगवती सूत्रकि हालमें टीका करवन् १८००० है
(८) भगवती सूत्रकि वाचना ६७ दिने दी जाती है। *
(९) भगवतीसूत्र कि निर्युक्ति भद्रबाहु स्वामि रचीथी
(१०) भगवती सूत्रकि चुरणी पूर्वधरोंने रचीथी

---

*१६ पहलेसे आठवे शतक प्रत्यक शतक दो दो दिनोंसे वचाया जाय जिस्के दिन शोला होते है।

३३ नौवां शतकसे पन्दरवा (गोशाला) शतकको छोड वीसवा शतक एवं शतककि वाचना उत्कृष्ट प्रत्यक शतक तीन तीन दिनसे वाचना दे जिस्का तेतीस दिन होते है।

२ पन्दरवा (गोशाला) शतक एक दिनमें वचावे अगर रह जावे तो आम्बिलकर दुसरे दिन भी वचावे।

३ एकवीसवा बावीसवां तेवीसवा शतककि वाचना प्रत्यक दिन एकेक शतककि वाचना देवे।

४ चौवीसवां पचवीसवा शतककि वाचना दो दो दिनकि

१ छावीसवासे तेतीसवा शतक एक दिनमें वाचना देवे।

८ चौतीसवासें इगतालीसवां शतक आठ शतक, प्रत्यक दिन प्रत्यक शतक बचावे इसी माफीक भगवती सुत्रकी वाचना अपने शिष्यकों ६७ दिनमें देव वाचना लेनेवाले मुनियोंको आम्बिलादि तपश्चर्य करना चाहिये।

(११) भगवती सूत्र हालकि टीक अभयदेव सुरि रचीत है।
इस भगवती सूत्रका पांच नाम है ।

(१) श्री भगवती सूत्र लोक प्रसिद्ध नाम

(२) पांचम अंग द्वादशाङ्गीके अन्दरका नाम

(३) विवहा पण्णन्ति मूल प्राकृत भाषोका नाम

(४) शिव शान्ति पूर्व महा ऋषियोंका दीया हुवा

(५) नवरंगी नये नये प्रश्नोत्तर होनासे

इस महान् प्रभावशाली पञ्चमाङ्ग भगवती सूत्रकि सेव भक्ति उपासना पठन पाठन मनन करनेसे जीवोंको ज्ञान दर्शन चारित्रका लाभ होते है। भगवती सूत्र अनादि कालसे तीर्थंकर भगवान फरमाते आये है इसकि आराधन करनेसे भूतकालमें अनन्ते जीव मोक्षमें गये है। वर्तमानकाले (विदहक्षेत्र) मोक्ष जाते है भविष्य-कालमें अनन्ते जीव मोक्ष जावेगा इति शम्

भगवती सूत्र शतक उदेशा तथा प्रश्नोत्तरके अन्तमें भगवान गौतम स्वामि " सेवं भंते सेवं भंते " एसा शब्द कहा है। यह अपन विनय भक्ति और भगवान वीर प्रभु प्रते पूज्य भाव दर्शा रहे है। हे भगवान आपके वचन सत्य है श्रेयस्कार है भव्यात्मा-वोंके कल्याण कर्ता है इत्यादि वास्ते यहां भी प्रत्यक थोकडाके अन्तमें यह शब्द रखा गया है। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला-पुष्प नम्बर ६९.

अथश्री

शीघ्रबोध भाग २५वां.

थोकडा नं० १

सूत्र श्री भगवतीजी शतक १ उद्देशो १ लो

श्री भगवती सूत्रकि आदिमें गणधर भगवान पञ्च परमेष्टीकों नमस्कार करके श्री श्रुत ज्ञानको नमस्कार किया है।

राजगृहनगर गुणशलोद्यान श्रेणकराजा चेलणाराणी अभयकुमार मंत्री भगवान वीरप्रभुका आगम इन्द्रभूति (गौतम) गणधर इन्हसबका वर्णन करते हुवे विशेष उत्पातिक सूत्रकी भोलामण दि है।

भगवान वीरप्रभु एक समय राजगृह उद्यानमें पधारेथे. राजा श्रेणक आदि नगर निवासी भव्य भगवानकों वन्द करनेको आये। भगवानकि अमृतमय देशना पान कर स्वस्थानपर गमन किया।

गौतमस्वामिने वन्दन नमस्कार कर भगवानसे अर्ज करी कि हे करूणा सिन्धु

(१) चलना प्रारंभ किया उसे चलीया ही केहना।

(२) उदीरणा प्रारंभ किया उसे उदीरीया ही केहना।

(३) वेदना प्रारंभ किया उसे वेदीया ही केहना।

(४) प्रक्षिण करना प्रारंभ किया उसे प्रक्षिण कियाही कहना।

(५) छेदना प्रारंभ किया उसे छेदाहुवा ही केहना।

(६) भेदना प्रारंभ किया उसे भेदाहुवा ही केहना।

(७) दहान करना प्रारंभ किया उसे दाहान किया ही केहना।

(८) मरना प्रारंभ किया उसे मृत्यु हुवा ही केहना।

(९) निज्जैरा करना प्रारंभ किया उसे निर्जरीया ही कहना।

इस नौ पदोंके उत्तरमें भगवान फरमाते है कि हां गौतम चलना प्रारंभ किया उसे चालीया यावत् निर्ज्जरना प्रारंभ किया उसे निर्ज्जरिया ही केहना चाहिये।

भावार्थ—यह प्रश्न कर्मों कि अपेक्षा है। आत्माके प्रदेशोंके साथ समय समयमें कर्मबन्ध होते है व कर्म स्थिति परिपक्क होनेसे समय समय उदय होते है। आत्मप्रदेशोंसे कर्मोका चलनकाल वह उदयावलिका है इन्ही दोनोंका काल असंख्यात समयका अन्तर मुहूर्त परिमाण है परन्तु चलन प्रारंभ समयकों चलीया कहना यह व्यवहार नयका मत है अगर चलन समयकों चलीया न माना जावे तों द्वितीयादि समय भी चलीया नहीं माना जावेगा, कारण प्रथम समय दुसरा समयमें कोई भी विशेषता नहीं है और प्रथम समयको न माना जाय तो प्रथम समयकि क्रिया निष्फल होगा जेसे कोइ पुरुष एक पटकों उत्पन्न करना चाहे तों प्रथम तन्तु प्रारंभकों बट मानणा ही पडेगा। अगर प्रथम तन्तुकों पट न माना जाय तों दुसरे तन्तुमें भी पटोत्पती नहीं है वास्ते वह सब क्रिया निष्फल होगा और पटोत्पतीकि भी नास्ति होगा। इसी माफीक आत्म प्रदेशोंसे कर्म दलक चलना प्रारंभ हुवा उसकों चलीया ही मानना। शास्त्रकारोंका अभिष्ट है इस मन्यतासे जमालीके मत्तका निराकार किया है।

(१) चलन प्रारंभ समयकों चलीया केहना स्थिति क्षयापेक्षा है।

(२) उदीरणा प्रारंभ समयकों उदीरिया कहना=जो कर्म सतामें पडा हुवा है परन्तु उदयावलिकामें आनेयोग्य है उस कर्मोंकि अध्यवसायके निमित्तसे उदीरणा करते है। उदीरणा करतेंकों असंख्यात समय लगते है परन्तु यहां प्रारंभ समयको पूर्वके दृष्टांत माफीक समझना चाहिये।

(३) वेदते हुवेके प्रारंभ समयकों वेद्या कहना। जो कर्म उदय आये हो तथा उदीरणा कर उदय आविलकामें लाके प्रथम समय वेदणा प्रारंभ कीया हैं उसकों पूर्व दृष्टांत माफीक वेद्या ही कहेना।

(४) प्रक्षिण अर्थात् आत्मप्रदेशोंके साथ रहे हुवे कर्म दलक आत्मप्रदेशोंसे प्रक्षिण होनेके प्रारंभ समयको प्रक्षिण हुवा पूर्व द्रष्टांत माफीक कहना।

(५) छेदते हुवेकों छेदाया—कर्मोंकि दीर्घकालकि स्थितिकों अपवर्तन करणसे छेदके लघू करना वह अपवर्तन करण असंख्याते समयका है परन्तु पूर्व द्रष्टांत माफीक प्रारंभ समयकों छेद्या कहना।

(६) भेदते हुवेकों भेद्या कहना—कर्मोंके तीव्र तथा मंद रसकों अपवर्तन तथा उघवर्तनकरण करके मंदका तीव्र और तीव्रका मंद करना वह करण असंख्याते समयका है परन्तु पूर्व द्रष्टांत माफक प्रारंभ समय भेदते हुवेको भेद्या कहना।

(७) दहते हुवेको दहन कहेना। यहां कर्मरूपी काष्टकों शुक्ल ध्यानरूपी अग्निके अन्दर दहन करते हुवेकों पूर्व द्रष्टांतकी माफीक दहन किया ही कहना।

(८) मृत्यु प्रारंभको मरिया कहना—यहां आयुष्य कर्मका प्रति समय क्षिण होते हुवेको पूर्वके द्रष्टान्तकि माफीक मृर्या ही कहेना ।

(९) निर्ज्जराके प्रारंभ समयको निर्ज्जर्यो कहना=जो कर्म उदयसे तथा उदीरणासे वेदके आत्म प्रदेशोंसे प्रति समय निर्ज्जरा करी जाती है उस निर्ज्जराका काल असंख्याते समयका है परन्तु यह पूर्व द्रष्टान्तसे प्रारंभ समयको निर्ज्जर्या कहना ; इति नौ प्रश्नोंका उत्तर दीया ।

(प्र०) हे भगवान् ! चलतेको चलीया यावत निर्ज्जरतेके निर्ज्जर्यो यह नौ पदोंका क्या एक अर्थ भिन्न भिन्न उच्चारण भिन्न भिन्न वर्ण (अक्षरों) अथवा भिन्न भिन्न अर्थ भिन्न भिन्न उच्चारण, भिन्न भिन्न वर्णवाला है ।

(उ०) हे गौतम ! चलते हुवेकों चलीया, उदीरते हुवेकों उदीरीया, वेदते हुवेकों वेदीया और प्रक्षिण करते हुवेको प्रक्षिण किया यह च्यार पदों एकार्थी है और उच्चारण तथा वर्ण भिन्न भिन्न है यहा पर केवलज्ञान उत्पादापेक्षा है कारण कर्मोका चलना उदीरण तथा उदय हुवेकों वेदना और आत्मप्रदेशोंसे प्रक्षिण करना यह सब पुरुषार्थ पहले नही उत्पन्न हुवे एसे केवलज्ञान धर्मको उत्पन्न करनेका ही है वास्ते उत्पन्नपक्षापेक्षा इस च्यारों पदोंका अर्थ एक ही है ।

शेष रहे पांच पद (छेदाते हुवेको छेद्या यावत् निर्ज्जरते हुवेकों निर्ज्जर्या) वह एक दुसरेसे भिन्न अर्थवाले है यह पर विगतपक्षकि अपेक्षा अर्थात् कर्मोंका सर्वता नाश करना जेसे—

(५) छेदाते हुवेकों छेद्या, तेरवे गुणस्थान रहे हुवे कर्मोकि स्थितिकी घात करते हुवे योग निरूद्ध करते है ।

(६) भेदते हुवेको भेद्या=यह रसघातकि अपेक्षा है परन्तु स्थिति घात करतों रसघात अनन्तगुणी है वास्ते भिन्नार्थी है ।

(७) दहन करते हुवेकों दहन किया=यह प्रदेश बन्धापेक्षा है। पांच ह्रस्व अक्षर कालमे शुक्लध्यान चतुर्थ पाये कर्म प्रदेशका दहानापेक्षा होनेसे यह पद पूर्वसे भिन्नार्थी है ।

(८) मृत्यु होतेकों मृर्या कहना. यह पद आयुष्य कर्मापेक्षा है। आयुष्य कर्मके दलकक्षय जो पुनर्जन्म न हो एसे चरम आयुष्य क्षय अपेक्षा होनेसे यह पद पूर्वसे भिन्नार्थी है ।

(९) निर्ज्जरते हुवेकों निर्ज्जर्या कहेना=सकल कर्मोका क्षयरूप निर्ज्जर पूर्वे कबी न करी हुई चौदवे गुणस्थानके चरम समय २ सकल कर्मक्षयरूप होनेसे यह पद पूर्वके पदोंसे भिन्नार्थी है ।

इस वास्ते पेहलेके च्यार पद एकार्थी और शेष पांच पद भिन्नार्थी है ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नम्बर २.

सूत्र श्री भगवतीजी शतक १ उद्देशा १

(४५ द्वार)

इस थोकडेके ४५ द्वार चौवीस दंडक पर उतारा जावेगे, चौवीस दंडकमें प्रथम नारकिके दंडकपर ४५ द्वार उतारे जाते है।

(१) स्थितिद्वार नारकिके नैरियोंकि स्थिति जघन्य दश-हजारवर्ष उत्कृष्ट तेतीस सागरोपमकि है।

(२) साश्वोसाश्वद्वार=नारकिके नैरिया निरान्तर साश्वोसाश्व लेते सो भी लोहारकि घामणकि माफीक शीघ्रतासे।

(३) आहार=नारकिके नैरिये आहारके अर्थी है? हां आहारके अर्थी है।

(४) नारकिके नैरिये आहार कितने कालसे लेते है? नारकिके आहार दोय प्रकारका है (१) अनजानते हुवे (२) जानते हुवे जिस्मे जो अनजानते हुवे आहार लेते है वह प्रतिसमय आहारके पुद्गलोंको ग्रहन करते है और जो जानके आहार लेते है वह असंख्यात समय अन्तर महुर्तसे नारकिको आहारकि इच्छा होती है।

(५) नारकि आहार लेते है सो कोणसे पुद्गलोंका लेते है? द्रव्यापेक्षा अनन्ते अनन्त प्रदेशी स्कन्ध, क्षेत्रापेक्षा असंख्याते आकाश प्रदेश अवगाह्या, कालापेक्षा एक समयकि स्थिति यावत् असंख्याता समयकि स्थितिके पुद्गल, भावापेक्षा वर्ण गंध रस स्पर्श यावत् २८८ बोल देखो शीघ्रबोध भाग तीजा आहारपद।

(६) नारकि आहारपणे पुद्गल लेते है वह क्या सर्व आहार करे, सर्व परिणमे, सर्व उश्वासपणे परिणमावे, सर्व निश्वासपणे एवं वारवारके ४ एवं कदाचीत्के ४ सर्व १२ बोलपणे परिणमे।

(७) नारकि अपने आहारपणे लेने योग्य पुद्गल है जीस्के असंख्यात भागके पुद्गलोंको ग्रहन करते है और ग्रहन किये हुवे पुद्गलोंमें अनन्तमे भागके पुद्गलोंको अस्वादन करते है।

(८) नारकि जो पुद्गल आहारपणे ग्रहन किया है वह सर्व पुद्गलोंका ही आहार करते है न कि देशपुद्गलोंका।

(९) नारकि जो आहार करते है वह पुद्गल उसके श्रोतेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रियपणे अनिष्ट अक्रन्त अमय अमनोज्ञा यावत् दुःखपणे परिणमते है।

नोट—आहारपदका थोकडा सविस्तार शीघ्रबोध भाग तीजामें ११ द्वारसे लिखा गया है यहांपर सप्रयोजन शास्त्रकारोंने सात द्वारोंको ही ग्रहन किया है वास्ते विस्तार देखनेवालोंको तीजा भागसे देखना चाहिये।

(१०) नारकिके आहार विषय प्रश्न।

(१) आहार किये हुवे पुद्गल प्रणम्या या प्रणमेगा।

(२) आहार किया और करते हुवे पु० प्रणम्या या प्रणमेगा।

(३) आहार न किया और करते हुवे पु० प्रणम्या या प्रणमेगा।

(४) आहार न किया और न करे पु० प्रणम्या या प्रणमेगा।

इस च्यारों प्रश्नोंकि उत्तर

(१) आहार किये हुवे पु० प्रणम्या न प्रणमेगा।

(२) आहार किया और करते हुवे पु० प्रणम्या प्रणमेगा।

(३) आहार न किया और करते हुवे पु० न प्रणम्या प्रणमेगा।

(४) आहार न किया न करे वह न प्रणम्या न प्रणमेगा।

इसपर टीकाकारोंने छ पद किया है (१) आहार किया (२) करे (३) करेगें (४) न किया (५) न करे (६) न करेगें। इस छे पदोंकि ६३ विकल्प होते है यथा—

असंयोगी विकल्प ६.

सं.	विकल्प	सं०	विकल्प
१	भूतकालमे आहारीह्या	२	वर्तमानमे आहार करे
३	भविष्यमे आहार करेंगे	४	भूत० नही आहारीह्या
५	वर्त० नही आहारे	६	भवि० नही आहारेंगा

दो संयोगि विकल्प १५.

१	आहारक नों करे	२	आहारक नों करेंगा
३	,, ,, नही कर्यो	४	,, ,, नही करे
५	,, ,, नही करेंगा	६	आहार करे और करेंगा
७	,, ,, नही कर्यो	८	,, ,, नही करे
९	,, ,, नही करेगा	१०	आहार करेंगा—नही कर्यो
११	,, ,, नही करें	१२	,, ,, नही करेंगा
१३	आहार नही कर्यो नही करे	१४	आहार नही कर्यो नही करेंगा
१५	आहार नहीं करें नहीं करेंगा		

तीन संयोगि विकल्प २०

१	आहार कर्यो करे करेंगा	२	आहार कर्यो करे न कर्यो
३	,, ,, ,, नकरे	४	,, ,, करे न करेंगा
५	,, ,, करेंगा न कर्यो	६	,, ,, करेंगा न करे
७	,, ,, करेंगा न करेंगा	८	,, ,, न कर्यो न करेंगा
९	,, ,, न कर्यो न करेंगा	१०	,, ,, न करें न करेंगा
११	आहार करे करेंगा न कर्यो	१२	आहार करे करेंगा न करें
१३	,, करेंगा न करेंगा	१४	,, न कर्यो न करे
१५	,, न कर्यो न करेंगा	१६	,, न करें न करेंगा
१७	आहार करेंगा न कर्यो न करे	१८	आहार करेंगा न कर्यो न करेंगा
१९	,, ,, न करें न करेंगा	२०	न कर्यो न करे न करेंगा

च्यार संयोगि विकल्प १५

१ कर्यो करे करेंगा न कर्यो २ कर्यो करे करेंगा न करे
३ ,, ,, ,, न करेंगा ४ ,, ,, न कर्यो न करें
५ ,, ,, न कर्यो न करेंगा ६ ,, ,, न करे न करेंगा
७ ,, करेंगा न कर्यो न करे ८ ,, करेंगा न कर्यो न करेंगा
९ ,, ,, न करे न करेंगा १० ,, न कर्यो न करे न करेंगा
११ करें करेंगा न कर्यो न करे १२ करें करेंगा न कर्यो न करेंगा
१३ ,, ,, न करे न करेंगा १४ ,, न कर्यो न करे न करेंगा
१५ करेंगा न कर्यो न करे न करेंगा

पञ्चसंयोगि विकल्प ६

१	कर्यो	करे	करेगा	न कर्यो	न करे
२	,,	,,	,,	,,	न करेंगा
३	,,	,,	,,	न करें	,,
४	,,	,,	न कर्यो	,,	,,
५	,,	करेंगा	,,	,,	,,
६	करे	,,	,,	,,	,,

छे संयोगि विकल्प १

१ कर्यो, करे करेगा नकर्यो न करे न करेंगा।

इस ६३ विकल्पके स्वामिके अन्दर नरक तथा अभव्य जीव भूतकालमें पुद्गल आहारपणे नहीं ग्रहन किये एसे तीर्थंकरोंके शरीरादिके काममें आये हुवे पुद्गल नरक तथा अभव्यके आहार पण काममें नहीं आसक्के है इस्में एकमत्त एसा है कि वह पुद्गल उसी रूपमें नरकादिके काम नहीं आसके। दुसरा मत है कि रूपान्तरमें भी काममें नहीं आसके। 'तत्व केवली गम्यं'।

(११) नारकिके नेरिये आहारकी माफीक पुद्गल एकत्र करते है वह भी आहारकि माफीक चौभांगी प्रणम्य प्रणमे प्रणमेगा पूर्ववत् ६३ विकल्प "चय"।

(१२) एवं उपचयकि भी चौभागी और पूर्ववत् ६३ विकल्प।

(१३) एव उदीरणा (१४) एवं वेदना (१५) निर्ज्जरा यह तीन द्वार कर्मोकि अपेक्षा है। अनुदय कर्मोके उदीरणा, उदय तथा उदीरणाकर विपाक आये कर्मोको वेदना. वेदीये हुवे कर्मोकि निर्ज्जरा करना इस्का भी पूर्ववत् च्यार च्यार भांग समझना।

(१६) नारकिके नैरिया कितने प्रकारके पुद्गलोंके भेदाते है?

कर्मद्रव्योंकि अपेक्षा दोय प्रकारके पुद्गल भेदाते है (१) बादर (२) सूक्ष्म भावार्थ अपवर्तन कारण (अध्यवसायके निमत्त) से कर्मोके तीव्र रसको मंद करना तथा उद्धवर्तन करणसे कर्मोके मंद रसको तीव्र करना अर्थात् न्यूनाधिक करना। यहांपर सामान्य सुत्र होनेसे पुद्गल भेदाना कहा है। कम पुद्गल यद्यपि बादर ही है परन्तु यहां बादर और बादरकि अपेक्षा सूक्ष्म कहा है परन्तु यहां जो सूक्ष्म है वह भी अनन्ते अनन्त प्रदेशी स्कन्धका ही भेद होते है। एवं (१७) पुद्गलोंका चय (एकत्र करना) एवं (१८) उपचय (विशेष धन करना) यह दोय पद आहार द्रव्य अपेक्षा कहेना। एवं (१९) उदीरणा (२०) वेदना (२१) निर्ज्जरा यह तीन पद कर्म द्रव्यापेक्षा पूर्व भेदाते कि माफीक समझना। आत्माध्यवसायके निमत्तसे अपवर्तन उद्धवर्तन करते हुवे जीव स्थितिघात तथा रसघात करे इसी माफीक स्थिति वृद्धि तथा रसवृद्धि करते है।

(१२) उवट्टीता=अपवर्तनद्वारा कर्मो कि स्थितिको न्यून करना उपलक्षणसे उद्ववर्तन द्वारा कर्मो कि स्थितिकी वृद्धि करना यह सुत्र तीन कालापेक्षा है (२२) मूतकालमे करी (२३) वर्तमानकालमें करे (२४) भविष्यकालमे करेगा ।

(२५) संक्रमण=मूल कर्म प्रकृतिसे भिन्न जो उत्तरकर्म प्रकृति एक दुसरी प्रकृतिके अन्दर-संक्रमण करना इस्मे भी अध्यवसायोंका निमत्त कारण है जेसे कोइ जीव साता वेदनिय कर्मकों वेद रहा है असुभ अध्यवसायोंके निमत्त कारणसे वह साता वेदनियका संक्रमण असातावेदनियमे होता है अर्थात् वह सातावेदनिय भी असातामें संक्रमण हो असाता विपाककों वेदता है । इस्कों भी तीन काल (२५) मूतकालमें संक्रमण किया (२६) वर्तमानमें संक्रमण करे (२७) भविष्यमे संक्रमण करेगा ।

(२८) निधसद्वार अध्यवसायके निमत्त कारणसे कर्म पुद्गलोंकों एकत्र करना उसमें अपवर्तन उद्ववर्तनसे न्यूनाधिक करना उसे निधस केहते है जैसे सुइयोंके भाराकों अग्निमें तपाके उपर चोट न पडे वहांतक निधस अर्थात् न्यूनाधिक हो सके है एसा निधस भी जीव तीनों कालमे करे कर्यो करेगा ।३०।

(३१) निकाचित्--पूर्वोक्त कर्म दलक एकत्र कर धन बंधन जेसे तपाइ हुइ सुइयोंपर चोट देनेसे एक रूप हो जाती है उस्मे सामान्य करण नही लग सक्के है वह भी तीन कालापेक्षा निकाचीत् कर्मा करे करेगा ॥ ३३ ।

(३४) नारकिके नैरिये तेजस कारमाण शरीरपणे पुद्गल ग्रहन करते हैं वह क्या मूतकालके समयमें वर्तमान कालके समयमे

भविष्य कालके समयमें ग्रहन करते है ? भूत कालका समय नष्ट हो गया। भविष्य कालका समय अब आवेगा वास्ते भूत भविष्य निरर्थ होनेसे वर्तमान समयमें ग्रहन करते है।

(३५) नारकिके नैरिये तेजस कारमाण पणे जो पुद्गलोंकि उदीरणा करते हैं वह भूतकालके समयमें ग्रहन किये पुद्गलोंकि उदीरणा करते है परन्तु वर्तमान तथा भविष्य समयकि उदीरणा नही करते है कारण वर्तमानमे तों ग्रहन किया है उसकि उदीरणा नही होती है। भविष्यका समय अबी तक आया भी नही है वास्ते उदीरणा भूतकालकि होती है (३६) एवं वेदना (३७) एवं निर्ज्जरा यह तीनों भूतकाल समय अपेक्षा है।

(३८) नारकिके नैरिये कर्मबन्धते है वह क्या चलीत कर्मोको बन्धते हैं या अचलीत कर्मोको बन्धते हैं ? चलीत कर्मोकों नहीं बंधते है कारण आत्मप्रदेशोंसे चलीत हुवे है वह कर्म वेदके निर्ज्जरा करणे योग्य है इसी वास्ते चलीत कर्म नहीं बांधे किंतु अचलीत कर्मोकों बन्धते है एवं (३९) उदीरणा (४०) वेदना (४१) अपवर्तन (४२) संक्रमण (४३) निघस (४४) निकाचीत यह सब अचलीत कर्मोके होते है।

(४५) हे भगवान्। नारकि कर्मोकि निर्ज्जरा करते है वह क्या चलीत कर्मोकि करते है या अचलीत कर्मोकि करते है।

(उ) हे गौतम नारकि जों कर्मोकि निर्ज्जरा करते है वह चलीत कर्मोकि करते है किंतु अचलीत कर्मोकि निर्ज्जरा नही होती है। भावार्थ आत्मप्रदेशोंमें स्थित रहे हुवे कर्मोकि निर्ज्जरा नहीं हुवे परन्तु आत्म पदेशोंसे कर्म प्रदेश स्थिति पूर्णकर चलीत

होके उदयमें आवेगा वह प्रदेशों यथा विपाकों कर्म वेदा आवेगा तब वेदीया हुवे कर्मोंकि निज्जरा होगा वास्ते चलीत कर्मोंकि ही निज्जरा होती है इति एक नारक दंडकपर ४५ द्वार हुवे वह अब २४ दंडक पर उतारा जाता है।

स्थिति चौवीस दंडकोंकि देखों प्रज्ञापन्ना सुत्र पद चोथा, शीघ्रबोध भाग १२ वां में।

साश्वोसाश्व देखो प्रज्ञापन्ना सुत्र पद ७ वा शीघ्रबोध भाग ३ में। आहारके सात द्वार देखों प्रज्ञापन्ना सूत्र पद २८वां शीघ्र-बोध भाग तीजामें।

शेष १६ द्वार जेसे उपर नारकीके द्वार लिख आये है इसी माफीक चौवीस दंडकमें निर्विशेष समझना इति चौवीस दंडकपर ४५ द्वार। इस थोकडेकों सुख दीर्घ द्रष्टीसे विचारों।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर ३।

श्री भगवतीजी सूत्र शतक १ उद्देशा १

(प्र) हे भगवान्! ज्ञान हे सो इस भवमें होते है? पर-भमें होते है उभय भवमें भी होते है।

(उ) हे गौतम! ज्ञान इस भवमें भी होते है परभवमें भी होते है। भावार्थ—ज्ञान है सो क्षोप-सम भावमें है जहांपर ज्ञानावर्णीय कर्मका क्षोपशम होता है वहां पर ही ज्ञान होता है। इस भव (मनुष्य)में जो पठन पाठन कर ज्ञान किया है वह देवगतिमें जाते समय साथमें भी चल सक्के है तथा वहां जानेके बाद भी नया ज्ञान होसके है। अर्थात्

देवतावोंमें भी ज्ञान विषय तत्व विषय चर्चा वार्तावों होती रहती हैं। वास्ते तीनों स्थानपर ज्ञान होते है।

(प्र) हे भगवान् ! दर्शन (सम्यक्त्व) हे सो इसी भवमें है ? पर भवमें है ? तथा उभय भवमें है ?

(उ) हे गौतम ! दर्शन इस भवमें भी होते है। परभवमें भी होते है। उभय भवमें भी होते है। भावार्थ—इस भवमें मुनियोंकि देशना श्रावणकर तत्व पदार्थकों जाननेसे दर्शनकि प्राप्तो होती है पर भवमें भी बहुतसे मिथ्यात्वी देवता चर्चा वार्ता करते हुवे दर्शन प्राप्ती कर सक्के है तथा इस भवमें दर्शन उपार्जन कीया हुवा पर भवमें साथ भी ले जासक्के है।

(प्र) हे भगवान्। चारित्र (निवृतिरूप) इस भवमें है ? पर भवमें है ? उभय भवमें हैं ?

(उ) हे गौतम चारित्र हे सो इस भवमें है परन्तु परभवमें नहीं है और यहांसे परभव साथमें भी नहीं चल सक्का है अर्थात मनुष्यके सिवाय देवादि गतिमें चारित्र नहीं होते है।

(प्र) हे भगवान्। तप हे सो इस भवमें होते है ? परभवमें हैं। उभय भवमें है।

(उ) तप है सो इस भवमें होते है परन्तु परभवमें तथा उभय भवमें नहीं होते है पूर्ववत् नमुकारसी आदि तपश्चर्या मनुष्यके भवमें ही हो सक्की है।

(प्र) हे भगवान्। संयम (पृथ्व्यादिका संरक्षणरूप १७ प्रकार) इस भवमें है यावत् उभय भवमें है ?

(उ) संयम इस भवमें है शेष पूर्ववत् । संयमका अधिकारी केवल मनुष्य ही है ।

(प्र) हे भगवान् । असंवृत आत्माके धारक मुनि मोक्ष जातेहै?

(उ) हे गौतम ! असंवृत अनगार मोक्षमें नहीं जाते है ।

(प्र) कीस कारणसे ?

(उ) असंवृत अनगार जो आयुष्यकर्म छोडके शेष सातकर्म शीतल बन्धे हुवेको घन बन्धन करे । स्वल्प कालकि स्थितिवाले कर्मोंको दीर्घ कालकि स्थितिवाला करे । मंदरसवाले कर्मोको तीव्र रसवाले करे । और स्वल्प प्रदेशवाले कर्मोको प्रचुर॰ प्रदेशवाला करे । आयुष्य कर्म स्यात् वान्धे स्यात न भी बन्धे (पूर्वं बन्धा हुवा हो) असाता वेदनिय कर्म वार वार बन्धे और जिस संसारकि आदि नहीं और अन्त भी नहीं एसा संसारके अन्दर परिभ्रमन करे इस वास्ते असंवृत्त मुनि मोक्ष नहीं जासक्के है ।

(प्र) हे भगवान् । संवृत आत्मा धारक मुनि मोक्षमें जासक्के है ?

(उ) हां गौतम । संवृत आत्मा धारक मुनि मोक्षमें जासक्के है।

(प्र) क्या कारण है ?

(उ) संवृत आत्मा धारक मुनि आयुष्य कर्म वर्जके सात कर्म घन बन्धा हुवा होते उसकों शीतल करे । दीर्घ कालकि स्थितिको स्वल्प काल करे। तीव्र रसकों मंद रस करे । प्रचुर प्रदेशोंकों स्वल्प प्रदेश करे असाता वेदनी नहीं बान्धे । आदि अन्त रहीत जो ' दीर्घ रस्तेवाला संसार समुद्र शीघ्रता पूर्वक तीरके

---

१ पांच इंद्रियों और मनद्वारा आता हुआ आश्रवद्वारोंका निरुद्ध नहीं कीया है ।

पारगत अर्थात् शरीरी मानसी सर्व दुःखोंका अन्तकर मोक्षमें जावे।

श्री भगवती सूत्र शतक २ उद्देशा १

(प्र) हे भगवान्। स्वयं कृत दुःखकों भगवते है।

(उ०) हे गौतम। कोइ जीव भोगवे कोइ जीव नही भी भोगवे। हे प्रभो इसका क्या कारण है! हे गौतम जीस जीवोंके उदयमें आया है वह जीव कृत कर्म भोगवते है और जीस जीवोंके जो कृतकर्म सत्तामें पडा हुवा है अबाधा काल पूर्ण परिपक्व नही हुवा है अर्थात् उदयमें नही आया है वह जीव कृतकर्म नही भी भगवते है इस अपेक्षासे कहा जाते है कि कोइ जीव भोगवे कोइ जीव नही भी भोगवे। इसी माफीक नरकादि २४ दंडक भी समझना। जैसे यह एक बचन अपेक्षा समुच्चय जीव और चौवीस दंडक एवं २५ सूत्र कहा है इसी माफीक २५ सूत्र बहु वचन अपेक्षा भी समझना। एवं ५० सूत्र।

(प्र०) हे भगवान्। जीव अपने बन्धाहुवा आयुष्य कर्मको भोगवते है।

(उ०) हां गौतम। जीव स्वयं बान्धा हुवा आयुष्य कर्मको स्यात् भोगवे स्यात् नही भी भोगवे। हे प्रभो इसका क्या कारण है? हे गौतम जीस जीवोंके आयुष्य उदयमें आया है वह भोगवते है और जिस जीवोंके उदयमें नही आया है वह नही भोगवते है एवं नरकादि २४ दंडक भी समझना। इसी माफीक बहुवचनके भी २५ सूत्र समझना इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकड़ा नम्बर ४.

सूत्र श्री भगवतीजी शतक १ उद्देशा १

(आस्तित्व)

(प्र) हे भगवान् ! आस्ति पदार्थ आस्तित्व पणे परिणमें और नास्तिपदार्थ नास्तित्व पणे परिणमे ।

(उ) हां गौतम आस्ति पदार्थ आस्तित्व पणे परिणमें और नास्ति पदार्थ नास्तित्व पणे परिणमें ।

भावार्थ—जैनसिद्धान्त अनेकान्तवाद स्याद्वाद संयुक्त है वास्ते यहांपर सापेक्षा वचन है । जैसे अगुली अंगुली पणेके भावमे आस्तित्व है और अंगुली अंगुष्टादिके भावमें नास्तित्व है वास्ते अंगुली अंगुलीके भावमें आस्तित्व परिणमते है इसी माफीक जीव जीवके ज्ञानादि गुण पणे आस्तित्व भाव परिणमते है इसी माफीक वस्तु वस्तुके भाव पणे आस्तित्व है । नास्ति नास्तित्वपणे परिणमें जेसे गर्दभ शृंग वह नास्ति नास्ति पणे परिणमते है इसी माफीक जीवके अन्दर जडता भाव नास्ति है नास्ति भाव पणे परिणमते है इत्यादि ।

प्र० हे भगवान ! जो आस्ति आस्तित्व पणे परिणमे और नास्ति नास्तित्वपणे परिमणते है तो क्या प्रयोगसे परिणमते है या स्वभावसे परिणमते है ।

(उ) हे गौतम : जीवके प्रयोगसे भी परिणमते है और स्वभावसे भी परिणमते है । जेसे अंगुली ऋजु है उसकों जीवे प्रयोगसे वक्र करते है वह जीव प्रयोगसे तथा बादला प्रमुख यह

स्वभावसे परिणमते है । इसी माफीक कीतनेक पदार्थ आस्ति आस्तित्वपणे जीवके प्रयोगसे परिणमते है कितनेक पदार्थ आस्ति आस्तित्व स्वाभावे परिणमते है । एवं नास्ति नास्तित्वपणे भो जीव प्रयोग तथा स्वभावे भी परिणमते है यहां तात्पर्य वह है कि स्वगुनापेक्षा आस्ति आस्तित्व परिणमते है और पर गुनापेक्षा नास्ति नास्तित्व परिणमते है । इसी माफीक दोय अलापक गमन करनेके भी समझना ।

काक्षा मोहनिय कर्मका अधिकार भाग १६ वा मे छवा हुवा है परन्तु कुच्छ संबन्ध रह गया था वह यहांपर लिखाजाते है ।

(प्र) हे भगवान । जीव कांक्षा मोहनिय कर्मकि उदीरणा स्वयं कर्ता है स्वयं ग्रहना है कर्ता है स्वयं सबरना है ।

(उ) हां गौतम । उदिरणा ग्रहना संबरना जीव स्वयं ही करता है ।

(प्र) अगर स्वयं जीव उदीरणा कर्ता है तो क्या उरत कर्मोकि उदीरणा करे, अनुदीरत कर्मोके उदीरणा करे । उदय आने योग्य कर्मोकि उदीरणा करे । उदय समयके पश्चात अणन्तर समयकी उदीरणा करे ।

(प्र) हे गौतम तीन पद उदीरणाके अयोग्य है किन्तु उदय आने योग्य कर्म है ॥

उसी कर्मोकि उदीरणा करते है ।

(प्र०) उदीरणा करते हैं वह क्या उत्स्थानादिसे करते है या अनुत्स्थानादिसे करते है ? उत्स्थानादिसे उदीरणा करते है । किन्तु अनुत्स्थानादिसे उदीरणा नहीं होती है ।

(प्र०) हे भगवान् ! जीव कर्मोको उपशमाते है वह क्या उदीरत कर्मोको अनुदीरत कर्मोका, उदय आने योग कर्मोका, उदय समय पश्चात अणन्तर समयको उपशमाते हैं ?

(उ०) हे गौतम ! अनुदय कर्मोका उपशम होता है अर्थात् उदय नहीं आये एसे सतामें रहे हुवे कर्मोको उपशमाते हैं वह उत्स्थानादिसे उपशमाते हैं एवं कर्मोको वेदते है परन्तु उदय आये हुवे कर्मोको वेदते है एवं निर्जरा परन्तु उदय अणान्तर पूर्वकृत समय अर्थात् उदय आये हुवेको भोगवनेके बाद कर्मोकि निर्जरा करते है इस सब पदके अन्दर उत्स्थानादि पुरुषार्थसे ही करते है। यहां गोसालादि नित्य बादीयों जो उत्स्थान बल कम्म वीर्य और पुरुषार्थको नहीं मानते है उन्हीं बादीयोंके मतका निराकार कीया है। इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नम्बर ५

सूत्र श्री भगवतीजी शतक १ उदेशो ४

(वीर्य विषय प्रश्नोत्तर)

(प्र०) हे भगवान्। जीस जीवोंने पूर्व मोहनि कर्म संचय किया है वह वर्तमानमे उदय होनेपर जीव परभव गमन करे।

(उ०) हे गौतम। पूर्व आयुष्य क्षय होनेपर परभव गमन करते है।

(प्र०) वह जीव परभव गमन करता है तो क्या वीर्यसे करता है।

(उ०) हाँ, वीर्यसे ही परभव गमन करता है। अवीर्यसे नहीं।

(प्र०) वीर्यसे करते है तो क्या बालवीर्यसे पंडितवीर्यसे बालपंडित वीर्यसे परभव गमन करते है।

(उ०) हे गौतम। पंडितवीर्य साधुवोंके और बालपंडित वीर्य श्रावकोंके होते है इससे परभव गमन नही करते है क्यु कि परभव गमन समय जीवोंके पहेलो दुसरो और चोथो यह तीन गुणस्थान होते है वह तीनों गुण० बालवीर्य धारक है वास्ते परभव गमन बालवीर्यसे ही होते है।

(प्र०) पूर्व मोहनिय कर्म किया। वह वर्तमानमे उदय होनेपर जीव उच्च गुणस्थानसे निचे गुणस्थानपर जा सक्ते है।

(उ०) हाँ मोहनिय कर्मोदयसे निचे गुण० आ सक्ता है।

(प्र०) तो क्या बालवीर्यसे पंडितवीर्यसे या बालपंडितवीर्यसे?

(उ०) पंडितवीर्य तथा बालपंडितवीर्यसे निचा नही आवे। किन्तु बालवीर्यसे उच्च गुणस्थानसे निच गुणस्थान जावे। वाचनान्तरमें बालपंडित वीर्यसे भी आना कहा है कारण मोहनिय (चारित्र मोहनि) कर्मका प्रबल उदय होनेसे साधु हुआ भी देशव्रतमे आवे वहासे फीर नीचेके गुणस्थान आवे, भावार्थ है, इसी माफीक मोहनिय उपशमका भी दो सूत्र समझना परन्तु परभव गमन पंडितवीर्यसे और निच गुणस्थान बालवीर्यसे समझना।

(प्र०) हे भगवन्। जीव हीन गुणोंको प्राप्त करता है वह क्या आत्मभावोंसे करता है या अनात्मभावोंसे।

(उ०) आत्मभाव करके हीन गुणोंको प्राप्त करता है।

(प्र०) जीव मोहनिय कर्म वेदतों हीन गुणस्थान क्यो आता है ।

(उ०) प्रथम जीव सर्वज्ञ कथित तत्त्वोंपर श्रद्धा प्रतीत रखता था फीर मोहनिय कर्मका प्रबलोदय होनेसे । जिन वचनोंपर श्रद्धा नही रखता हुवा अनेक पाषंडपरूपीत असत्य वस्तुकों सत्य कर मानने लग गया । इस कारणसे जीव मोहनिय कर्म वेदतों हीन गुणस्थान आता है ।

(प्र) हे करूणासिन्धु । जीव नारक तीर्यंच मनुष्य और देवतावोंमें किया हुवे कर्म बीनों भुक्ते मोक्ष नहीं जाते है ।

(उ) हां च्यार गतिमें किये कर्म भोगवनेके सिवाय मोक्ष नहीं जाते है ।

(प्र) हे भगवान् ! कितनेक एसे भी जीव देखनेमें आते है कि अनेक प्रकारका कर्म करते है और उसी भवमें मोक्ष जाते है तों वह जीव कर्म कीस जगे भोगवते है ।

(उ) हे गौतम । कर्मोंका भोगवना दोय प्रकारसे होता है (१) आत्मप्रदेशोंसे (२) आत्मप्रदेशों विपाकसे, जिस्में विपाक कर्म तों कोई जीव भोगवे कोई जीव नहीं भी भोगवे । और प्रदेशोंसे तों आवश्य भोगवना ही पडता है कारण कर्म बन्धमे तथा कर्म भोगवनमें अध्यवसाय निमत्त कारणभूत है जेसे कर्म बन्धा हुवा है और ज्ञान ध्यान तप जपादिसे दीर्घ कालकि स्थितिवाले कर्मोंका आकर्षन कर स्थितिघात रसघातकर प्रदेशों भोगवके निर्जरा कर देते है इस वातकों सर्वज्ञ अरिहंत अपने केवल ज्ञानसे जानते है, केवल दर्शनसे देखते है कि यह जीव उदय आये हुवे

तथा उदिरणा करके वीपाकसे या प्रदेशसे कर्म भोगवते है इस वास्ते "जं जं भगवया दीट्ठा तं तं परिणमस्सन्ति"

(प्र०) हे भगवान ! भूत भविष्य वर्तमान इन तीनों कालमें जीव और पुद्गल सास्वता कहा जाते है ।

(उ०) हां गौतम जीव पुद्गल स्कन्ध सदेव सास्वता है ।

(प्र०) हे दयाल । भूतकालमें, छद्मस्त जीव केवल (सम्पूर्ण) संयम, संवर, ब्रह्मचार्य प्रवचन पालके जीव सिद्ध हुवा है ।

(उ०) नही हुवे । कारण यह कार्य छद्मस्त वीतरागके भी नहीं हो सके है परन्तु अंतिम भवी अन्तिम शरीरी होते है उन्होंको प्रथम केवल ज्ञान केवल दर्शन उत्पन्न होते है फीर वह जीव सिद्ध होते है यह बात भी जो अरिहंत अपने केवल ज्ञानसे जानते है देखते है कि यह जीव चरम शरीरी इस भवमें केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जावेगा । इति शम् ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नम्बर ६.

सूत्र श्री भगवतीजी शतक २ उदेशा ९

(प्र) हे भगवान । उदय होता सूर्य जितने दूरसे द्रष्टीगौचर होता है इतना ही अस्त होता सूर्य द्रष्टीगोचर होता है ?

(उ) हां गौतम ! उदय तथा अस्त होता सूर्य बराबर द्रष्टो-गोचर होते है कारण सूर्यकि उत्कृष्ट गति कर्के शक्रान्त उदय ४७२६३=$\frac{२१}{६०}$ इतने योजनसे उदय होता द्रष्टीगौचर होता है ४७२६३=$\frac{२१}{६०}$ इतने योजन सूर्य अस्त समय भी द्रष्टीगौचर होता

है। इसी माफीक सुर्य उदय समय जीतने क्षेत्रमें प्रकाश करे उद्योत करे यावत् ताप तपावे इतना ही क्षेत्रमें अस्त समय प्रकाश यावत् ताप करे है।

(प्र) हे भगवान्। सुर्य प्रकाश करे है वह क्या स्पर्श क्षेत्रमें करते है या अस्पर्श क्षेत्रमें करते है? स्पर्श किये हुवे क्षेत्रमें प्रकाश करते है वह नियमा छे दिशीमे प्रकाश करते है।

(प्र) हे भगवान्। सुर्य क्या स्पर्श क्षेत्रकों स्पर्श करते है या अस्पर्श क्षेत्रकों स्पर्श करते है? स्पर्श क्षेत्रकों स्पर्श करते है किंतु अस्पर्श क्षेत्रकों स्पर्श नहीं करते है।

(प्र) हे भगवान्। लोकका अन्त अलोकके अन्तसे स्पर्श किया हुवा है? अलोकका अन्त लोकके अन्तकों स्पर्श किया है?

(उ) हां गौतम, लोकका अन्त। अलोकके अन्तकों और अलोकका अन्त लोकके अन्तकों स्पर्श किया हुवा है। वह भी स्पर्श किये हुवेको स्पर्श किया है वह भी नियमा छे दिशोंके अन्दर स्पर्श किये है।

(प्र) हे भगवान्। द्विपका अन्तकों सागरका अन्त स्पर्श किया है। सागरका अन्तकों द्वीपका अन्त स्पर्श किया है?

(उ) हां गौतम। पूर्ववत् यावत् नियमा छे दिशोंमें स्पर्श किया है एव जलान्तसे स्थलांत एवं वस्त्रके छेद्र आदि बोलोंका संयोग करना यावत् नियम छे दिशोंकों स्पर्श किया है।

(प्र) हे भगवान्। समुच्चय जीव अपेक्षा प्रश्न करते है कि जीव प्राणातिपातकि क्रिया करते है।

(उ) हां गौतम। जीव प्रणातिपातकि क्रिया करते है।

(प्र) प्राणातिपातकि क्रिया करते है तो क्या स्पर्शसे करते है या अस्पर्शसे करते है ।

(उ) क्रिया करते है वह स्पर्शसे करते है न कि अस्पर्शसे परन्तु अगर व्याघात (अलोककि) हो तो स्यात्। तीन दिशा, च्यार दिशा, पांच दिशा, और निर्व्याघत हो तो नियमा छे दिशावोंको स्पर्श क्रिया करते है।

(प्र) हे भगवान् ! जीव क्रिया करते है वहा क्या कृत क्रिया है या अकृत क्रिया है ।

(उ) कृत क्रिया है परन्तु अकृत नही है ।

(प्र०) हे भगवान ! अगर कृत क्रिया है तो क्या आत्मकृत परकृत उभयकृत क्रिया है ।

(उ०) आत्मकृत क्रिया है किन्तु परकृत उभयकृत क्रिया नहीं है ।

(प्र०) स्वकृत क्रिया है तो क्या अनुक्रमे है या अनुक्रम रहित है ?

(उ०) अनुक्रमसे क्रिया है अनुक्र रहित क्रिया नहीं है। जो क्रिया करी है करते है और करेंगा वह सब अनुक्रम ही है। भावार्थ क्रिया अनुक्रमसे ही होती है परन्तु अनानुक्रम नहीं होती है। क्रियामें कालकि अपेक्षा होती है और काल हे सो प्रथम समय निष्ट होने पर दुसरा तीसरादि क्रमःपर होते है इत्यादि। एवं नरकादि २४ दंडक परन्तु समुच्चय जीव और पांच स्थावरमें व्याघातापेक्षा स्यात् तीन दिशा, च्यार दिशा, पांच दिशा और निर्व्याघात अपेक्षा छे दिशा तथा शेष १९ दंडकमें भी छे दिशावोंमें

क्रिया करे। एवं प्रणातिपात क्रिया समुच्चय जीव और चौवीस दंडक २९ अलापक हुवे इसी माफीक मृषावाद, अदत्ता दान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन, परपरावाद, रति, अरति, माय, मृषावाद, मिथ्यादर्शन, शल्य एवं १८ पापस्थानकि क्रिया समुच्चयजीव और चौवीस दंडकके प्रत्यक दंडकके जीव करनेसे पंचविसको अठारे गुणा करनेसे ४५० अलापक होते है। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर ७

श्री भगवती सूत्र श० १ उ० ७

जो जीव जिस गतीका आयुष्य बांधा है और भावी उसी गतीमें जानेवाला है उसको उसी गतीका कहना अनुचित नहीं कहा जाता जैसे मनुष्य तिर्यचमें रहा हुवा जीव नारकीका आयुष्य बांधा हो उसको अगर नारकी कहा जाय तो भी अनुचित नहीं। नारकीमें जानेवाला जीव अपने सर्व प्रदेशोंको "सर्व" कहते है और नारकीमें उत्पन्न होनेके सम्पूर्ण स्थानको 'सर्व' कहते है वह इस थोकडे द्वारा बतलाया जायगा।

(प्र०) नारकीका नैरीया नारकीमें उत्पन्न होते हैं वे क्या—

(१) देशसे देश उत्पन्न होते है। जीवके एक भागके प्रदेशको देश कहते हैं और वहां नारकी उत्पन्न स्थानके एक विभागको देश कहते हैं।

(२) देशसे सर्व उत्पन्न होते हैं ?

(३) सर्वसे देश उत्पन्न होते है ?

(४) सर्वसे सर्व उत्पन्न होते है ?

(उ०) सर्वसे सर्व उत्पन्न होते है शेष तीन भागोंसे उत्पन्न नहीं होते एवं २४ दंडक भी सर्वसे सर्व उत्पन्न होते हैं (१) और निकलनेकी अपेक्षा भी नरकादि २४ दंडकके सर्वसे सर्व निकलते हैं। (२)

(प्र०) नारकी नारकीमें उत्पन्न हुवे है वे क्या पूर्वोक्त ४ भागोंसे उत्पन्न हुवे है ?

(उ०) पूर्वोक्त सर्वसे सर्व उत्पन्न हुवे है एवं नरकादि २४ दंडक (३) इसी माफीक निकलनेका भी २४ दंडकमें सर्वसे सर्व निकलते है। (४)

(प्र०) नारकी नारकीमें उत्पन्न होते समय आहार लेते है वे क्या (१) देशसे देश (२) देशसे सर्व (३) सर्वसे देश (४) सर्वसे सर्व आहार लेते है ?

(उ०) देशसे देश और देशसे सर्व आहार नहीं लेते किन्तु सर्वसे देश और सर्वसे सर्व आहार लेते है। कारण उत्पन्न होते समय जो आहारका पुद्गल लेना है जिसमें कितनेक भागका पुद्गल विना आहारे भी निष्ट होते है इस लिये तीसरा भांगा स्वीकार किया है एवं चौवीस दंडक (१) एवं निकले तो (२) एवं उत्पन्न हुवेका (३) एवं निकलने पर भी (४)

जेसे २४ दंडकपर उत्पन्नका च्यार द्वार और आहारका च्यार द्वार देशसे देश अपेक्षाका है इसी माफीक ८ द्वार अद्धासे अद्धाका भी समझ लेना।

(प्र०) नारकी नारकीमें उत्पन्न होता है वह क्या (१) अद्धासे अद्धा उत्पन्न होता है (२) अद्धासे सर्व (३) सर्वसे अद्धा (४) सर्वसे सर्व उत्पन्न होता है ?

(उ०) जैसे पूर्वोक्त आठ द्वार कहे हैं वैसे ही प्रथम उत्पन्न कालमें चौथा भांगा और आहारमें तीजा, चौथा भागेसे कहना। इति २१ दंडक पर ११-१६ द्वार करनेसे ३८४ भागे होते है।

(प्र०) हे भगवान् ! जीव विग्रह गतीवाला है या अविग्रह गतीवाला है ?

(उ०) स्यात् विग्रह गतीवाला है स्यात् अविग्रह गतीवाला भी है एवं नरकादि २४ दंडक भी समझ लेना।

(प्र०) घणा जीव क्या विग्रह गतीवाला है कि अविग्रह गतीवाला है ?

(उ०) विग्रह गतीवाला भी घणा अविग्रह गतीवाला भी घणा।

(प्र०) नारकीकी पृच्छा ?

(उ०) नारकीमें (१) अविग्रह गतीवाला सास्वता (स्थानापेक्षा) (२) अविग्रह गतीवाला घणा, विग्रह गतीवाला एक (३) अविग्रह गतीवाला घणा और विग्रह गतीवाला भी घणा एवं तीन भागा हुवा इसी माफक त्रस जीवोंके १९ दंडकमें ३-३ भांगे लगानेसे ५७ भांगे हुवे और पांच स्थावर समुच्चयकी माफक अर्थात् विग्रह गतीवाला भी घगा और अविग्रह गतीवाला भी घणा। पूर्वोक्त ३८४ और ५७ मिलके कुल भागा ४४१ हुवा।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सचम्।

थोकडा नं० ८

श्री भगवती शतक १ उ० ७

(गति)

(प्र०) हे भगवान ! देवता मोटी ऋद्धि, कांती, ज्योती, बाला, सुख और महानुभाव अपने चवन कालको जानके सरमावे (लज्जा पामे) अरती करे स्वल्प काल तक आहार भी न ले और पीछे क्षुवा सहन न करता आहार करे, शेष आयुष प्रक्षीन होनेपर मनुष्य या तिर्यच योनीमें उत्पन्न होवे ?

(उ०) देवता अपना चवन कालको जानेके पूर्वोक्त चिन्ता करे कारन देवता सम्बन्धी सुख छोडने कर मनुष्यादिकी अशुची पदार्थ वाली योनीमें उत्पन्न होना पडेगा और वहां वीर्य रौद्रका आहार लेना होगा इस वास्त सरमावे, घृगा करे, अरती वेदे फिर आयुष्य क्षय होनेपर मनुष्य या तिर्यचमें अवतरे।

(प्र०) हे भगवान। गर्भमें जीव उत्पन्न होता है वह क्या इन्द्रिय सहित या इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है।

(उ०) द्रव्येन्द्रिय (कान, नाक, नेत्र, रस, स्पर्श) अपेक्षा इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है कारन द्रव्येन्द्रिय शरीरसे संबन्ध रखती है इसलिये द्रव्येन्द्रिय रहित और भावेन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है।

(प्र०) जीव गर्भमें उत्पन्न होता है वह क्या शरीर सहित या शरीर रहित उत्पन्न होता है।

(उ०) औदारिक, वैक्रिय, आहरिककी अपेक्षा शरीर रहित उत्पन्न होता है कारन यह तीनो शरीर उत्पन्न होनेके बाद होते

है और तेजस कारमण शरीरापेक्षा शरीर सहित उत्पन्न होते हैं कारन कह दोनो शरीर परभवमें साथ रहती हैं।

(प्र०) हे भगवान्! गर्भमें उत्पन्न होनेवाला जीव प्रथम काहेका आहार लेता है ?

(उ०) माता के रौद्र और पिताके शुक्रका प्रथम आहार लेता है फिर उस जीवकी माता जिस प्रकारका आहार करती है उसके एक देशका आहार पूत्र भी करता है कारन माताकी नाडी और पुत्रकी नाड़ीसे संबन्ध है।

(प्र०) गर्भमें रहे हुवे जीवको लघु नीत, बड़ी नीत, क्षेत्र, श्लेष्म, वमन, पित है ?

(उ०) उक्त वातें नहीं है। जो आहार करता है वह श्रोतेन्द्रिय, चक्षु० घ्राण० रस० स्पर्शेन्द्रिय, हाड़, हाड़की मीजी, केस, नख पने प्रणमता है कारन गर्भके जीवको कवलाहार नहीं है इसलिये लघु नीती, बड़ी नीती नहीं है रामाहार है, वह सर्व आहार करे सर्व प्रणमें सर्व उश्वासनिश्वासे इसी माफक वार वार यावत् निश्वासे।

(प्र०) जीवके माताका अंग कितना है और पिताका अंग कितना है।

(उ०) मांस, लोही और मस्तक यह तीनों अंग माताके है और अस्त (हाड़), हाड़की मीजी, केश और नख यह तीन अंग पिताके है।

(प्र०) माता पिताका अंस (प्रथम समयका आहार) जीवोंके कितने काल तक रहता है।

(उ०) जहां तक जीवके भव धारणीय शरीर रहता है वहां तक मातापिताका अंस रहता है, परन्तु समय २ हीन होता जाता है यावत् न मरे जहां तक कुछ न कुछ माता पिताका अंस रहता ही है इस लिये माता पिताका कितना उपकार है कि जो जीवित है वह माता पिताका ही है वास्ते माता पिताका उपकार कभी न भूलना चाहिये।

(प्र) गर्भमें मरा हुवा जीव नरकमें जा सक्ता है ?

(उ) कोई जीव नरकमें जावे कोई न भी जावे।

(प्र) गर्भमें रहा हुवा जीव मरके नरकमें क्यों जाता है ?

(उ) संज्ञी पंचेन्द्री सम्पूर्ण पर्याप्तिको प्राप्त करके वीर्यलब्धी वैक्रिय लब्धी जिसको प्राप्त हुई है वह किसी समय गर्भमें रहा हुवा अपने पिता पर वैरी आया हुवा सुनके वैक्रिय लब्धीसे अपनी आत्माके प्रदेशोंको गर्भसे बाहर निकाले और वैक्रिय समुद्घात करके चार प्रकारकी सेना तयार कर वैरीसे संग्राम करे, और संग्राम करते हुवे आयुष्य पुर्ण करे तो वह जीव मरके नरकमें जाता है, कारन उस समय वह जीव राजका, धनका, कामका, भोगका, अर्थका अभिलाषी है इस वास्ते नरकमें जाता है (भागवती सुत्र श० २४ में कहा है कि तिर्यंच ज० अन्तर मुहर्तवाला और मनुष्य ज० प्रत्येक मासवाला नरकमें जा सक्ता है।)

(प्र) गर्भमें रहा हुवा जीव मरके क्या देवतामें जा सक्ता है ?

(उ०) हां देवतामें भी जा सक्ता है।

(प्र०) क्या करनेसे ?

(उ०) पूर्वोक्त संज्ञी पंचेन्द्री वैक्रिय लब्धीवाला तथा इसके

श्रमण महानके समीप एक भी आर्य वचन श्रमण कर परम संवेगकी श्रद्धा और धर्म पर तिव्र परिणाम (तिव्व धम्माणु राग रत्ते) प्रेम होनेसे धर्म, पुन्य, स्वर्ग या मोक्षका अभिलाषी शुद्ध चित, मन, लेश्या अध्यवसायमें काल करे तो वह जीव गर्भमें रहा हुवा भी मरके देवलोकमें जा सक्ता है।

गर्भका जीव गर्भमें चित रहे पसवाड़े रहे या अधोमुख रहे। माता सुती, जागती सुखी दुःखीसे पुत्र भी सुता जागता सुखी दुःखीसे, पुत्र भी सुता जागता सुखी दुःखी होता है, गर्भ प्रसव मस्तकसे या पगसे होता है। जो पापी जीव होता है वह योनीद्वार पर तीरछा आनेसे मृतुको प्राप्त होता है। कदाचित निकाचित अशुभ कर्मके उदयसे जीता रहे तो दुःवर्ण, दुःगन्ध, दुःरस, दुःस्पर्श, अनिष्ट कांति, अमनोज्ञ, हीन दीन स्वर, यावत अनादेय वचनवाला जो कि उसका वचन सादर कोई भी न माने यावत् महान् दुःखमें जीवन निर्गमन करनेवाला होता है अगर पूर्वे अशुभ कर्म नही बांधा नही पुष्ट किया हो अर्थात् पूर्वे शुभ कर्म बान्धा हो वह जीव इष्ट प्रय वल्लभ अच्छे सुस्वर शब्दवाला यावत् आदय वचन जो कि सर्व लोक सादर वचनको स्वीकार करे यावत् परम सुखमें अपना जीवन निर्गमन करनेवाला होता है। इसी वास्ते अच्छे सुकृत कार्य करनेकि शास्त्रकारोंने आवश्यक्ता बतलाई है। क्रमसर जिनाज्ञाका आराधन कर अक्षय सुखकि प्राप्ति हो जाने पर फीर इस घोर संसारके अन्दर जन्म ही न लेना पडे, गर्भमें न आना पडे। इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर ९

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ७ उद्देशा १

(आहाराधिकार)

अनाहारीक जीव च्यार प्रकारके होते है ? यथा-

(१) सिद्ध भगवान सदैव अनाहारीक है ।

(२) चौदवे गुणस्थान अन्तर महुर्त अनाहारीक है ।

(३) तेरवां गुणस्थान केवली समुद्घात करते तीन संयम अनाहारीक होते है ।

(४) परभव गमन करते वखत विग्रह गतिमें १-२-३ समय अनाहारीक रहेते है । इस थोकडेमें परभव गमन समय अनाहारीक रहेते है उसी अपेक्षासे प्रश्न करेंगे और इसी अपेक्षासे उत्तर देंगे ।

(प्र) हे भगवान ? जीव कोनसे समय अनाहारीक होते है ?

(उ) पहले समय स्यात आहारीक स्यात् अनाहारीक दुसरे समय स्यात् आहारीक स्यात् अनाहारीक । तीसरे समय स्यात आहारीक स्यात् अनाहारीक । चोथे समय निश्चमा आहारीक होते है। भावाना । जीव एक गतिका त्यागकर दुसरी गतिको गमन करता है । शरीर त्याग समय यहांपर आहार (रोमाहार) कर परभव गमन समश्रेणी कर वहां जाके आहार कर लेता है वास्ते स्यात आहारीक है । अगर मृत्यु समय यहां पर आहार नहीं करता। हुवा समुद्घातकर परभव गमन समश्रेणि कर वहांपर पहले समय आहार किया हो। वह जीव स्यात् अनाहारी कहा जाता है । दुसरे समय स्यात् आहारीक जो जीव एक समयकि विग्रह गति करी हो वह दुसरे समय उत्पन्न स्थान जाके आहार करता है वास्ते स्यात् आहारीक त॥

दो समयकि विग्रह करे तों स्यात अनाहारीक होता है। तीसरे समय स्यात् आहारिक स्यात अनाहारीक अगर कोइ जीव दुवंका श्रेणिकर तीसरे समय उत्पन्न स्थानका आहार लेवे तो स्यात आहारीक है और त्रसनालीके बाहार लोकके अन्तके खुणासे मृत्यु प्राप्तकर प्रथम समय सम श्रेणि करे दूसरे समय त्रसनालिमें आवे तीसरे समय उर्ध्व दिशामें जावे अगर वहां ही उत्पन्न होना हो तों तीसरे समय आहारीक होता है और उर्ध्वलोककि स्थावर नालिमें उत्पन्न होनेवाला जीव तीसरे समय भी अनाहारी रहेता वह जीव चोथे समय नियमा आहारीक होता है। टीकाकारोंका कथन है कि अगर निचे लोकके चरमान्तसे जेसे जीव मृत्यु करता है इसी माफीक उर्ध्व लोकके चरमान्तके खूणेमें उत्पन्न होनेकि एसी श्रेणि नहीं है वास्ते शास्त्रकारोंका फरमान है कि चोथे समय नियमा आहारीक होता है। इति समुच्चय जीव।

नारकी आदि १९ दंडक पहले दुसरे समय स्यात आहारीक स्यात् अनाहारीक तीसरे समय नियमा आहारीक कारण त्रसनालिमें दोय समयकि विग्रह गति होती है और पांच स्थावरोंके पांच दंडकमें पहले दुसरे तीसरे समय स्यात् आहारीक स्यात अनाहारिक चोथे समय नियमा आहारीक भवना पूर्ववत् समझना।

(प्र) हे भगवन्। जीव सर्वसे स्वल्प आहारी कीस समय होते है ?

(उ) जीव उत्पन्न होने पहले समय तथा मरणके अन्त समय स्वल्प आहारी होते है। भावार्थ जीव उत्पन्न होते है उस समय तेजस और कारमाण यह दोय शरीर द्वारा आहारके पुद्गल खेचते

है। सामग्रीं स्वल्प होनेसे स्वल्प पुद्गलोंका आहार लेते है और चरम समय उत्थानादि सामग्री शीतल होनेसे भी स्वल्प आहार लेते है इसी माफोक नरकादि चौवीस दंडक उत्पन्न समय तथा चरम समय स्वल्प आहारी होते है ।

(प्र) हे भगवान् । लोकका क्या संस्थान है ?

(उ) अधोलोक ती पायाके संस्थान है । उर्ध्व लोक उभी मादलके संस्थान है तीर्यग लोक झालरीके संस्थान है। सम्पूर्ण लोक सुप्रतिष्ट अर्थात् तीन सरावला (पासलीया)के आकार पहला एक सरावला ऊंधा रखे उसपर दुसरा सरावला सीधा रखे तीसरा सरावल उसपर ऊंधा रखे अर्थात् लोक निचेसे विस्तारवाला है विचमें संकुचित उपरसे विस्तार (पांचमा देवलोक) उसके उपर और संकुचित है विस्तार देखो शीघ्रबोध भाग १३वां । इस लोककि व्याख्या जिन अरिहंत केवली सर्वज्ञ भगवान्ने करी है । जीवाजीव व्यास लोक द्रव्यास्ति नयापेक्षा सास्वत है पर्यायास्ति नयापेक्षा असास्वत है ।

(प्र०) हे भगवान्! कोई श्रावक सामायिक कर सामायिकमें प्रवृति कर रहा है उसको क्या इर्यावहि क्रिया लागे या संपराय क्रिया लागे ?

(उ०) सामायिक संयुक्त श्रावकको इर्यावहि क्रिया नहीं लागे किन्तु संपराय क्रिया लागे कारण क्रिया लगनेका कारण यह है ।

(१) इर्यावही क्रिया केवल योगोंके प्रवृतिको लगती है जिन्होंके क्रोध मान माया लोभ मूलसे नष्ट हो गये है तथा उपशान्त हो गये है एसे जो वीतराग ११-१२-१३ गुणस्थान वृति जीवोंको इर्यावही क्रिया लगती है ।

(२) संपराय क्रिया=कषाय ओर योगोंकि प्रवृतिसे लगति है। कषाय सद्भावे पहले गुणस्थानसे दशवें गुणस्थानवृत्ति जीवोंको संपराय क्रिया लगती है श्रावक हे सो पांचवे गुणस्थान है वास्ते सामायिक कृत श्रावककों इर्यावही क्रिया नही लागे परन्तु संपराय क्रिया लगती है।

(प्र) हे भगवान्! क्या कारण है।

(उ) सामायिक कीये हुवे श्रावक कि आत्मा अधिकरण अर्थात् क्रोधमानादि कर सयुक्त है वास्ते उस्कों संपराय किया लगति है।

(प्र) किसी श्रावकने त्रस जीव मारनेका प्रत्याख्यान किया। और पृथ्व्यादि स्थावर जीवोंकों मारनेका प्रत्याख्यान नहीं है। वह श्रावक गृहकार्यवसात् पृथ्वीकाय खोंदतों अगर कोई त्रस जीव मर जावे तों उस श्रावककों व्रतोंके अन्दर अतिचार लगता है?

(उ०) उस श्रावककों अतिचार नहीं लगे कारण उस श्रावकका संकल्प पृथ्वीकाय खोदनेका था परन्तु त्रसकायकों मारनेका संकल्प नहीं था। हां त्रसकाय मर जानेसे त्रसकायका पाप आवश्य लगता है। परन्तु व्रतोंके अन्दर अतिचार नहीं लगते है, 'भावविशुद्धि' इसी माफीक वनस्पति छेदनेका श्रावकको प्रत्यख्यान है और पृथ्व्यादि खोदतों वनास्पतिका मूलादि छेदाय जावे तों उस श्रावकके व्रतोंमे अतिचार नहीं है। भावना पूर्ववत्।

(प्र०) कोई श्रावक तथारूपके मुनिकों निर्जीव निर्दोष असनादि आहारका दान दे उस श्रावकको क्या लाभ होते है?

(उ०) श्रावकके दीया हुवा आहारकी साहितासे उस मुनिकों जो समाधि मीली है वह ही समाधि आहारके देनेवाले श्रावकको मीलती है अर्थात् आहारकि साहितासे मुनि अपने आत्मध्यान ज्ञानके गुणोंकों प्राप्ती करते है वह ही आत्मध्यान ज्ञान श्रावककों भी मीलते है। कारण फासुक आहार देनेसे एकान्त निर्ज्जरा होना शास्त्रकारोंने कहा है।

(प्र०) कोई श्रावक मुनिकों निर्जीव निर्दोष असानादि आहार देता है तो वह श्रावक मुनिकों क्या दिया कहा जाता है?

(उ०) वह श्रावक मुनिकों आहार दीया उसे जीतव दीया कहा जाता है कारण औदारिक शरीरका जीतव आहारके आधार पर ही है और एसा आहार देना (सुपात्रदांन) महान् दुष्कर है एसा अवसर मीलना भी दुर्लभ है। वास्ते उस दातार श्रावककों सम्यग्दर्शनके साथ परम्परासे अक्षय पदकि प्राप्ती होती है। इति।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर १०

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ७ उद्देशा १

(अकर्मीकों गति)

(प्र०) हे भगवान्! अकर्मीकों भी गति होती है?

(उ०) हां गौतम! अकर्मीकों गति होती है।

(प्र०) हे भगवान्! कीस कारणसे अकर्मीकों गति होती है?

(उ०) जेसे एक तूम्बा होंता है उसका स्वभाव हलकापणा होनेसे पाणीपर तीरणेका है परन्तु उसपर मट्टीका लेपकर अतापमें

शुकाके और मट्टीका लेप करे एसे आठ मट्टीका लेप करदेनेसे वह तूम्बा गुरूत्वकों प्राप्त हो जाता है फीर उस तूंबेकों पाणीपर रख देनेसे वह तूंबा पाणीके अधोभाग अर्थात् रसतलको पहुंच जाता है वह तूंबा पाणीमे इधर उधर भटकनेसे किसी प्रकारके उपक्रम लगनेसे मट्टीके लेप उतर जानेसे स्वयं ही पाणीके उपर आजाता है इसी माफीक यह जीव स्वभावसे निर्लेप है परन्तु आठ कर्मोसे गुरूत्वकों प्राप्तकर संसाररूपी समुद्रमें परिभ्रमण करता है। कबी सम्यग ज्ञानदर्शन चारित्ररूपी उपक्रमोंसे कर्म लेप दूर हो जानेसे निर्लेप हुवा तूंबा गति करता हैं इसी माफीक अकर्मी जीवकि भी गति होती है उस गतिकों शास्त्रकारोंने—

(१) "निःसंगयाए" कर्मोका संग रहित गति।

(२) "निरंगणयाए" कषायरूपी रंग रहित गति।

(३) "गइ परिणामेण" गति परिणाम अर्थात् जीव कि स्वाभावे उर्ध्व जाने कि गति है। जेसे कारागृहसे छूटा हुवा मनुष्य अपना निजावसकों जानामें स्वाभावीक गति होती है इसी माफीक संसाररूपी कारागृहसे छूट जानेसे मोक्षरूपी निजावासमें जानेकि जीवकि स्वाभावीक गति है।

(४) "बन्ध छेदन गति" जेसे मूंग मठ चावलादि कि फलो पूर्वबन्धी हुई होती है उस्कों आताप लगनेसे स्वयं फाटके अलग होजाती है इसी माफीक तपश्चर्यरूपी आताप लगनेसे कर्म अलग होते है और जीव बन्धन छेदनगति कर मोक्षमे चला जाता है।

(५) "निरंधण गति" जेसे अग्नि इंधण न मीलनेसे शान्त हो जाती है एसे रागद्वेष तथा मोहनिय कर्मरूपी इंधणके अभावसे

कर्मरूपी अग्नि शान्त हो जाति है तथा इंधनके अन्दर अग्नि लगानेसे धूवा निकलके उर्ध्वगतिको गमन करता है एसे जीव कर्मरूपी अग्निकों छोड उर्ध्व गति गमन करता है।

(६) "पूर्व प्रयोगगति" जेसे तीरके बाणमे पेस्तार खुब वेग भर दीया हो उस वेगके जोरसे तीरसे छूटा हुवा बाण जाता है इसी माफीक पूर्व योगोंका वेग जेसे बाण जाता हुवा रहस्तेमें तीरका संग नही है केवल पूर्वके वेगसे ही चल रहा है इसी माफीक मोक्ष जाते हुवे जीवोंकों योगों कि प्रेरणा नही है किन्तु पूर्व योगसे ही वह जीव सात राज उर्ध्व गतिकर मोक्षमे जाता है जेसे बाण मुद्रत स्थानपर स्थित हो जाता है इसी माफीक जीव भी मोक्षक्षेत्र तक जाके वहांपर सादि अनन्त भांगे स्थित हो जाता है इस वास्ते हे गौतम अकर्मी जीवोंकों भी गति होती है।

यह प्रश्न इस वास्ते पुच्छा गया है कि जीव अष्ट कर्मोका क्षय तों इस मृत्यु लोकमें ही कर देता है और विगर कर्मोके हलन चलन कि क्रिया हो नही सक्ती है तों फीर सातराज उर्ध्व मोक्ष क्षेत्र तक गति करते है वह किस प्रयोगसे करते है? इसके उत्तरमें शास्त्रकारोंने छे प्रकारकि गतिका खुलासा किया है। इति

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम्।

थोकडा नम्बर ११.

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ७ उद्देशा १

(दुःखाधिकार)

(प्र०) हे भगवान्! दुःखी है वह जीव दुःखकों स्पर्श

करता है या अदु:खी है वह जीव दु:खकों स्पर्श करता है। अर्थात् दु:ख हैं सों दु:खी जीवोंकों स्पर्श करता है या अदु:खी जीवोंकों स्पर्श करता है।

(उ०) दु:खी जीवोंकों दु:ख स्पर्श करता है। किंतु अदु:खी जीवोंकों दु:ख स्पर्श नहीं करता है। भावार्थ सिद्धोंको जीव अदु:खी है उनोंकों दु:ख कबी स्पर्श नही करता है जो संसारी जीव जीस दु:खकों बांधा है वह अबाधा काल परिपक्क होनेसे उदयमें आया हो वह दु:ख जीव दु:खकों स्पर्श करते है अगर दु:ख बन्धा हुआ होनेपर भी उदयमें नहीं आया हों वह जीव अदु:खी है वह दु:खको स्पर्श नहीं करते है इस अपेक्षाकों सर्वत्र भावना करना।

(प्र०) हे भगवान्! दु:खी नैरिया दु:खकों स्पर्श करे या अदु:खी नैरिया दु:खको स्पर्श करे?

(उ०) दु:खी नैरिया दु:खकों स्पर्श परन्तु अदु:खी नैरिया दु:खकों स्पर्श नहीं करे भावना पूर्ववत् उदय आये हुवे दु:खकों स्पर्श करे। उदय नही आये हुवे दु:खकों स्पर्श नहीं करे। तथा जो दु:ख उदयमें आये है उस दु:खकि अपेक्षा दु:खकों स्पर्श नहीं करे और जो दु:ख न बन्धा है न उदयमें आये है इसापेक्षा वह नारकि अदु:खी है और दु:खकों स्पर्श नहीं करते है एवं २४ दंडक समझना भावना सर्वत्र पूर्ववत् समझना। इसी माफीक दु:ख पर्याय अर्थात् निधनादि कर्म पर्याय एवं दु:खकि उदीरणा, एवं दु:खकों वेदणा एवं दु:खकि निर्ज्जरा दु:खी होगा वह ही करेगा। समुच्चय जीव और चौवीस दंडक एवं २५ सुत्रपर पांच

पांच दंडक लगानेसे १२९ अलापक हुवे ।

आगे मुनिके भिक्षाके दोषोंका अधिकार है वह शीघ्रबोध भाग चौथामें छप चुका है वहांसे देखे ।

(प्र०) हे भगवान् ! अगर कोई मुनि उद्योग सून्य अयत्नासे गमनागमन करे । वस्त्र पात्रादि उपकरणो ग्रहन करे या पीच्छा रखे उसकों क्या इर्यावही क्रिया लागे या संपराय क्रिया लागे ?

(उ०) उक्त मुनियोंको इर्यावही क्रिया नहीं लागे, किन्तु संपराय क्रिया लगती है । कारण जिस मुनियोंका क्रोध मान माया लोभ नष्ट हो गये है । उस जीवोंकों इर्यावही क्रिया लगती है और जिस जीवोंका क्रोध मान माया लोभ क्षय नही हुवे है उस जीवोंकों संपराय क्रिया लगती है । तथा जो सूत्रमें लिखा है इसी माफीक चलनेवाले होते है उस मुनिकों इर्यावही क्रिया लगती है और सूत्रमें कहा माफीक नहीं चले उसकों संपराय क्रिया लगती है अर्थात् सूत्रमें कहा माफीक वीतराग हो वह ही चाल सक्के है इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नम्बर १२

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ७ उद्देशा २

(प्रत्याख्यानाधिकार)

अन्य स्थलपर प्रत्याख्यान करनेके लिये मुनियोंके अनेक प्रकारके अभिग्रह और श्रावकोंके लिये ४९ भांग बतलाये है इसी भांगोंके ज्ञाता होनेसे हि शुद्ध प्रत्याख्यान करके पालन कर

सक्के है। शास्त्रकारोंने प्रत्याख्यान करनेकि चतुर्भांगी बतलाई है।
यथा=

(१) प्रत्याख्यान करानेवाला गीतार्थ=द्रव्य क्षेत्र काल भाव बल संहनन अवसर आदिके जानकार हो। प्रत्याख्यान करनेवाले भी गीतार्थ हो। प्रत्याख्यान करते समय करण योग शरीर सामर्थ्य आदिका ज्ञाता हो। यह प्रथम भांग शुद्ध है।

(२) प्रत्याख्यान करानेवाला गीतार्थ हो और प्रत्याख्यान करनेवाला अगीतार्थ हो। यह भी दुसरे नम्बरमें शुद्ध है कारण प्रत्याख्यान करानेवाला ज्ञाता होनेसे अज्ञात जनकों भी द्रव्यादि जानके प्रत्याख्यान करा देते है और संक्षिप्त समझानेपर भी प्रत्याख्यान शुद्ध पालन कर सके। गीतार्थोंकि निश्चय क्रिया करना स्वीकार करी है।

(३) प्रत्याख्यान करानेवाले अगीतार्थ और प्रत्याख्यान करनेवाला गीतार्थ इस भांगाकों तीसरा दरजे शुद्ध काहा है कारण प्रत्याख्यान पालन करनेवाला पालन करनेमें गीतार्थ है परन्तु प्रत्याख्यान करानेवाला अगीतार्थ होनेसे उन्होंने किस करण योगसे प्रत्याख्यान कराया वास्ते इस भांगाको शास्त्रकारोंने तीसरे दर्जे शुद्ध बतलाये है।

(४) प्रत्याख्यान करानेवाले और करनेवाले दोनों अगीतार्थ हो यह भांगा बिलकुल ही अशुद्ध है।

सूत्रकार—

(प्र०) हे सर्वज्ञ ! कोई जीव एसा प्रत्याख्यान करे।

(१) सर्व प्राण=बैकेलेन्द्रिय प्राण धारक।

(२) सर्व भूत=वनास्पति तीनो कालमें स्थित।

(३) सर्व जीव=जीवनके सुखदुःखकों जाननेवाली पांचे-न्द्रिय जीव।

(४) सर्व सत्व=पृथ्वी अप तेउ वायु जीव सत्ता संयुक्त।

इस च्यारों प्रकारके जीवोंकों मारनेका प्रत्याख्यान करने वा-लोंकों क्या सुप्रत्याख्यान होता है या दुःप्रत्याख्यान होता है अर्थात् अच्छे सुन्दर प्रत्याख्यान कहना या खराब प्रत्याख्यान कहना ?

(उ०) हे गौतम पूर्वोक्त सर्व जीवोंकों मारनेका त्याग किया हो उसकों स्यात् अच्छे प्रत्याख्यान भी कहा जाते है स्यात् खराब प्रत्याख्यान भी कह जाते है।

(प्र०) हे भगवान्। इसका क्या कारन है।

(उ०) जीस जीवोंकों एसा जाणपणा नही है कि यह जीव है यह अजीव है यह त्रस है यह स्थावर है (उपलक्षणसे) " यह संज्ञी, असंज्ञी, पर्याप्त, अपर्याप्त, सुक्ष्म, बादर, इत्यादि प्रत्याख्यान क्या वस्तु किस वास्ते किया जाते है, क्या इसका हेतु है, कितने करण योगसे मैं प्रत्याख्यान करता हूं " एसा जानपणा न होनेपर भी वह जीव कहेते है कि मैं सर्व प्राणभूत जीव सत्वके प्रत्याख्यान किया है वह जीव सत्य भाषाके बोलनेवाला नही है किन्तु असत्य भाषी है, निश्चयकर मृषावादी है, सर्व प्राण यावत् सत्वके लिये तीन करण तीन योगसे असंयति है अव्रती है प्रत्याख्यानकर पापकर्म आते हुवेकों नही रोके है। सक्रिय है, आत्माकों संवृत नही करी है। एकान्त दंडी (आत्माकों दंडारण है)एकान्त बाल= अज्ञानी है।

यहांपर उत्कृष्ट ज्ञान पक्षकों स्वीकारकर स्वसत्ताकों ध्यावे, परसत्ताकों त्यागन करना कारण आत्मा स्वसत्ता विलासी है जितने अंस, परसत्ता, परप्रणतिमें, प्रवृत्ति है इतने अंगमें अज्ञानता है इस्के वास्ते शास्त्रकार फरमाते है।

जिस जीवोंको एसा ज्ञान है कि इस्में जीव इसमें अजीव इसमें त्रस, स्थावर, संज्ञी, असंज्ञी, पर्याप्ता, अपर्याप्ता, सूक्ष्म, बादर, यह प्रत्याख्यान इस करण योगोंसे ग्रहन किया है और इसी माफीक पालन करना है यावत् आत्मसत्ताकों जाण, पर प्रणतिका प्रत्याख्यान करनेवाला कहता है कि मैं सर्व प्राणभूत जीव सत्वकों मारनेका प्रत्याख्यान किया है वह सत्यभाषाका बोलनेवाला है निश्चय सत्यवादी है तीन करण तीन संयोगसे संयति है व्रती है प्रत्याख्यान कर आते हुवे पापकों प्रतिहत करदीया है अक्रिय है संवृत आत्मा है अदंडो है एकान्त पंडित है।

भावार्थ—जिस पदार्थकों ठीक तौरपर नही जाना हो उसीका प्रत्याख्यान केसे होसके अगर प्रत्याख्यान कर भीं लिया जाव तों उसकों पालन किस तौरपर करसके वास्ते शास्त्रकारोंका निर्देश है कि पेस्तर स्वसत्ता परसत्ता स्वगुण परगुण पदार्थोंकों ठीक ठीक जानों समझो फीरसे परवस्तुका त्यागकर स्ववस्तु (ज्ञानादि) मे रमणता करो।

(प्र०) हे प्रभो ! प्रत्याख्यान कितने प्रकारके है ?

(उ०) प्रत्याख्यान दो प्रकारके होते है (१) मूलगुण प्रत्याख्यान (२) उत्तरगुण प्रत्याख्यान।

(प्र०) मूल गुण प्रत्याख्यान कितने प्रकारके है ?

(उ०) मूल गुण प्रत्याख्यान दो प्रकारके है। यथा=(१) सर्व मूल प्रत्य० (२) देश मूल प्रत्या।

(प्र०) सर्व मूल गुण प्रत्याख्यान कितने प्रकारके है।

(उ०) सर्व मूल गुण प्रत्या० पांच प्रकारके है यथा—

(१) त्रस स्थावर, सुक्ष्म बादर, किसी प्रकारके जीवोंको स्वयं मारणा नहीं दुसरोंसे मरवाना भी नहीं। कोई जीवोंको मारता हो उसे अच्छा भी नहीं समझना जेसे मनसे किसीका मृत्यु न चिंतवना, बचनसे किसीकों मृत्यु एसा शब्द भी नहीं बोलना, कायासे किसीकों नहीं मारना अर्थात किसी भी जीवोंका बुरा नहीं चिंतवना, बचनसे किसीकों बुरा नहीं बोलना, कायासे किसीका बुरा नहीं करना यह साधुवोंका पहला महाव्रत है। तीन करण तीन योगसे जीव हिंसा नहीं करना।

(२) क्रोधसे, मानसे, मायासे, लोभसे, हास्यसे, भयसे, मृषावाद नहीं बोलना, किसी दुसरोंसे नहीं बोलाना, कोई बोलता हो उसे अच्छा भी नहीं समझना, असत्य बोलनेका मन भी नहीं करना, बचनसे नहीं बोलना, कायासे इसार भी नहीं करना यह मुनियोंका दूसरा महाव्रत है।"

(३) ग्राममें नगरमें जंगलमें स्वल्प वस्तु, महान् वस्तु, अणु (छोटी तृणादि) स्थुल वस्तु स्वल्प मूलकि महान्मूल्यकि सचित जीव सहित शिष्यादि, अचित जीव रहित सुवर्णादि तथा वस्त्र पात्रादि इत्यादि कोई भी वस्तु विगर दातारकी दीय स्वयं नही

लेना दुसरोंसे नही लीवाना, अगर कोई व्यक्ति विमर दी वस्तु लेता हो उसे अच्छा भी नहीं समझना, मनसे अदत्त ग्रहनका इरादा नहीं करना, वचनसे भाषण भी नहीं करना, कायासे उठाके लेना भी नहीं यह महा ऋषियोंका तीसरा महाव्रत है ”

(४) देवांगना मनुष्यणी तीर्यंचणीके साथ मैथुनकर्म सेवन नहीं करना औरोंसे नहीं कराना अगर कोई करता हो उसे अच्छा भी नहीं समझना। मनसे संकल्प न करना, वचनसे मैथुन संबंधी भाषा नहीं बोलना, कायसे कुचेष्टादि नहीं करना यह ब्रह्मचारी पुरुषोंका चतुर्थ महाव्रत है।

(५) स्वल्प बहुत, अणु, स्थुल, सचित्त, अचित्त एसा परिग्रह न रखना न रखाना, रखता हो उसे अच्छा भी नहीं समझना, ममत्व भाव रखनेका मनसे संकल्प भी नहीं करना, वचनसे शब्द भी उच्चारण नहीं करना, कायाकर भंडोपकरण तथा अपने शरीर पर भी ममत्व भाव नहीं रखना यह निस्पृही महात्मावोंका पांचम महाव्रत है। ”

“ रात्री भोजन मुनियोंके प्रथम महाव्रतकि भावनामें निषेद है तथा श्रावकोंके बाविस अभक्षोंमें बिलकुल निषेद है ”

इस पांचों मूलगुणोंके स्वामि–अधिकारी मुनि मत्तगज है।

(प्र०) देशमूलगुण प्रत्याख्यान कितने प्रकारके है ?

(उ०) देशमूलगुण प्रत्या० पांच प्रकारके है। यथा–

(१) स्थुल प्राणी जो हलने चलने त्रस जीवोंको जानके, देखके, निरपराधी, संकल्प–मारनेकि बुद्धि करके नही मारना।

(२) स्थुल मृषावाद जिससे राजदंडे, लौकमें भडाचार हों दुनीयोंमे अप्रतित हो एसा मृषावाद नही बोलना। "जैसे कन्या, गाय, भूमिका स्थापण झूठी गावा देना"

(३) स्थुल चौरी 'अदत्त' जिससे राज दंडे, लौकमें भडाचार हों दुनियोंमे अप्रतित हो एसी चौरी न करना। जेसे क्षातर क्षण गांट छेदन ताला पर दूसरी चावी लगाना वट पाड (धाडा पडणी लुट करणी) अन्यक्ति वस्तु ले अपणी मालकी करना।"

(४) स्थुल मैथुना (सदारा संतोष) पर स्त्रि वैश्या विधवा कुमारीक कुलंगना इत्यादिका त्यागकर मात्र सदारासे ही संतोष करना उसमे भी मर्याद रखना।"

(५) स्थुल परिग्रह (इच्छपरिमाण) इच्छाका परिमाण करनेके बादमें अधिक ममत्व भाव न बढ़ाना।

इस पांच देशमूलगुण प्रत्याख्यानके अधिकारी श्रावक होते है इसमे मौख्य तों दोय करण तीन योगोंसे प्रत्याख्यान होते है सामान्यतासे स्वइच्छा भी करण योगसे प्रत्याख्यान कर सक्के है।

(प्र०) हे भगवान्। उत्तरगुण प्रत्याख्यान कितने प्रकारके है?

(उ०) दो प्रकारके है यथा (१) सर्व उत्तरगुण प्रत्या० (२) देश उत्तरगुण प्रत्याख्यान।

(प्र०) हे भगवान् सर्व उत्तरगुण प्रत्य० कितने प्रकारके है?

(उ०) सर्व उत्तरगुण प्रत्य० दश प्रकारके है—यथा—

(१) "अणागयं" अमुक तीथीकों तपश्चर्य करनेका निर्णय कियाथा परन्तु मुकर करी हुइ तिथिकों किसी आचार्यादि वृद्ध

मुनियोंके वैयावच्च विहारादि कारण होनेसे उस तपकों मुकर करी तीथीके पेस्तर ही कर दीया जाय ।

(२) "अइकतं" पूर्वोक्त मुकर करी तीथी पर कीसी सबल कारणसे वह तप नहीं हुवा हो तों उस तपकों आगे कर सके ।

(३) "कोडी सहियं" जिस तपकी आदिमें जो तप कियाहो वह तप उस तपश्चर्यके अन्तमें भी करना चाहिये जेसे एकावली तपकि आदिमें एक उपवास करते है तों अन्तमें भी एक उपवास-से समाप्त करे एवं छठ अट्ठमादि ।

(४) "नियंट्ठयं" निश्चय कर लिया कि अमूक तीथीकों अमुक तप करना वों फीर किसी प्रकारका कारण क्यो न हो पर-न्तु वह तप तों अवश्य करे ही ।

(५) "सागारं" प्रत्याख्यान करते समय आगार रखते है जेसे "अन्नत्थणा भोगेण" इत्यादि उपवास एकासना अम्बिलादि तपमें आगार रखा जाते है ।

(६) "अणागारं" किसी प्रकारका "आगार" नहीं रखा जावे जेसे अभिग्रह धारक मुनि उत्सर्ग मार्ग धारकोंकि अभिग्रह आगार रहित ही होते है ।

(७) "परिमाण" दात्यादिका परिमाण करना तथा भिक्षा निमत्त मुनि अनेक प्रकारके द्रव्यादिका परिमाण करे ।

(८) "निरविसेसं" सर्वता असानादिका त्याग करना ।

(९) 'साकेयं' गंठसी मुठसी कानसी आदिका संकेत करना जेसे कपडेके गांठ दी रहै वहां तक प्रत्याख्यान और गांठ छोडे वहां तक खुला रहै ।

(१०) "अद्धाकाल" नवकारसी आदि दश प्रत्याख्यान ।

प्रत्याख्यान करनेमें आगारोंका विवरण ।

(१) 'अनाभोग' विस्मृति प्रत्याख्यान किया है परन्तु उसको भूल जानेपर वस्तु खानेमें आ जावे तो व्रत भंग नहीं हुवे । परन्तु खाती वखत स्मृति हो कि मेने प्रत्याख्यान किया था । तो मुहसे निकाल उस वस्तुको एकान्त परिट्ठदे अगर स्मृति होनेपर भी मुहकी वस्तु खाजावे तो व्रत भंग होता है ।

(२) 'सहसात्कारे', प्रत्याख्यान किया है और स्मृति भी है परन्तु चालतों वर्षातकी बुंद मुहमें पडे, दही वीलों तो छांटो मुहमें पडे । शकर तोलतों रज मुहमें पडे, इसका आगार है । खबर पडनेसे उस्को पूर्वोक्त परठ्ठ देना ।

(३) 'महत्तरगार' ! अगर कोई महान् लाभका कारण है संघ समुदायका कार्य हो, बहुत जीवोंको लाभका कार्य हो, संघ आदिका कहना होनेसे (आगार ।)

(४) "सर्व समाधि निमत्त" आन्तकादि महान् रोग तीव्र-शुल सर्पादिका डंक इत्यादि मरणान्तिक कष्ट होने समय औषदादि ग्रहण करनेका आगार ।

(५) 'प्रच्छन्न काल' मेघके बादलोंसे, रजउर्ध्व गमनसे, ग्रहादि दिग्दाहासे सूर्य दिखाई न देता हो ? उस हालतमें अधुरां पच्चखाण पारा जाय तो 'आगार'

(६) 'दिग्मोहेन' ! दिशाका विपर्यास पण अर्थात् पूर्व दिशाको पश्चम दिशाका संकल्पकर कालकि पूर्ण खबर न पडनेसे प्रत्या० पारा हो तो 'आगार'

(७) 'साधु बचन' ! साधु उग्घाडा पौरषी भणानेके शब्द सुनके पौरषीका प्रत्या० पारे अर्थात् साधु छे घडी दीन आनेसे उग्घाडा पौरषी भणाते है। इसके ज्ञाते न होनेसे पौरषीका प्रत्याख्यान पारे। तों ' आगार '

(८) 'लेपालेप' जिस मुनिकों घृतका त्याग है भिक्षा देनेवाला दातारका हाथ, घृतसे लेपालेप था, हाथ पुच्छलने पर भी लेप रहे गया हो वह दातार भात पाणी देते समय लेपालेप लाग भी जावे तों भी व्रत भंग नहीं होते है ' आगार '

(९) 'गृहस्थ संसृष्टेन' शाक प्रमुख द्रव्य गृहस्थ लोक अपने लिये कुछ बगारादि दीया हो तथा रोटी आदि स्वल्प घृतसे चोपड़ी होय एसा संसृष्ट आहार लेना पडे तो " आगार "

(१०) 'उत्क्षिप्त विवेकेन' पुरी रोटी आदि द्रव्य पर कठिन विगई गुलादि रखा हो उस्कों आहार देते समय उठालीया हों परन्तु उस्का कुछ अंस उस भोजनमें रह भी गया हो एसा आहार लेना पडे " आगार "

(११) 'प्रतित्य मृक्षितेन' रोटी प्रमुक करते समय कीसी कारणसे तेल या घृतकि अंगली लगाई जाती है जिससे सुख पूर्वक बट सके एसा आहार भी लिया जाय तो " आगार "

(१२) 'पारिष्टापनिका कारेण' जो भिक्षा करतों आहार अधिक आया हो सर्व मुनियोंकों देनेपर भी ज्यादा हो वह एकासनादिके मुनि गुरु आज्ञासे भोगव भी ले तो इससे व्रत भंग नहीं होते हे कारण परठणेमें जीवोंकि अयत्ना होती हे।

(१३) 'सागारिका गारेण' मुनि गृहस्थोंके देखतों आहार नहीं करे एसा मुनि आचार है अगर आहार करते समय कोई गृहस्थ आवे तों तथा मकामका धणी कहे कि यहांसे उठ जावें तों अन्यत्र जाके भी भोजन करे तों व्रत भंग नहीं होवे।

(१४) आकुञ्चन प्रसारेण, एकासने प्रमुख बेठों पछे खाज खीणे छीक आये इस कारणसे संकुच प्रसारण हो तो भी व्रत भंग न हो।

(१४) गुरुभ्युत्स्थानेन, एकासने प्रमुख भोजन करनेकों बेठा हो उस समय गुरु तथा पहुणा मुनि आया हों तो उठके खडे होनेपर भी व्रत भंग न हो।

(१५) एकासना प्रमुख करनेवालोंको पाणीके छे आगार होते है। लेप कृत पाणी जेसे ओसामण, अमली, तथा दाक्षको पाणी।

(१६) अलेपकृत लेप रहीत जेसे कांजीका पाणी तथा छासकी आच्छ आदि।

(१७) अच्छेणवा=स्वच्छ निर्मल तीन उकालेका पाणी,

(१८) बहुलेप=चावलो प्रमुखका पाणी।

(१९) ससृष्ट=आटा प्रमुखसे खरडे हुवा पाणी। जिस्मे आटाका रज्जकरण सहित।

(२०) असंसृष्ट=रजकरण रहीत आटा प्रमुखका पाणी।

उपर बतलाये हुवे 'आगार' व्रतोंके संरक्षण अर्थ है इस्मे मुनि तथा सुश्रावक द्रव्य क्षेत्र काल भावके जानकार अपने ग्रहन किये हुवे व्रतोंको निर्मलता पूर्वक पालन करनेकी कोशिश करना चाहिये। कोनसे कोनसे प्रत्याख्यानमें कितने कितने आगार होते है।

अद्धा कालके दश पच्चखाण=यथा

(१) नमुकारसी, सूर्य उदय होनेसे ४८ मिन्ट जिस्मे आगार दोय नम्बर १–२

(१/२) नमुकारसी मुठसी=नमुकारसीसे अधिक जितना काल प्रत्याख्यान रहे अर्थात् प्रत्याख्यान पारनेके लिये मुठी न वाले वहांतक। इस्मे आगार च्यार होते है नम्बर १–२–३–४

(३) पौरषी साठ पौरषी=दिनका १/४ भागकी पौरषी १६/६ कि साठ पौरषी इस्मे आगार नम्बर १–२–३–४–५–६–७

(४) पुरमंड= दिन १/२ भाग इस्मे आगार पौरषीवत्

(५) एकासना=नमुकारसी, पौरषो, पुरीमंडसे होते है जिस्मे आगार सात पौरषीवत् विगइके प्रत्याख्यानमें आगार नम्बर ८–९–१०–११–१२ एकासनाके आगार नं० १३–१४–१५

(६) आयंबिल=नमुकारसी पौरषीसे होते है आगार ७ पौरषीवत ५ 'विगइवत १३ एकासनावत् कुल १५ आगार होते है।

(७) निर्विगई=छे विगई वर्जना आगार पूर्ववत्

(८) एकलठाणा=एकासनावत परन्तु जहांपर भोजन किये है वहांपर पाणी भी पीलाया दुसरी दफे आहार पाणी नहीं कर सके है।

(९) अभिग्रह प्रत्याख्यान=विविध प्रकारके अभिग्रह किये जाते है जिस्मे सागार हो तो १–२–३–४ नम्बरके और अनागार हो तों आगार नहीं होते है।

(१०) दिवस चरम प्रत्या० दिनके अन्तमें किये जाते है आगार ४ पूर्ववत्

(११) उपवास तिविहार चोविहार तथा दिशाविगासीके प्रत्याख्यानमें च्यार च्यार आगार होते है । सर्व प्रकारके प्रत्याख्यान करानेका पाठ पांच प्रतिक्रमणकि पुस्तकोंसे देखे ।

(प्र) हे भगवान् । देश उत्तर गुण प्रत्याख्यान कितने प्रकारके है ?

(उ) देश उत्तर गुण प्रत्या० सात प्रकारके है ।

(१) दिशाव्रत=उर्ध्व अधो पूर्व पश्चम उत्तर दक्षिण इस छेवों दिशाका परिमाण जीव जीव तकके करे । अमूक दिशामें इतने जोजनसे ज्यादा न जाना ।

(२) उपभोग, परिभोग, एकदफे काममें आवे या वारवार काममें आवे एसे द्रव्योंकि जावजीवके लिये मर्यादा करना तथा व्यापारादि कि भी मर्यादा करते हुवे १५ कर्मादानका परित्याग करना ।

(३) अनर्था दंड=निरर्थक आरत ध्यानका त्याग प्रमादके वस घृत तेल दुग्ध दहीं पाणी आदिको भाजन खुला रखनेका त्याग, हिंस्याकारी शस्त्र एकत्र करना नये तैयार कराना पुराणोंको सजवट करानेका त्याग पापकारी उपदेशका करनेका त्याग ।

(४) सामायिकव्रत–प्रतिदिन सामायिक करना ।

है उसमें विस्तारसे रखे हुवे दिशा तथा द्रव्यादिकों संक्षिप्त करना जिस्के १४ नियमकों धारण करना ।

(६) पौषधव्रत–आहार पौषद जिस्में भी (१) सर्व आहारका त्यागरूप तथा देश आहारके त्यागरूप (एकासना तथा तथा तिविहार व्रत) (२) शरीर विभूषाका त्यागरूप पौषद (३) ब्रह्मचार्यव्रत पालन करने रूप पौषद (४) व्यापारका त्याग रूप पौषध यह च्यारों प्रकारके पौषदसे पौषद करना ।

(७) अतिथी संविभाग=साधु साध्वियोंकों फासुक निर्दोष आहार पाणी खादम (मेवा सुखडी) सादिम (लवग इलायची) वस्त्र पात्र कंम्बल रजोहरण पाट फलग शय्या संस्तारक औषध भेषज्ज एवं १४ प्रकारसे दान देना । साधु अभाव स्वधर्मी भाइयोंकों भी भोजन कराना 'अपच्छमा' अन्त समय आलोचना पूर्वक पंडित मरण समाधि मरणके लिये सलेखना करना इत्यादि ।

पांच अणुव्रतकों मूल गुण व्रत कहते है इस ७ व्रतोंकों उत्तर गुण व्रत कहते है एवं १२ व्रतोंकों श्रावक धारण कर निरातिचार व्रत पालनेसे भगवानकि आज्ञाका आराधि हो सक्ते है । वह ज० तीन, उ० पन्दरा भव करते है ।

(प्र०) हे भगवान् । जीव क्या मूल गुण पच्चखांणी है ? उत्तर गुण पच्चखाणी है ? अपच्चखांणी है ?

(उ०) जीव तीनों प्रकारके है पूर्ववत् । कारण नारकादि २२ दंडकके जीव अपच्चखांणी है और तीर्यंच पांचेन्द्रिय तथा मनुष्य मूल गुण पच्चखांणी उत्तर गुण पच्चखांणी और अपच्चखांणी तीनो प्रकारके होते है ।

समुच्चय जीवोंकि अल्पा बहुत्व (१)

(१) स्तोक मूल गुण पच्चखांणी जीव है ;

(२) उत्तर गुण पच्चखांणी असंख्यात गुण ।

(३) अपच्चखांणी अनन्त गुण

तीर्यंच पांचेन्द्रिकि अल्पा० (२)

(१) स्तोक मूलगुण पच्चखांणी जीव है।

(२) उत्तर गुण पच्चखांणी असंख्यात गुण

(३) अपच्चखांणी असंख्यात गुण

मनुष्यकि अल्पा बहुत्व (३)

(१) स्तोक मूलगुण पच्चखांणी जीव है।

(२) उत्तर गुण पच्चखांणी संख्यात गुण

(३) अपच्चखांणी असंख्यात गुण ।

(प्र) हे भगवान् । जीव क्या सर्व मूलगुण पच्चखांणी है ? देश मूलगुण पच्चखांणी है ? अपच्चखांणी है ?

(उ) जीव तीनों प्रकारके है । कारण नरकादि २२ दंडक अपच्चखांणी है, तीर्थंच पांचेन्द्रिय देश मूलगुण और अपच्चखाणी है और मनुष्य तीनों प्रकारके है जिस्की अल्पा बहुत ।

समुच्चय जीवों कि अल्पा० (१)

(१) स्तोक सर्व मूल पच्चखांणी जीव है ।

(२) देश मूल गुण पच्चखाणी असंख्यात गुणे

(३) अपच्चखांणी अनन्त गुणा

तीर्थंच पांचन्द्रियकी अल्पा० (२)

(१) स्तोक देश मुलगुण पच्चखांणी जीव है ।

(२) अपच्चखांणी असंख्यात गुणा

मनुष्यकि अल्पा० (३)

(१) स्तोक सर्व मूलगुण पच्चखांणी जीव है।

(२) देश मूलगुण पच्चखांणी जीव असंख्यात गुण

(३) अपच्चखांणी जीव असंख्यात गुणा

जेसे सर्व मूल गुण पच्चखाणकि अल्पा बहुत्व कही है इसी माफीक सर्व उत्तर गुण देश उत्तर गुण पच्चखांणीकि भी अल्पा बहुत्व कहना।

(प्र०) हे भगवान्। जीवों संयति है ? असंयति है ? संयता संयति है ? नो संयति नो असंयति नो संयता असंयति है ?

(उ०) जीवों चारों प्रकारके होते है। कारण नरकादि २२ दंडक असंयति है तीर्यंच पांचेन्द्रिय असंयति, और संयता-संयति है तथा मनुष्य असंयति, संयति, संयतासंयति, तीन प्रकारके है और सिद्ध भगवान नो संयति नो असंयति, नो संयतासंयति इस तीन भांगोमे नही किन्तु नो संयति, नो असंयति, मो संयता-संयति है इसी वास्ते जीवों च्यारों प्रकारके है।

समुच्चय जीवोंकि अल्पा० (१)

(१) स्तोक संयति जीव।

(२) संयतासंयति असंख्यात गुणा

(३) नो संयति नो असंयति नो संयतासंयति अनन्तगुणा

(४) असंयति जीव अनन्त गुणा

तीर्यंच पांचेन्द्रियकि अल्पा० (२)

(१) स्तोक संयतासंयति जीव।

(२) असंयति जीव असंख्यात गुणा

मनुष्यमें अल्पाबत्हुव (३)

(१) स्तोक संयति जीवों

(२) संयता संयति जीव संख्यात गुणा

(३) असंयति जीव असंख्यात गुणा

जेसे संयतिके च्यार पदोंसे पृच्छाकर अल्पाबहुत्व कहि है इसी माफीक पच्चखांणीकि भी कहेना । अल्पाबहुत्व संयुक्त इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नम्बर १२

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ७ उद्देशो ६

(आयुष्य कर्म)

(प्र) हे भगवान् । कोइ जीव नरकमें उत्पन्न होनेवाला है वह जीव यहांपर रहा हुवा नरकका आयुष्य बान्धता है ? नरकमें उत्पन्न होते समय नरकका आयुष्य बान्धता है ? नरकमें उत्पन्न होनेके बाद नरकका आयुष्य बान्धता है ?

(उ) नरकमें उत्पन्न होनेवाला जीव यहां मनुष्य तथा तीर्यचमें रहा हुवा नरकका आयुष्य बान्ध लेता है (कारण आयुष्य बान्धीयों विनों जीव पहलेके शरीरको नहीं छोडता है) नरकमें उत्पन्न होनेके बाद आयुष्य नहीं बान्धता है । इसी माफीक यावत् वैमानिक तक चौवीस दंडक समझना । सर्व जीव परभवका आयुष्य बन्ध लेनेके बाद ही परभवमें गमन करते है ।

(प्र) हे भगवान् । यहां मनुष्य तीर्यंचमें रहा जीव नरकका आयुष्य बान्धा हुवा है वह जीव नरकका आयुष्य क्या यहांपर वेदता है ? नरकमें उत्पन्न समय वेदता है ? नरकमें उत्पन्न होनेके बाद नरकका आयुष्य वेदता है ?

(उ) यहांपर नरकका आयुष्य नहीं वेदता है कारण जहां-तक मनुष्य तीर्यंचके शरीरको नहीं छोडा है वहां तक तों यहांका ही आयुष्यकों वेदेगा और जब यहांके शरीरकों छोड देगा तब नरकमें उत्पन्न समय तथा नरकमें उत्पन्न होनेके बाद नरकका ही आयुष्यकों वेदेगा अर्थात् नरकमें जाते समय यहांका शरीर छोड एकाद समयकि विग्रह गति भी करेंगा तों नरकका ही आयु-ष्यको वेदेंगा । एवं २४ दंडक ।

(प्र) हे भगवान् । जो जीव नरकमें उत्पन्न होनेवाला है उसकों यहांपर महावेदना होती है ? नरकमें उत्पन्न समय महा-वेदना होती है ? नरकमें उत्पन्न होनेके बादमें महावेदना होती है ?

(उ) यहांपर तथा उत्पन्न होते समय स्यात् महावेदना स्यात् अल्प वेदना परन्तु उत्पन्न होनेके बाद तो एकान्त महावे-दना अर्थात् असाता वेदनाकों ही वेदते है कदाच साता । तीर्थं-करोंके कल्याणकादिमें स्वल्प समय साता होती है । और तेरहा (१३) दंडक देवतावोंके भी इसी माफीक परन्तु उत्पन्न होनेके बाद एकान्त साता वेदना वेदते है । कदाच देवांगना तथा रत्न अपह-रण समय असाताको भी वेदते है । औदारीक शरीर वालोंका दश

दंडक उत्पन्न होनेके बाद स्यात साता, स्यात् असाता वेदते है।

(प्र०] हे भगवान्! जीव परभवका आयुष्य बान्धते है वह क्या जानते हुवे बान्धते है या अजानते हुवे बान्धते है?

(उ) जीव पर भवका आयुष्य बान्धते है वह सब अज्ञानपणेसे ही बान्धते है कारण आयुष्य कर्म छटे गुणस्थान तक बान्धता है और छटे गुणस्थानके जीव छद्मस्थ होते है। छद्मस्थोंका एसा उपयोग नहीं होता है कि इस टैममें हमारा आयुष्य बन्ध राहा है इस वास्ते सर्व जीव आयुष्य बान्धते है वह विने जाने ही बांधते है। एवं २४ दंडक यावत् वैमानीक देव।

(प्र०) हे भगवान्। जीव कर्कश वेदना कीस कारणसे बान्धते है?

(उ०) प्रणातिपात यावत् मिथ्यादर्शन शल्य एवं अठारा पाप स्थान सेवन करनेसे जीव कर्कश वेदनी कर्म बान्धते है। वह वेदना उदय विपाक रस देती है तब स्कन्धकाचार्यके शिष्योंको घाणीमें पीले गये स्कन्धक मुनिकि खाल उत्तारी गइ ऐसी असह्य वेदना होती है एवं यावत् २४ दंडक समझना।

(प्र०) हे भगवान्! जीव अकर्कश वेदना केसे बांधते है?

(उ०) अठारा पाप स्थानसे निवृति होनेसे अकर्कश वेदना बांधते है जिसका उदय विपाक रस उदयमें होते है तब मरूदेवीके माफीक परम सात वेदनोंको भोगवते हुवे काल निर्गमन करे एवं अकर्कश वेदना एक मनुष्यके ही बांधती है शेष २३ दंडकोमें नहीं।

(प्र०) जीव असाता वेदनि कर्म किस कारणसे बांधते है ?

(उ) सर्व प्राणभूत जीव सत्वकों दुःख देवे तकलीफ देवे झूरापा करावे उपद्रव करे विघ्न करावे यावत् आशूंपात करानेसे जीव असाता वेदनिय कर्म बांधता है एवं यावत् २४ दंडक समझना ।

(प्र) जीव साता वेदनिय कर्म केसे बांधता है ?

(उ) प्राणभूत जीव सत्व बहुतसे प्राणभूत जीव सत्वकि अनुकम्पा करे । दुःख तकलीफ न दे। अशुपात न करावे यावत् साता देनेसे साता वेदनिय कर्म बांधते है । यावत् २४ दंडक समझना इति ।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

थोकडा नम्बर १४

सूत्र श्री भगवतीजी शतक ७ उद्देशा ७

(काम भोग)

जीव अनादि कालसे इस आरापार संसार समुद्रमें परिभ्रमण करता है इसका मौख्य कारण इन्द्रियोंके वसीभूत हो स्वसत्ताकों भूल जाता है पर वस्तुकों अपनिकर उस्मे ही रमणता करता है वास्ते मोक्षार्थी भव्यात्मावोंको प्रथम इस इन्द्रियोंकों ओलखनी चाहिये । पांचेन्द्रियोंमें दोय इन्द्रियों तों कामी है जो शब्द और रूपके पुद्गलोंपर ही चैतन्यकों आकर्ष कर रही है और तीन इन्द्रियों भोगी है वह गन्ध अस्वादन और स्पर्शकों भोगमें लेके चैतन्यकों

वेमान बना देती है वास्ते पाठकोंको इस संबंधपर पूर्ण ध्यान देना चाहिये।

(१) कामी इन्द्रियों=श्रोतेन्द्रिय, चक्षु इन्द्रिय !

(२) भोगी इन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय ।

(प्र) हे भगवान्! काम है वह क्या रूपी है ? अरूपी है?

(उ) काम रूपी है कारण शब्दके और रूपके पुद्गलोंको काम कहते है वह दोनों प्रकारके पुद्गल रूपी है।

(प्र) काम हे सो क्या सचित्त है ? अचित्त है ?

[उ] काम, सचित भी है और अचित्त भी है। कारण सचित्त जीव सहित शब्द होना अचित्त जीव रहित शब्द। जीव सहित रूप [स्त्रीयोंका] जीव रहित रूप अनेक प्रकारके चित्रादि इन दोनोंकि विषय श्रोतेन्द्रिय, चक्षु इन्द्रिय ग्रहन करती है वास्ते सचित्त अचित्त दोनों प्रकारके काम होते है।

(प्र) काम है सो क्या जीव है ? अजीव है।

(उ) काम जीव भी है अजीव भी। भावना पूर्ववत् अर्थात् श्रोतेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रियके काममें आनेवाले पदार्थ जीव अजीव दोनों प्रकारके होते है।

(प्र) काम जीवोंके होते है या अजीवोंके होते है ?

(उ) काम जीवोंके होते है किंतु अजीवोंके नहीं होते है। कारण श्रोतेन्द्रिय चक्षु इन्द्रिय होती है वह जीवके ही होती है न कि अजीवके।

(प्र) हे भगवान्! काम कितने प्रकारके है ?

(उ) काम दो प्रकारके है (१) शब्द (२) रूप

(प्र) हे भगवान् ! भोग क्या रूपी है ? अरूपी है ?

(उ) भोग रूपी है किन्तु अरूपी नही है। एवं सचित्त अचित्त है जीव अजीव दोन प्रकारके है।

(प्र) भोग जीवके होते है ? अजीवके होते है ?

(उ) भोग जीवोंके होते है परन्तु अजीवोंके नहीं होते है कारण घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय होती है वह जीवके ही होती है न कि अजीवके।

(प्र) भोग कितने प्रकारके है ?

(उ) भोग तीन प्रकारके है गन्ध रस स्पर्श

(प्र) हे भगवान् काम और भोग कितने प्रकारके है ?

(उ) काम भोग पांच प्रकारके है शब्द रूप गन्ध रस स्पर्श

(प्र) हे भगवान्। जीव कामी है या भोगी है ?

(उ) जीव कामी भोगी दोनों प्रकारका है। कारण। श्रोतेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय अपेक्षा जीव कामी है और घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय अपेक्षा जीव भोगी है। एवं नरकादि १६ दंडक कामी भोगी दोनों प्रकारके है। चोरिन्द्रिय दंडकमें चक्षुइन्द्रिय पेक्षा कामी शेष तीन इन्द्रिय अपेक्षा भोगी है शेष पांच स्थावर बे इन्द्रिय तेन्द्रिय एवं ७ दंडक कामी नहीं है परन्तु भोगी है कारण तेन्द्रिय तीनों इन्द्रियों अपेक्षा बेन्द्रिय दो इन्द्रिय और एकेन्द्रिय एकस्पर्शेन्द्रिय पेक्षा भोगी है।

अल्पा बहुत्व

(१) स्तोक जीव कामी

(२) नो कामी नो भोगी जीव अनन्त गुण कारण भव केवली और सिद्ध केवली यह नो कामी नो भोगी है ।

(३) भोगी जीव अनन्त गुणा इस्में एकेन्द्रिय जीव सेमल है।

सेवं भंते सेवं भंते तमेव सच्चम् ।

समाप्त

श्री फलोधी नगरमें मुनिश्री ज्ञानसुन्दरजी महाराजका चतुर्मासामें सुपनोंकी आवादानीका हिसाब।

(१) संवत् १९७७का

ज

२०३९।।।=) जमा सुपनोंकि आवादानी

६९९।) पहला पर्युषणमें

१२०५।) दूसरे पर्युषणमें

१७५) भगवतीसूत्रकि पूजाका १२५)के अन्दरसे

४।= शीघ्रबोध भाग ८ वां कि वचन

२०३९।।।=)

उ

२०३९।।।=) खरच पुस्तकोंकि छपाईका

१७७।।) नन्दीसूत्र १०००

१०३।।।) अमे साधु शामाटे १०००

३५९।) सात पुष्पोंका गुच्छा १०००

९१।।।) शीघ्रबोध भाग १० वां १०००

२७३।।) ,, ,, ११ वां १०००

२७३।।) ,, ,, १२ वां १०००

५११) ,, ,, १३-१४वां १०००

२३१।) द्रव्यानुयोग प्र० प्र १५००

१३।=) शीघ्रबोध भाग ९ वां की लागत

२०३९।।।=)

(२) संवत् १९७८का

ज

२०७९) जमा सुपनोंकि आवादानी

उ

२०७९) खरच पुस्तकोंकि छपाई

१५७५) ज्ञानविलास नं० १००० जिस्मे पंचवीस पुस्तकोंका संग्रह है।

१००) शीघ्रबोध भाग ११-१४-२१ वां

२०७८)

श्री संघके सेवक-

जोरावरमल वैद्-फलोधी।